जांभाणी साहित्य ज्ञान परीक्षा हेतु संस्तुत पुस्तक

बिश्नोई पंथ और साहित्य

डॉ. बनवारी लाल सहू

प्रकाशकः

जांभाणी साहित्य अकादमी

बिश्नोई पंथ और साहित्य

संकलनकर्त्ता/लेखक : डॉ. बनवारी लाल सहू

© जांभाणी साहित्य अकादमी

तृतीय संस्करण : 2024

प्रकाशक : जांभाणी साहित्य अकादमी
सैक्टर-1, E-134, जयनारायण व्यास कॉलोनी
बीकानेर, राजस्थान
E-mail : jsakademi@gmail.com
Website : www.jambhani.com

ISBN : 978-93-83415-40-3

मूल्य : तीस रूपये

मुद्रक : तिलोक प्रिंटिंग प्रेस, मोहता चौक, बीकानेर
मो.-9314962474/75

Bishnoi Panth Aur sahitya by
Dr. B.L. Sahu

अनुक्रमणिका

1.	गुरु जाम्भोजी की समकालीन परिस्थितियां	7
2.	गुरु जाम्भोजी का अवतार और वंश	10
3.	बाल्यकाल	12
4.	पशुचारण काल	13
5.	पंथ की स्थापना और उनतीस नियम (व्याख्या सहित)	15
6.	उपदेश काल	28
7.	गुरु जाम्भोजी की यात्राएँ	36
8.	निर्वाण	37
9.	निज मन्दिर का निर्माण	38
10.	सबदवाणी	39
11.	बिश्नोई पंथ के प्रमुख धाम एवं साथरी	40
12.	बिश्नोई पंथ के भंडारे	46
13.	छः राजवियों की विगत	47
14.	चौईसां को लूरो	48
15.	पुण्य	48
16.	जम्मा	49

17.	हवन	50
18.	पाहळ	50
19.	बिश्नोई पंथ में अभिवादन प्रणाली	51
20.	जम्भेश्वरीय संवत्	51
21.	संस्कार, व्रत और त्यौहार	52
22.	वृक्ष रक्षा के लिये दिये गये बलिदान	56
23.	वन्य जीवों की रक्षा के लिये दिये गये बलिदान	60
24.	प्रमुख मंत्र	63
25.	बिश्नोई पंथ का साहित्य	69
26.	हिंडोलणो	96
27.	जाम्भैजी रै भक्तां री भक्तमाळ	97
28.	बिश्नोई-गोत्र	100

दो शब्द

बिश्नोई पंथ के संस्थापक गुरु जाम्भोजी का व्यक्तित्व बहुआयामी रहा है। गुरु जाम्भोजी साक्षात् विष्णु थे। वे भक्त प्रहलाद को दिये हुए वचन के अनुसार बारह करोड़ जीवों के उद्धार हेतु इस मरुभूमि में अवतरित हुए थे। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु उन्होंने अपने सबदों के द्वारा लोगों को 'जीया नै जुगति अर् मूवां नै मुगति' का सन्देश दिया था। उस समय इस मरुधरा के अशिक्षित एवं भोले-भाले लोग तंत्र-मंत्र, मूर्ति पूजा, आडम्बरों, पाखंडों तथा मदिरा, अमल-तम्बाकू के नशे में जकड़े हुए थे। गुरु जाम्भोजी ने लोगों के कल्याण के लिये बिश्नोई पंथ की स्थापना की और उन्हें उनतीस नियमों की आचार संहिता दी। उन्होंने लोगों को युक्ति पूर्वक जीवन जीने एवं मोक्ष प्राप्ति का सरल से सरल रास्ता बताया था। युक्ति पूर्वक एवं सफल जीवन के लिये गुरु जाम्भोजी ने उत्तम कर्म पर सर्वाधिक बल दिया था और मोक्ष प्राप्ति के लिये विष्णु जप पर। इन दोनों साधनों का प्रयोग करके कोई भी व्यक्ति अपने जीवन को सफल बना सकता है। इसलिये बहुत बड़ी संख्या में लोग गुरु जाम्भोजी के उपदेशों को मानकर, उनके अनुयायी बनने लग गये थे। धर्म संस्थापक के साथ-साथ वे समाज सुधारक भी थे। उन्होंने एक ओर हिन्दुओं में प्रचलित मूर्ति पूजा का विरोध किया तो दूसरी ओर मुसलमानों द्वारा जोर-जोर से अजान लगाने का खंडन किया। गुरु जाम्भोजी ने समाज में व्याप्त चोरी, निंदा, झूठ, पाखंड, ईर्ष्या, द्वेष, हिंसा एवं नशा आदि प्रवृत्तियों को समाप्त करके, सत्य, ईमानदारी, अहिंसा, न्याय, परोपकार, दया आदि गुणों को स्थापित किया। इन्हीं गुणों के कारण बिश्नोई पंथ का एक विशिष्ट स्वरूप स्थापित हो गया है। वृक्ष-रक्षा एवं जीव दया की भावना से प्रेरित होकर बिश्नोई पंथ के लोगों ने समय-समय पर अपने जीवन का बलिदान किया है और विश्व को पर्यावरण संरक्षण का संदेश दिया है। वृक्षों की रक्षा के लिये तथा वन्य जीवों की रक्षा के लिये जो बलिदान बिश्नोइयों ने किये हैं, वैसे उदाहरण विश्व में मिलने असम्भव हैं।

गुरु जाम्भोजी के व्यक्तित्व की विभिन्न विशेषताएं, उनके द्वारा दिये गये उपदेश, उनकी विचारधारा और उनसे सम्बन्धित विभिन्न धाम आदि सभी की जानकारी युवा

पीढ़ी को होनी आवश्यक है। मेरा ऐसा विश्वास है कि आज की युवा पीढ़ी गुरु जाम्भोजी की विचारधारा को अच्छी तरह से समझकर ही आधुनिक युग की जटिल समस्याओं का समाधान कर सकती है और अपने भौतिक तथा आध्यात्मिक जीवन को सफल बना सकती है। बच्चे एवं आज के युवक इस पुस्तक को पढ़कर गुरु जाम्भोजी के व्यक्तित्व एवं बिश्नोई पंथ के स्वरूप, उसकी संस्कृति, साहित्य व उसके इतिहास आदि के बारे में प्रारम्भिक जानकारी प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं और उनके मन में इस विषय के सम्बन्ध में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करने की जिज्ञासा उत्पन्न हो जाती है तो मैं अपने परिश्रम को पूर्ण सार्थक समझूंगा।

यह पुस्तक बच्चों के लिये आयोजित की जाने वाली 'जांभाणी साहित्य ज्ञान परीक्षा' को ध्यान में रखकर लिखी गई है इसलिये इसमें बिश्नोई पंथ एवं जाम्भाणी साहित्य से सम्बन्धित जानकारियां अत्यन्त ही संक्षेप में दी गई है जिससे बहुत सी बातें छूट भी गई होगी। बहुत बड़े विषय को जब हम अत्यन्त संक्षेप में प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं तो भूल, भ्रान्तियां व त्रुटियां होने की पूरी संभावनाएं रहती हैं। इस पुस्तक में भी यदि कोई भूल, भ्रान्तियां व त्रुटियां रही है तो उसके लिये मैं क्षमा प्रार्थी हूं तथा प्रबुद्ध पाठकों से निवेदन है कि यदि उनके संज्ञान में कोई त्रुटि आती है तो सूचित करने की कृपा करें ताकि आगामी संस्करणों में उन्हें दूर किया जा सके। पुस्तक प्रकाशन के लिये मैं जाम्भाणी साहित्य अकादमी का हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

डॉ बनवारी लाल सहू
मो. 9414875029

1/73, प्रोफेसर कॉलोनी,
हनुमानगढ़ टाउन (राज.)
ई-मेल: blsahu5029@gmail.com

1. गुरु जाभोजी की समकालीन परिस्थितियां

प्रत्येक युग की परिस्थितियां व्यक्ति एवं समाज को प्रभावित करती हैं। इसलिये युग-विशेष के समाज तथा उस युग के महापुरुषों की विचारधारा को समझने के लिये उस युग की परिस्थितियों को जानना आवश्यक है। इस दृष्टि से गुरु जाम्भोजी की विचारधारा तथा उनके द्वारा स्थापित बिश्नोई पंथ का स्वरूप, प्रवृत्तियां, आचार-विचार तथा संस्कृति आदि को समझने के लिये तत्कालीन परिस्थितियों को समझना आवश्यक है।

★ राजनीतिक परिस्थितियाँ

बिश्नोई पंथ के संस्थापक गुरु जाम्भोजी के अवतार से पूर्व देश की राजनीतिक परिस्थिति बहुत खराब थी। केन्द्र में कोई भी राजा शक्तिशाली नहीं था। शक्तिशाली राजा के अभाव में देश छोटे-छोटे राज्यों में बंटा हुआ था। इन राज्यों के राजा आपस में लड़ते रहते थे। उस समय कोई भी राजा अपनी शक्ति के आधार पर ही अपने राज्य की रक्षा कर सकता था। इसलिये सभी राजा अपनी-अपनी शक्ति बढ़ाने में लगे हुए थे। इसी शक्ति के द्वारा वे दूसरे राजा के राज्य को छीनकर अपने राज्य को बड़ा बनाने के प्रयास में लगे हुए थे। कभी-कभी एक राजा दूसरे राजा से सहायता लेकर अपने पड़ोसी राजा को हराकर, उसके राज्य पर अधिकार कर लेता था। उस समय (सम्वत् 1546-1574) सिकन्दर लोदी दिल्ली के राजा थे। सिकन्दर लोदी बहुत कट्टर एवं अत्याचारी राजा थे। वे निर्दोष लोगों का वध करवाते रहते थे। बाद में गुरु जाम्भोजी ने सिकन्दर लोदी को उपदेश देकर उन्हें जीवन का सही रास्ता बताया था। गुरु जाम्भोजी ने सिकन्दर लोदी से जीव-हत्या भी बंद करवायी थी।

गुरु जाम्भोजी का भ्रमण क्षेत्र बहुत विस्तृत था। वे देश के विभिन्न भागों एवं देश से बाहर भी लोगों को युक्तिपूर्वक जीवन जीने और मोक्ष प्राप्ति का उपदेश देते रहे हैं, पर उनका प्रमुख कार्य-क्षेत्र मरुप्रदेश ही था। इस प्रदेश की तत्कालीन स्थिति ने गुरु जाम्भोजी, जांभाणी साहित्य एवं साहित्यकारों को प्रभावित किया था। उस समय वर्तमान राजस्थान भी छोटे-छोटे राज्यों में बंटा हुआ था और अनेक नये राज्यों की स्थापना हो रही थी। यहां के राजाओं में एकता का अभाव था। इसलिये वे आपस में युद्ध करते रहते थे। युद्ध छोटी-छोटी बातों के लिये हो जाते थे। आपसी बैर एवं कभी पुराना बदला लेने के लिये भी युद्ध हो जाते थे। मातृभूमि की रक्षा, वचन पालन और धर्म रक्षा के लिये भी युद्ध होते रहते थे। शरणागत की रक्षा और राज्य विस्तार के लिये युद्ध होना आम बात थी। यहां के राजपूतों में चाहे आपसी फूट रही हो पर उनमें वीरता की कमी नहीं थी। इसी वीरता के कारण यहां युद्ध का वातावरण था। इन युद्धों के द्वारा यहाँ के राजा एक-दूसरे को कमजोर करते रहते थे। इतना कुछ होने पर भी यहां के क्षत्रिय अपनी मातृभूमि की रक्षा, प्राण-न्यौछावर करके भी करते रहे हैं।

★ सामाजिक परिस्थितियाँ

पन्द्रहवीं शताब्दी के उतरार्द्ध में देश की सामाजिक परिस्थिति भी बहुत बिगड़ी हुई थी। मुसलमान अपने धर्म के प्रति बहुत कट्टर बने हुए थे। अपनी कट्टरता के कारण वे अनेक प्रकार के अत्याचार कर रहे थे। वे स्थान-स्थान पर हिन्दुओं के मन्दिरों और मूर्तियों को तोड़ रहे थे। मुसलमानों के इस व्यवहार से हिन्दू डरे हुए थे। भय के इस वातावरण में उनसे जबरदस्ती धर्म परिवर्तन कराया जाता था और उनसे 'जजिया' कर भी वसूल किया जाता था। हिन्दुओं में संयुक्त परिवार प्रथा प्रचलित थी। संयुक्त परिवार प्रथा सामाजिक जीवन का प्रमुख आधार बनी हुई थी। छुआछूत की भावना बहुत प्रबल थी। समाज में स्त्रियों का मान-सम्मान कम था। पर्दा-प्रथा के कारण स्त्रियों का कार्य-क्षेत्र घर तक ही सीमित रह गया था। हिन्दू और मुसलमानों के साथ-साथ रहने से उनमें कुछ एकता स्थापित हो रही थी। इस काल के कुछ संत, हिन्दू-मुसलमानों में एकता स्थापित करने के प्रयास में लगे हुए थे।

उस समय मरुप्रदेश भी सामाजिक दृष्टि से बहुत पिछड़ा हुआ था। यहां शिक्षा का पूर्णतः अभाव था। समाज विभिन्न जातियों एवं उपजातियों में बंटा हुआ था। इन जातियों में ऊंच-नीच की भावना बहुत प्रबल थी। लोगों के सामने कोई उच्च आदर्श नहीं था। झूठ बोलना और एक-दूसरे के साथ छल-कपट करना आम बात थी। लोग निराशा में डूबे हुऐ थे और उनमें उत्साह का अभाव था। लोगों का खान-पान पवित्र नहीं था। विलासी वातावरण के कारण मांस-मदिरा, अफीम, भांग आदि का प्रचलन जोरों पर था। इसी से समाज में बड़े पैमाने पर जीव-हत्या होती थी। ईर्ष्या-द्वेष एवं वाद-विवाद के कारण समाज में झगड़े होते रहते थे। जाति का आधार कर्म न होकर जन्म था। इसी कारण उच्च जाति के लोग अत्याचार एवं नीच कर्म करते हुए डरते नहीं थे। अनैतिकता के कारण लोगों की कथनी और करनी में अन्तर था। समाज में बाल-विवाह और बहु-विवाह आदि की कुरीतियां फैली हुई थी। विभिन्न कुरीतियों के कारण समाज में स्त्रियों की स्थिति अच्छी नहीं थी। समाज में स्त्री-शिक्षा का अभाव था। लोग शकुन एवं ज्योतिष पर विश्वास करते थे। शकुन एवं अपशकुन पर विचार करके ही लोग अच्छे कार्य को प्रारम्भ करते थे।

★ धार्मिक परिस्थितियाँ

पन्द्रहवीं शताब्दी में देश की धार्मिक स्थिति बड़ी शोचनीय थी। इस काल में धार्मिक सम्प्रदायों और उप सम्प्रदायों की संख्या लगातार बढ़ रही थी। धर्म के नाम पर अनेक आडम्बर एवं पाखंड फैले हुए थे। धर्म के रक्षक कहे जाने वाले लोग भोली-भाली एवं अशिक्षित जनता को आडम्बरों एवं पाखण्डों से गुमराह कर रहे थे। इन आडम्बरों एवं पाखण्डों से समाज में कलह तथा अशान्ति का वातावरण बना हुआ था। ऐसे वातावरण में धर्म का वास्तविक रूप नष्ट हो रहा था। उस समय मरुप्रदेश में मुख्य रूप से हिन्दू, मुसलमान, नाथ एवं जैन धर्म प्रचलित थे। गुरु जाम्भोजी ने इन सभी धर्मों के लोगों को उपदेश दिया था और उन्हें धर्म के सच्चे रूप को अपनाने की शिक्षा दी थी।

धर्म का सच्चा रूप लुप्त हो गया था। जादू-टोने, जंत्र-मंत्र और भूत-प्रेत की पूजा को ही लोग धर्म समझते थे।अनेक प्रकार के देवी-देवताओं की पूजा की जाती थी। विलासिता के कारण देवी-देवताओं को मांस-मदिरा की भेंट चढ़ाई जाती थी। पशु-बलि के द्वारा देवताओं को खुश किया जाता था, जिससे समाज में जीव-हिंसा अबाध रूप से हो रही थी। चमत्कार प्रदर्शन, पाखंड एवं आडम्बरों का बोलबाला था। पुजारी, मौलवी, काजी, पंडित एवं योगी आदि भी विलासिता एवं पाखंडों से जकड़े हुए थे और भोली-भाली जनता का धार्मिक शोषण कर रहे थे। कनफटे जोगी एवं पाखंडी साधुओं का समाज में जाल फैला हुआ था। समाज में सच्चे साधु बहुत कम थे। लोगों को भौतिक सुख की अधिक चिंता थी और भौतिक सुख को प्राप्त करने के ही प्रयास किये जाते थे। मोक्ष-प्राप्ति की चिन्ता किसी को नहीं थी।

हिन्दुओं के विभिन्न देवी-देवताओं के अनेक मन्दिर बने हुऐ थे, जिनमें मूर्तिपूजा का प्रचलन जोरों पर था। मुसलमान खुदा के नाम पर जीव-हत्या करते थे। प्रमुख देवी-देवताओं के साथ-साथ कुछ लोक देवी-देवताओं की भी पूजा की जाती थी। हिन्दू लोग विभिन्न तीर्थों पर स्नान करने जाते थे और मुसलमान हज के लिये काबा जाते थे। उस समय मरुप्रदेश में नाथ पंथ का भी बहुत प्रभाव था। नाथ पंथ अनेक शाखाओं में बंटा हुआ था, जिनमें अनेक आडम्बर प्रचलित थे। बिश्नोई पंथ की स्थापना के बाद गुरु जाम्भोजी ने अनेक नाथों को उपदेश दिया था। सबदवाणी के इक्कीस सबद नाथों के उपदेशों से ही सम्बन्धित हैं। गुरु जाम्भोजी ने लक्ष्मणनाथ, लोहा-पांगल एवं बालानाथ आदि अनेक नाथों को उपदेश देकर बिश्नोई पंथ में सम्मिलित किया था।

★ आर्थिक परिस्थितियाँ

गुरु जाम्भोजी के समय में मरुप्रदेश की आर्थिक स्थिति भी अच्छी नहीं थी। इस प्रदेश के लोगों का मुख्य काम खेती करना और पशु-पालन रहा है। ये दोनों ही काम वर्षा पर निर्भर थे। वर्षा के अभाव में यहां निरन्तर अकाल पड़ते रहे हैं। मरुप्रदेश में निरन्तर अकाल पड़ने के कारण ही यह दोहा प्रसिद्ध हो गया-

पग पूगल धड़ कोटड़ै, बाहू बायड़मेर।
फिरतो-घिरतो बीकापुर, ठावो जैसलमेर।।

अकाल पड़ने पर गाँव के गाँव खाली हो जाते थे। लोग अपने बाल-बच्चों और पशुओं को लेकर दूसरे स्थान पर चले जाते थे तथा वर्षा होने पर अपने घरों को लौटते थे। इसी को गोवळवास कहते हैं। इस तरह मरुप्रदेश में गोवळवास की बहुत पुरानी परम्परा रही है। अकाल के समय लोगों को गोवळवास करना ही पड़ता था। अकाल के कारण यहां खेती भी नहीं होती थी और पशु-धन की भी हानि हो जाती थी। इसी कारण लोग निरन्तर आर्थिक दृष्टि से कमजोर होते रहे हैं। अत्यधिक गरीबी के कारण यहाँ लोग मोटा कपड़ा पहनते थे तथा मोटा अनाज खाते थे। सर्दी से बचने के लिये लोग 'भाखला' ओढ़ते

थे और कभी-कभी तूम्बे के बीजों की बनी रोटी भी खाते थे। उस समय समाज में व्यापारी वर्ग भी था, जो विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का व्यापार करता था। समाज में छोटे-बड़े अनेक व्यापारी थे। बड़े व्यापारियों की आर्थिक स्थिति अच्छी थी। इसी कारण बड़े व्यापारियों का समाज में विशेष सम्मान था। उनकी सच्चाई और ईमानदारी पर लोगों को पूर्ण विश्वास था। सभी प्रकार के व्यापारियों में हीरे के व्यापारी को श्रेष्ठ माना जाता था। समाज में नकली माल बेचने वाले तथा खोटा व्यापार करने वाले व्यापारी भी थे। छोटे व्यापारी अलग-अलग स्थानों पर वस्तुएं खरीदते और बेचते थे। जिस व्यापारी की गांठ में रुपया नहीं होता था, उसकी समाज में कोई इज्जत नहीं थी। निरन्तर अकाल पड़ने के कारण किसानों से सम्बन्धित बढ़ई, दर्जी, लुहार, तेली एवं नाई आदि की भी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी।

2. गुरु जाम्भोजी का अवतार और वंश

बिश्नोई पंथ के संस्थापक गुरु जाम्भोजी का अवतार सम्वत् 1508 में भादो वदि अष्टमी, वार सोमवार को पीपासर गांव में हुआ था। पीपासर नागौर से लगभग 45 कि.मी. उत्तर में स्थित है। गुरु जाम्भोजी के पिता का नाम लोहट जी एवं माता का नाम हांसा देवी था। हांसा देवी का एक दूसरा नाम केसर देवी भी प्रचलित रहा है। हांसा देवी छापर निवासी मोहकमसिंह भाटी की बेटी थी।

इतिहास प्रसिद्ध राजा विक्रमादित्य की चालीसवीं पीढ़ी में रोलोजी पंवार हुए थे। उस समय मरुप्रदेश अनेक छोटे-छोटे राज्यों एवं ठिकानों में बंटा हुआ था। इन राज्यों एवं ठिकानों पर अलग अलग लोगों का अधिकार था। रोलोजी पंवार वंशी राजपूत थे और उनका पीपासर पर अधिकार था। रोलोजी की पत्नी का नाम राजाधि देवी था। रोलोजी पंवार के दो पुत्र एवं एक पुत्री थी। उनके बड़े पुत्र का नाम लोहट जी एवं छोटे पुत्र का नाम पूल्होजी था। उनकी पुत्री का नाम तांतू था।

पूल्होजी- पूल्होजी, रोलोजी पंवार के छोटे पुत्र थे और लोहट जी के छोटे भाई थे। बड़े होने पर पूल्होजी ने लाडणूं में रहना प्रारम्भ कर दिया था और बाद में वे वहीं के निवासी हो गये थे। सम्वत् 1507 में पीपासर में भयंकर अकाल पड़ा था। अकाल में गांव के तथा अपने पशुधन को बचाने के लिये लोहटजी अपने आदमियों के साथ द्रोणपुर के लिये रवाना हुए। रास्ते में वे एक रात्रि को लाडणूं में रुके थे। तब लाडणू में पूल्होजी ने उनका खूब स्वागत किया था और सामूहिक दावत भी हुई थी। सम्वत् 1542 में जब गुरु जाम्भोजी ने बिश्नोई पंथ की स्थापना की तो इसमें सर्वप्रथम पूल्होजी ही दीक्षित हुए थे। दीक्षित होने से पूर्व उन्होंने गुरु जाम्भोजी से परचा दिखाने की प्रार्थना की थी और कहा था कि वे उन्हें स्वर्ग के दर्शन करवाये। इस पर गुरु जाम्भोजी ने श्वास रूपी विमान के द्वारा उन्हें सशरीर स्वर्ग के दर्शन करवाये थे। इसके बाद पूल्होजी को मृत्युलोक से बहुत अलगाव हो गया था। बाद में गुरु जाम्भोजी के स्वर्गवास

की बात सुनकर उन्होंने रणीसर में अपनी इच्छा से अपने प्राण त्याग दिये थे। रणीसर में पूल्होजी की साथरी बनी हुई है, वहां अब एक मन्दिर का निर्माण भी हो गया है।

तांतू- रोलोजी पंवार के एक पुत्री थी, जिसका नाम तांतू था। वह लोहट जी की बहिन एवं गुरु जाम्भोजी की भूआ थी। तांतू का ससुराल फलौदी (जोधपुर) के पास ननेऊ गाँव में था। एक बार पालने में लेटे हुए बालक गुरु जाम्भोजी को तांतू उठाने में सफल नहीं हुई थी। बाद में उसी समय दासी ने बालक को उठा लिया था। गुरु जाम्भोजी ने बिश्नोई पंथ में स्वीकृत 'नवण मंत्र' अपनी भूआ तांतू के प्रति कहा था। तांतू ने गुरु जाम्भोजी से मुक्ति का सबसे सरल एवं संक्षिप्त मार्ग पूछा था, जिसके जवाब में गुरु जाम्भोजी ने तांतू को विसन विसन तूं भण रे प्राणी मंत्र बताया था। तांतू ने गुरु जाम्भोजी के बैकुण्ठवास के बाद अपना शरीर त्याग दिया था। '27 लुगाइयों की पुन्ह' तथा हीरानन्द के 'हिंडोलणो' में तांतू का नाम सम्मिलित है।

लोहटजी- लोहट जी पंवार वंशी राजपूत थे। रोलोजी के बाद लोहट जी का ही पीपासर पर अधिकार था। वे अच्छे किसान एवं पशुपालक थे। वे धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे तथा ईश्वर में पूर्ण विश्वास रखते थे। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण वे समाज में अतिप्रसिद्ध एवं सम्मानित व्यक्ति थे। लोहटजी गांव के दुख-दर्द को अपना दुख समझते थे और हर समय लोगों की सहायता के लिये तैयार रहते थे। अकाल पड़ने पर भी वे लोगों की हर प्रकार से सहायता किया करते थे। सम्वत् 1507 में जब पीपासर में भयंकर अकाल पड़ा तो वे गांव के पशुधन को बचाने के लिये लोगों को अपने साथ लेकर द्रोणपुर पहुंचे थे। इस समय तक लोहटजी वृद्ध हो गये थे और उनके कोई सन्तान नहीं थी। सन्तान के अभाव में वे बहुत दुखी रहते थे। यह दुख उनके चेहरे पर दिखाई देता था। द्रोणपुर में रहते समय जोधा जाट ने उन्हें निपूता एवं उनके दर्शनों को अपशकुनी कह दिया था। अपने लिये इस तरह की बातें सुनकर उन्हें बहुत दुख हुआ। वे संसार से विरक्त हो गये और जंगल में जाकर पुत्र प्राप्ति के लिये तपस्या करने लग गये। तपस्या करते समय उन्होंने अन्न-जल भी त्याग दिया था। उनकी इसी कठोर तपस्या से प्रभावित होकर भगवान ने उन्हें दर्शन दिये और बारह करोड़ जीवों के उद्धार हेतु उनके घर पुत्र रूप में अवतार लेने का आशीर्वाद दिया। उसी दिन भगवान ने योगी रूप में पीपासर में हांसा देवी को पुत्रवती होने का वरदान दिया था। भगवान के इसी आशीर्वाद से, ठीक समय पर अवधूत रूपी भगवान ने गुरु जाम्भोजी के रूप में पीपासर में अवतार लिया। भगवान के लोहट जी के घर पुत्र रूप में अवतार लेने से ही लोहट जी के दु:ख का अन्त हुआ। पुत्र-प्राप्ति से उनके आनंद की कोई सीमा नहीं रही। अन्य लोगों के साथ-साथ लोहट जी की बहिन तांतू भी अपने भतीजे को देखने एवं बधाई देने के लिये ननेऊ गांव से पीपासर आयी थी।

संत कवि वील्होजी के एक कवित्त एवं गुरु जाम्भोजी के जीवन की घटनाओं के आधार पर गुरु जाम्भोजी के सम्पूर्ण जीवन को चार कालों में बांटा जा सकता है-

(1) बाल्यकाल-सात वर्ष (सम्वत् 1508 से 1515 तक)।।
(2) पशुचारण काल- सत्ताइस वर्ष (सम्वत् 1515 से 1542 तक)।
(3) बिश्नोई पंथ प्रवर्त्तन-चौंतीस वर्ष की आयु में (सम्वत् 1542)।
(4) ज्ञानोपदेश काल 51 वर्ष (सम्वत् 1542 से 1593 तक)।

3. बाल्यकाल

गुरु जाम्भोजी साक्षात् विष्णु थे। उन्होंने अपने विष्णु होने का परिचय जन्म से ही देना प्रारम्भ कर दिया था। यह दूसरी बात है कि प्रारम्भ में लोगों को उनके विष्णु रूप पर विश्वास नहीं हुआ था। लोग उनके कार्यो तथा अलौकिक घटनाओं को देखकर चकित अवश्य होते थे। बाल्यकाल की अनेक अलौकिक घटनाओं का वर्णन पंथ के कवियों ने अपनी रचनाओं में किया है। जन्म के समय बालक पूर्ण स्वस्थ था पर कोई भी स्त्री प्रयत्न करने पर भी बालक को जन्म घुट्टी नहीं पिला सकी। उन्होंने अपनी मां का दूध भी नहीं पीया। वे चौकी पर पीठ के बल नहीं सोते थे। उनकी पलकें नहीं झपकती थी। वे कुछ खाते-पीते नहीं थे। एक बार उन्होंने अपने शरीर को इतना भारी बना लिया था कि उन्हें लोहट जी, हांसा एवं तांतू कोई भी उठा नहीं सके पर दासी ने उठा लिया था। बाल्यकाल की इन अद्भुत घटनाओं से यह पता लगता है कि गुरु जाम्भोजी का व्यवहार साधारण बालक के समान नहीं था। वे साधारण बालक की तरह हंसते-खेलते नहीं थे। बालक का यह अद्भुत व्यवहार लोगों के समझ में नहीं आता था।

गुरु जाम्भोजी के इस तरह के असाधारण व्यवहार को देखकर लोहट जी को चिन्ता होने लग गयी थी। उनके पुत्र-प्राप्ति के आनन्द पर चिन्ता गहराने लग गई थी। वे सोचते थे कि बालक में कोई कमी है। इसी कारण वे भोपों एवं तांत्रिकों से बालक का उपचार पूछते रहते थे। बालक को ठीक कराने के उद्देश्य से ही लोहट जी उनको भोपों के पास ले गये थे। भोपे ने कई पाखण्ड किये, यहां तक कि उसने कई जीवों की बलि भी दी, तब भी बालक ठीक नहीं हुआ। अत्यधिक निराश होकर भोपे ने कहा मैंने ग्यारह जीवों की जो बलि दी थी, वह भी बेकार चली गई। इस पर गुरु जाम्भोजी ने विरोध करते हुए भोपे से कहा कि तुम झूठ बोलते हो, तुमने ग्यारह नहीं तेरह जीवों की बलि दी है। बलि देने वाले जीवों में एक बकरी के गर्भ में दो बच्चे थे, वे भी बिना सहारे मर गये। गुरु जाम्भोजी की इस बात को सुनकर भोपा चकित रह गया। बाद में जब बिश्नोई पंथ की स्थापना हुई तो वे भी पंथ में सम्मिलित हो गये थे।

भोपे से जब बालक का उपचार नहीं हुआ तो लोहट जी ने किसी के कहने पर नागौर के एक तांत्रिक ब्राह्मण को बुलाया। ब्राह्मण ने बालक को देखकर कहा कि मैं बालक को ठीक कर दूंगा। इस

पर लोहट जी ने कहा कि यदि तुम बालक को ठीक कर दोगे तो मैं तुम्हें ईनाम में गाय दूंगा। ब्राह्मण ने बालक के उपचार हेतु अनेक प्रपंच किये। उसने 64 छिद्रों वाला एक घड़ा और 108 चौमुखे दीपक मंगवाये और रविवार की रात्रि में उनमें तेल डालकर जलाना प्रारम्भ किया पर ब्राह्मण को कोई सफलता नहीं मिली। तब ब्राह्मण ने थककर कहा कि यदि मेरे दीपक जल जायें तो मैं बालक को ठीक कर सकता हूं। तब गुरु जाम्भोजी ने मिट्टी का कच्चा घड़ा एवं कच्चा सूत मंगवाकर कुएं से पानी निकाला, उस पानी को चौमुखे दीपकों में डालकर उन्हें जलाया। गुरु जाम्भोजी के इस चमत्कार को देखकर ब्राह्मण एवं वहां उपस्थित लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। ब्राह्मण ने उसी समय ही गुरु जाम्भोजी के चरण पकड़ लिये। तब गुरु जाम्भोजी ने उस ब्राह्मण को लोहट जी से गाय दिलवायी। उस समय गुरु जाम्भोजी ने उस ब्राह्मण तथा वहां उपस्थित जन समूह के प्रति सबद कहा जो उनकी 'सबदवाणी' का प्रथम 'सबद ' है। उस समय गुरु जाम्भोजी की आयु 7 वर्ष की थी। यह घटना सम्वत् 1515 की है। बिश्नोई पंथ में यह घटना बहुत प्रसिद्ध है।

4. पशुचारण-काल

गुरु जाम्भोजी ने जिस दिन सबदवाणी का प्रथम सबद कहा, उस दिन से उनके घरवालों को यह विश्वास हो गया कि बालक में कोई कमी नहीं है। इसलिये उनके माता-पिता ने उनका उपचार कराना बंद कर दिया। लोहटजी अपने गांव के बहुत बड़े पशुपालक थे। उनके पास बहुत से पशु थे, जिनको लोहट जी ही जंगल में चराते थे। इस घटना के समय तक लोहट जी बहुत वृद्ध हो गये थे। इसलिये उनके द्वारा पशु चराना सम्भव नहीं हो रहा था। तब लोहट जी ने पशु चराने का काम गुरु जाम्भोजी को सौंप दिया। अपने पिता की आज्ञा पाकर गुरु जाम्भोजी गांव के ग्वालों के साथ पशु चराने लग गये। गुरु जाम्भोजी ने सताईस वर्षो तक जंगल में गायें और अन्य पशु चराये थे। उन्हें अपने पशुओं से बहुत लगाव था। पशु भी उनसे बहुत प्रेम करते थे। वे रेत के टीले (संभराथळ)पर बैठकर योग विद्या से पशु चराते थे। पशु उनकी आज्ञा मानकर जंगल में निश्चित स्थान पर चरते रहते थे। इस काल में गुरु जाम्भोजी के साथी ग्वाले उनके कार्यो एवं व्यवहार को देखकर उनके प्रति बहुत आकर्षित हो गये थे। इसके साथ-साथ वे अपने कार्यो एवं शक्ति से दूसरे लोगों को भी प्रभावित करते रहते थे। पशु चराते समय ही गुरु जाम्भोजी ने अपने साथियों के कहने पर ऊधरण कान्हावत की सांढ़ें डाकुओं से छुड़वाई थीं। अपनी सांढ़ें मिलने पर ऊधरण कान्हावत बहुत प्रसन्न हुए थे। वे जाम्भोजी की अलौकिक शक्ति के सामने नतमस्तक हो गये थे। गुरु जाम्भोजी की अलौकिक शक्ति एवं उनके दिव्य रूप को देखकर ऊधरण कान्हावत ने गुरु जाम्भोजी से निम्नलिखित चार प्रश्न पूछे थे-

1. आपकी पीठ एवं पेट दिखाई क्यों नहीं देते हैं?

2. आपकी आयु थोड़ी दिखाई देती है, आपका जन्म किस समय का है?
3. आप किस देवता का जप करते हैं?
4. जीव एवं ब्रह्म एक हैं या अलग-अलग है?

इन प्रश्नों के जवाब में गुरु जाम्भोजी ने ऊधरण कान्हावत के प्रति सबदवाणी के चार सबद कहे थे।

पशुचारण काल में पीपासर के कुएं के पास ही राव दूदाजी की भेंट गुरु जाम्भोजी से हुई थी। राव दूदाजी हिन्दी की प्रसिद्ध भक्तिमती मीरा के दादा थे। उन दिनों राव दूदाजी से मेड़ते का राज्य छीन लिया था और वे उसे पुनः प्राप्त करने का प्रयास कर रहे थे। इसी प्रयास में वे एक दिन अपने कुछ सैनिकों के साथ पीपासर के कुएं के पास डेरा डाले हुए थे। उसी समय गुरु जाम्भोजी भी अपने पशुओं को लेकर वहां पहुंच गये। गुरु जाम्भोजी अपने जिन पशुओं को और जितने पशुओं को पानी पीने की आज्ञा देते, उतने ही पशु खेळी में पानी पीने पहुंचते और शेष अपने स्थान पर खड़े रहते। इस दृश्य को देखकर राव दूदाजी को बड़ा अचम्भा हुआ। उन्हें उनकी शक्ति पर पूर्ण विश्वास हो गया। तब राव दूदाजी ने गुरु जाम्भोजी से मेड़ते प्राप्ति की प्रार्थना की। राव दूदाजी की प्रार्थना पर जांभोजी ने उन्हें एक काठ-मूठ की तलवार दी और मेड़ते प्राप्ति का आशीर्वाद दिया। इसी आशीर्वाद से राव दूदाजी अपने खोये हुए राज्य को पुनः प्राप्त करने में सफल हो गये। यह घटना सम्वत् 1519 की मानी जाती है, तब गुरु जाम्भोजी की आयु ग्यारह वर्ष की थी। इस घटना का वर्णन जाम्भाणी साहित्य के अनेक कवियों ने किया है।

जोधपुर के राव जोधाजी और उनके पुत्र बीकाजी का भी गुरु जाम्भोजी से सम्बन्ध था। जोधपुर के राव जोधाजी को तो उन्होंने सम्वत् 1526 में बैरीसाल नगाड़ा भी दिया था। पिता-पुत्र के एक समझौते के अनुसार राव जोधाजी ने बैरीसाल नगाड़ा सहित विभिन्न पूजनीय वस्तुएं बीकाजी को देना स्वीकार किया था, पर जोधाजी अपने इस वचन को पूरा नहीं कर सके। उनकी मृत्यु के बाद बीकाजी ने जोधपुर पर चढ़ाई करके इन पूजनीय वस्तुओं को प्राप्त किया था। इन वस्तुओं में बैरीसाल नगाड़ा भी था। यही नगाड़ा अब बीकानेर के जूनागढ़ में रखा हुआ हैं। बीकानेर के राजा दशहरे एवं दीपावली पर इनकी पूजा करते रहे हैं। इससे गुरु जाम्भोजी एवं बीकानेर के राज घराने का गहरा सम्बन्ध प्रकट होता है।

गुरु जाम्भोजी ने कभी भी किसी पाठशाला में शिक्षा ग्रहण नहीं की थी फिर भी वे सभी बातों के पूर्ण ज्ञाता थे। उनका कोई गुरु भी नहीं था। कुछ लोग गोरखनाथ को गुरु जाम्भोजी का गुरु मानते हैं पर गोरखनाथ तो गुरु जाम्भोजी से कई सैकड़ों वर्ष पहले हुए थे। साक्षात् विष्णु होने के कारण गुरु जाम्भोजी को न तो किसी पाठशाला में शिक्षा ग्रहण करने की आवश्यकता थी और न किसी गुरु की।

हर माता-पिता की तरह गुरु जाम्भोजी के माता-पिता भी गुरु जाम्भोजी का विवाह करना

चाहते थे। गुरु जाम्भोजी के सामने जब भी उनके विवाह की बात होती तो वे उसे टाल देते थे। उनका उद्देश्य तो संसार के बारह करोड़ जीवों का उद्धार करना था। इसलिये उन्होंने अपने माता-पिता को आजीवन ब्रह्मचारी रहने का अपना निर्णय बता दिया। इसी कारण गुरु जाम्भोजी के माता-पिता उनका विवाह करने में सफल नहीं हुए और उन्होंने गुरु जाम्भोजी के निर्णय को स्वीकार कर लिया। सम्वत् 1540 की चैत्र सुदि नवमी को लोहट जी का स्वर्गवास हो गया। लोहट जी के स्वर्गवास के पांच माह बाद सम्वत् 1540 की भादो की पूर्णिमा को हांसा देवी का स्वर्गवास हो गया। अपने माता-पिता के स्वर्गवास के बाद गुरु जाम्भोजी ने अपनी सारी पैतृक सम्पत्ति अपने परिवार एवं गरीबों में बांट दी और स्वयं संभराथळ पर रहने लग गये। बाद में यही उनका स्थायी निवास स्थान रहा था।

5. पंथ की स्थापना और उनतीस नियम

अपने माता-पिता के स्वर्गवास के बाद गुरु जाम्भोजी ने पीपासर को छोड़ दिया था। वे स्थायी रूप से संभराथळ पर रहने लग गये। संभराथळ पर रहते हुए उन्हें अभी थोड़ा ही समय हुआ था कि सम्वत् 1542 में इस क्षेत्र में भयंकर अकाल पड़ गया। अकाल को सहन करना यहां के लोगों के लिये कोई नई बात नहीं थी पर इस अकाल से घबराकर लोग अपने घरों को छोड़कर अपने पशुओं को साथ लेकर मालवे की ओर जाने लग गये। गांव के गांव खाली होने प्रारम्भ हो गये। अकाल के इस संकट को देखकर गुरु जाम्भोजी ने लोगों को मालवे आदि स्थानों पर जाने से रोका और अपनी अलौकिक शक्ति से उनकी अन्न-धन से सहायता की। लोगों को आवश्यकतानुसार अन्न एवं चारा आदि प्राप्त हो जाता था। लोग ऊंटों पर लादकर अन्न ले जाते थे फिर भी अन्न की कोई कमी नहीं पड़ी। इसके साथ-साथ ही गुरु जाम्भोजी लोगों के आचरण को सुधारने हेतु उपदेश भी देते रहते थे। इस तरह गुरु जाम्भोजी ने अकाल में इस क्षेत्र के लोगों की शारीरिक एवं मानसिक भूख को शान्त किया। इसी बीच अच्छी वर्षा हो गई और गुरु जाम्भोजी ने लोगों को आगामी समय के लिये अनाज, फसल के लिये बीज और खेती का सामान दिया। ऐसे ही उचित समय में गुरु जाम्भोजी ने जन कल्याण के उद्देश्य से विश्नोई पंथ प्रारम्भ करने का निश्चय किया। अपने निश्चय के अनुसार ही गुरु जाम्भोजी ने सम्वत् 1542 में कार्तिक वदि अष्टमी को संभराथळ धोरे पर कलश की स्थापना करके, लोगों को पाहळ देकर विश्नोई पंथ की विधिवत् स्थापना की। गुरु जाम्भोजी ने पाहळ मंत्र द्वारा कलश में भरे जल का पाहळ बनाया और इसी पाहळ को देकर लोगों को बिश्नोई पंथ में दीक्षित करना प्रारम्भ किया। उन्होंने सबसे पहले अपने चाचा पूल्होजी को पाहळ देकर पंथ में दीक्षित किया। बिश्नोई पंथ में दीक्षित होने से पूर्व पूल्होजी ने गुरु जाम्भोजी से स्वर्ग दिखाने की प्रार्थना की। उन्होंने कहा कि मैं यह चमत्कार देखने पर ही विश्नोई पंथ में दीक्षित हो सकता हूँ। तब गुरु जाम्भोजी ने उन्हें सशरीर स्वर्ग

के दर्शन करवाये। इस चमत्कार को देखकर पूल्होजी को गुरु जाम्भोजी के विष्णु होने का पूर्ण विश्वास हो गया था। इसी विश्वास के आधार पर वे सबसे पहले पंथ में दीक्षित हुए। पंथ में दीक्षित होने का यह काम अष्टमी से लेकर अमावस्या तक होता रहा। बाद में भी लोग बिश्नोई पंथ में सम्मिलित होते रहे हैं। वास्तव में गुरु जाम्भोजी ने बिश्नोई पंथ की स्थापना किसी जाति विशेष के लिये नहीं की थी। यह पंथ मानव मात्र के लिये है। इसलिये इसमें बिना किसी भेदभाव के सभी जातियों के लोग सम्मिलित होते रहे हैं। इसी कारण गुरु जाम्भोजी के समय में ही इसका क्षेत्र बहुत बड़ा हो गया था।

★ उनतीस नियम

बिश्नोई पंथ में सबसे अधिक महत्त्व उनतीस नियमों का है। ये नियम बिश्नोई समाज की पहचान के आधार हैं। गुरु जाम्भोजी ने बिश्नोई पंथ की स्थापना के समय इन नियमों का उपदेश समाज के लोगों को दिया था। वस्तुतः ये नियम बिश्नोई पंथ की आचार संहिता है। ये नियम न केवल बिश्नोई पंथ के लिये उपयोगी हैं अपितु पूरे मानव समाज के लिये उपयोगी हैं। इन नियमों का महत्त्व जितना पहले था, उतना ही आज है और आने वाले समय में इनका महत्व और अधिक बढ़ता जायेगा। इन नियमों का सम्बन्ध किसी काल, स्थान एवं जाति विशेष से न होकर सम्पूर्ण मानव जाति से है तथा सार्वकालिक है। गुरु जाम्भोजी द्वारा बताये गये इन नियमों का पालन करके कोई भी मनुष्य अपने सांसारिक जीवन को सुखी बना सकता है तथा मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है। आज विश्व नशा खोरी, पर्यावरण प्रदूषण, आतंकवाद, हिंसा एवं भ्रष्टाचार आदि की समस्याओं से जकड़ा हुआ है। इन समस्याओं का समाधान इन नियमों से ही हो सकता है। ये नियम पूर्णतः वैज्ञानिक एवं व्यावहारिक हैं। इन नियमों के द्वारा गुरु जाम्भोजी ने मानव समाज को एक कल्याणकारी आचार संहिता दी है।

ऊदोजी नैण बिश्नोई पंथ के बहुत प्रसिद्ध कवि हुए हैं। उन्होंने इन नियमों को पद्य में प्रस्तुत किया है। ऊदोजी नैण द्वारा पद्य में प्रस्तुत उनतीस नियम इस प्रकार हैं–

तीस दिन सूतक, पांच ऋतुवन्ती न्यारो।
सेरा करो स्नान, शील, सन्तोष शुची प्यारो।।
द्विकाल संध्या करो, सांझ आरती गुण गावो।
होम हित चित प्रीत सूं होय, वास बैकुंठे पावो।।
पाणी, बांणी, ईन्धणी दूध इतना लीजै छाण।
क्षमा दया हिरदै धरो, गुरु बतायो जाण।।
चोरी, निन्दा, झूठ बरजियो, वाद न करणो कोय।
अमावस्या व्रत राखणो, भजन विष्णु बतायो जोय।।
जीव दया पालणी, रूंख लीलो नहिं घावै।

अजर जरै, जीवत मरै, वे वास बैकुण्ठा पावै।।
करे रसोई हाथ सूं, आन सूं पला न लावै।
अमर रखावै थाट, बैल बधिया न करावै।।
अमल, तमाखू, भांग, मद-मांस सूं दूर ही भागै।
लील न लावै अंग, देखत दूर ही त्यागै।।
''उणतीस धर्म की आखड़ी, हिरदै धरियो जोय।
जाम्भोजी किरपा करी, नाम बिश्नोई होय।''

1. तीस दिन तक जच्चा घर का कोई काम न करें।
2. पांच दिन तक रजस्वला स्त्री घर के कार्यो से अलग रहे।
3. प्रातःकाल स्नान करें।
4. शील का पालन करें।
5. सन्तोष धारण करें।
6. बाहरी एवं आन्तरिक पवित्रता रखें।
7. प्रातः-सायं सन्ध्या वन्दना करें।
8. सन्ध्या को आरती और हरिगुण गान करें।
9. प्रेम पूर्वक हवन करें।
10. पानी, वाणी, ईधन एवं दूध को छान कर प्रयोग करें।
11. क्षमावान रहे तथा हृदय में दया धारण करें।
12. चोरी न करें।
13. निंदा न करें।
14. झूठ न बोलें।
15. वाद-विवाद न करें।
16. अमावस्या का व्रत रखें।
17. विष्णु का जप करें।
18. प्राणी मात्र पर दया करें।
19. हरा वृक्ष न काटे।
20. काम, क्रोध, मद, लोभ एवं मोह आदि को अपने वश में रखें।
21. रसोई अपने हाथों से बनाएँ।
22. थाट अमर रखें।
23. बैल को खसी (नपुंसक) न करवाये।

24. अमल न खावें।

25. तम्बाकू का प्रयोग न करें।

26. भांग न पीवें।

27. मांस न खावें।

28. मदिरा न पीवें।

29. नील व नीले वस्त्र का प्रयोग न करें।

इन उनतीस नियमों को समझने के लिए यहाँ इनकी संक्षिप्त व्याख्या प्रस्तुत की जा रही है-

1. तीस दिन तक सूतक रखना।

शिशु के जन्म पर प्रत्येक बिश्नोई अपने घर में तीस दिनों तक सूतक रखें। तीस दिनों तक बच्चे की मां घर का कोई काम न करें तथा घर में अलग कमरे में रहें। बच्चे की मां के बर्तन एवं कपड़े आदि अलग रखें। उसके कमरे में घर के तथा बाहर के लोगों का आना-जाना बहुत कम होना चाहिये। ऐसा करने से बच्चे तथा बच्चे की मां को इन्फेक्शन से बचाया जा सकता है। बच्चे के जन्म के कारण जच्चा के शरीर में जो कमजोरी आ जाती है, उसको दूर करने के लिये आराम एवं पौष्टिक भोजन आवश्यक है। तीस दिनों तक बच्चा भी निरंतर मां के पास रहकर स्वस्थ, सुन्दर एवं शक्तिशाली बन जाता है। जन्म के बाद बच्चे को पौष्टिक आहार की आवश्यकता रहती है। बच्चे के लिये मां के दूध से बढ़कर कोई पौष्टिक आहार नहीं हो सकता। मां का दूध भी पौष्टिक तभी हो सकेगा, जब वह पूर्ण स्वस्थ होगी। इन दोनों कार्यों की दृष्टि से भी तीस दिनों का सूतक आवश्यक है। इससे जच्चा को स्वास्थ्य लाभ और बच्चे को पौष्टिक आहार मिल सकेगा। यह नियम पूर्ण वैज्ञानिक है। इस तरह यह वैज्ञानिक व आध्यात्मिक दोनों ही दृष्टियों से अत्यन्त उपयोगी है। इस नियम के पालन करने से जच्चा-बच्चा का शारीरिक व मानसिक विकास हो जाता है।

2. पांच दिन तक ऋतुवंती स्त्री घर के कार्यों से दूर रहें।

ऋतुधर्म का सम्बन्ध संसार की प्रत्येक स्त्री के साथ रहता है। इस अवधि में प्रत्येक स्त्री के शरीर से हर माह को तीन से पांच दिनों तक रक्त स्राव होता है, यही ऋतु धर्म कहलाता है। इससे स्त्री के मानसिक स्वरूप में परिवर्तन हो जाता है। वह अपने को कुछ अस्वस्थ अनुभव करती है। उसके सभी कार्यों का दूसरों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसलिये ऋतुधर्म से सम्बन्धित स्त्री को पांच दिनों तक घर के कार्यों से दूर रहना चाहिये। इसके साथ-साथ उसे किसी भी धार्मिक कार्यों में भाग नहीं लेना चाहिये। उसे सादा भोजन करना चाहिये और सादगी का जीवन व्यतीत करना चाहिये। उसे पति के साथ एक शैया पर नहीं सोना चाहिये। पति को भी चाहिये कि वह पत्नी को, इस धर्म के पालन में सहयोग करें। यह नियम संसार की प्रत्येक ऋतुवन्ती (रजस्वला) स्त्री, समाज एवं आने वाली संतान सभी के लिये बहुत महत्त्वपूर्ण है।

3. प्रातःकाल स्नान करें।

सभी को सूर्योदय से पूर्व स्नान करना चाहिये। प्रातःकाल का स्नान अनेक दृष्टियों से लाभकारी है। स्नान करने से आलस्य नष्ट हो जाता है और शरीर में नयी स्फूर्ति और ताजगी आ जाती हैं। स्नान से मन भी प्रसन्न हो जाता है। रात भर सोने से शरीर के रोम द्वार बंद हो जाते हैं, जो स्नान करने से खुल जाते हैं। प्रातःकाल का स्नान स्वास्थ्य की दृष्टि से भी बहुत उपयोगी है। दिनभर शरीर पर पड़ी हुई मिट्टी एवं मैल स्नान से साफ हो जाते हैं। इस नियम का सम्बन्ध सम्पूर्ण मानव जाति से है। आज जब वातावरण में अत्यधिक प्रदूषण फैल रहा है, तो इस नियम का महत्त्व और अधिक बढ़ गया है। बिश्नोई समाज इस नियम का पालन बड़ी दृढ़ता से करता रहा है। इसी कारण बिश्नोइयों को स्नानी कहा जाता है। आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक सभी दृष्टियों से प्रातःकाल के स्नान का महत्त्व आज भी प्रासंगिक है और आगे भी रहेगा। मनुष्य के लिये स्वास्थ्य का महत्त्व सर्वाधिक है और मनुष्य का स्वास्थ्य बहुत कुछ प्रातःकाल के स्नान पर निर्भर करता है। इसके साथ ही प्रातःकाल के स्नान से हमारे रक्त संचार में तेजी आ जाती है और मनुष्य अपने में स्फूर्ति को अनुभव करने लगता है।

4. शील का पालन करें।

शील का अर्थ है–चरित्र। मनुष्य को चरित्रवान होना चाहिये। चरित्रवान मनुष्य ही समाज में सम्मानित होता है और सदैव विकास के रास्ते पर बढ़ता रहता है। शीलवान होने का अर्थ है श्रेष्ठ मानवीय गुणों से युक्त होना। श्रेष्ठ समाज का निर्माण शीलवान मनुष्यों के द्वारा ही हो सकता है। इसलिये गुरु जाम्भोजी ने सबदवाणी में मानवीय गुणों का समर्थन किया है और अवगुणों का विरोध किया है। गुरु जाम्भोजी जिस उद्देश्य को लेकर इस संसार में अवतरित हुए थे, उसके लिये मनुष्य का चरित्रवान होना आवश्यक था। इसी आधार पर उन्होंने शील के पालन पर जोर दिया था और इसे उनतीस नियमों में सम्मिलित किया था।

5. सन्तोष धारण करें।

असन्तोष एवं मानसिक पीड़ा जैसी बुराइयों से मनुष्य सन्तोष के द्वारा ही मुक्त हो सकता है। संसार में यह उक्ति प्रसिद्ध है–सन्तोषी सदा सुखी। सन्तोष से बड़ा कोई धन नहीं है, जिसे हर कोई प्राप्त नहीं कर सकता। सन्तोष रूपी धन को प्राप्त करने के लिये मनुष्य को निरन्तर साधना करनी पड़ती है। इस साधना के लिये मनुष्य को इच्छाओं को नियंत्रित करना होता है। जैसे–जैसे मनुष्य सन्तोष धारण करने का अभ्यस्त हो जाता है, वैसे–वैसे उसके जीवन में सुख आना प्रारम्भ हो जाता है। ऐसे मनुष्य का जीवन सांसारिक मोह–माया से निकलकर धर्म के मार्ग पर चलना प्रारम्भ हो जाता है। इस संसार में मनुष्य भौतिक सुख के लिये धन का संग्रह करता है और धन संग्रह के लिये वह अनेक प्रपंच करता है–झूठ बोलता है और गलत कार्य करता है, जिससे वह धन प्राप्त करने के बाद भी सुखी नहीं रह पाता। इसके विपरीत जब मनुष्य सन्तोष को धारण कर लेता है तो वह सुखी हो जाता है और वह मोक्ष के रास्ते पर बढ़ने लगता है। इसी कारण गुरु जाम्भोजी ने सन्तोष धारण करने पर बल दिया है।

6. आन्तरिक एवं बाह्य स्वच्छता रखें।

गुरु जाम्भोजी हर प्रकार की पवित्रता के पक्षधर रहे हैं। वे चाहते थे कि मनुष्य का आचरण पवित्र रहे। पवित्र आचरण के लिये मनुष्य की आन्तरिक पवित्रता आवश्यक है अर्थात् मनुष्य का मन, काम, क्रोध, मोह, लोभ, झूठ, अहंकार आदि बुराइयों से दूर रहे। मानवीय अवगुणों से रहित व्यक्ति का मन पवित्र रह सकता है। इसी आधार पर गुरु जाम्भोजी ने मानवीय अवगुणों का विरोध किया है। इसके साथ-साथ उन्होंनें मनुष्य की शारीरिक स्वच्छता पर भी बल दिया है और प्रातःकाल के स्नान को आवश्यक माना है। मानव शरीर अमूल्य है। इसी के माध्यम से मनुष्य मोक्ष प्राप्त करने में सफल हो सकता है। इसलिये इस शरीर की रक्षा करना व उसे स्वच्छ रखना आवश्यक है।

7. प्रातः-सायं सन्ध्या वंदना करें।

सभी को प्रातःकाल एवं सायं काल को सन्ध्या करनी चाहिये। प्रातःकाल की सन्ध्या से रात्रि के समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और सायंकाल की सन्ध्या से दिनभर के बुरे कार्यो का प्रभाव नष्ट हो जाता है और व्यक्ति प्रसन्नचित हो जाता है। मनुष्य को प्रातःकाल स्नान करने के बाद विष्णु-विष्णु का जप करते हुए नवण मंत्र का पाठ करना चाहिये। इसी तरह सायंकाल को अपने हाथ-पांव धोकर या स्नान कर एकाग्र मन से विष्णु-विष्णु का जप करते हुए नवण मंत्र बोलना चाहिये। ऐसा करने से मनुष्य के मन की चंचलता नियंत्रित हो जाती है और वह ईश्वर भक्ति में तल्लीन होना प्रारम्भ हो जाता है। उसके मन की भावनाएं पवित्र हो जाती है और वह बुरे कार्यो से दूर हट कर अच्छे कार्य करने लग जाता है। दोनों समय की सन्ध्या करने से मनुष्य का भौतिक जीवन सुखी हो जाता है और वह निरन्तर मोक्ष प्राप्ति की ओर बढ़ने लगता है। आज के इस तनावग्रस्त एवं चिन्तायुक्त वातावरण में मनुष्य अनेक समस्याओं से घिरा हुआ है, वहाँ इस नियम के पालन करने से मनुष्य चिन्ता मुक्त होकर हर प्रकार की समस्या पर काबू पा सकता है। आधुनिक काल में यह नियम सम्पूर्ण मानव जाति के लिये भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों ही दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण और उपयोगी है।

8. सन्ध्या को आरती एवं हरि गुणगान करें।

सांयकाल को आरती आदि के द्वारा भगवान के गुणों को स्मरण करना बहुत ही उपयोगी रहता है। इसलिये अधिकतर लोग सन्ध्या को मन्दिरों में जाकर सामूहिक आरती करते हैं। गुरु जाम्भोजी ने भी मनुष्य के लिये सन्ध्या को आरती एवं हरि गुणगान को आवश्यक माना है। आरती में परमात्मा की शक्ति, तथा मोक्ष प्राप्ति की प्रार्थना की जाती है। ऐसा करने से मनुष्य हर पल वास्तविकता के निकट रहता है और वह कभी भी परमात्मा को भूल नहीं सकता। इस संसार में रहते हुए मनुष्य विभिन्न प्रकार के कार्य करता है और परमात्मा को याद रखता है, उसकी साक्षी को स्वीकार करता है तो वह गलत कार्य करने से बच जाता है। इसी से वह निरन्तर परमात्मा के निकट जाने का प्रयास करता रहता है। इसलिये मनुष्य को इस नियम को दृढ़ता से पालन करना चाहिये। मानव जीवन पाकर जब कोई परमात्मा को याद नहीं करता है तो उसका मानव जीवन निरर्थक है। ऐसे जीवन की सभी ने निन्दा की है।

9. नित्य हवन करें। (होम हित चित प्रीत सूं होय)

हमें अपने घर पर प्रात:काल हवन करना चाहिये। बिश्नोई पंथ में यह मान्यता प्रचलित है कि होम की ज्योति में ही गुरु जाम्भोजी के दर्शन होते हैं। इसके साथ-साथ होम की अग्नि से घर का तथा बाहर का पर्यावरण शुद्ध रहता है। नित्य के हवन से हम पर्यावरण को शुद्ध रखकर प्राणी मात्र का भला कर सकते हैं। होम की अग्नि से वातावरण में फैले हुए विभिन्न रोगों के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं और हमारे आसपास का सारा वातावरण सुगन्धित हो जाता है। इस तरह नित्य का हवन आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक दोनों ही दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। हवनकर्ता मानव सहज ही जीवन मुक्ति को प्राप्त हो जाता है।

10. पानी, वाणी, ईंधन एवं दूध छानकर प्रयोग करें।

स्वास्थ्य की दृष्टि से शुद्ध जल का प्रयोग आवश्यक है। शुद्ध जल के प्रयोग करने से हम कई प्रकार के रोगों से बच सकते हैं। इसलिये पीने से पहले जल को कपड़े से छान लेना चाहिये। ऐसा करने से जल में मिले हुए जलीय जीव, मिट्टी के कण एवं घास-फूस पेट में नहीं जा सकेंगे। ऐसा करने से हम स्वस्थ रहेंगे और अहिंसा का भी पालन कर सकेंगे। आज का विज्ञान भी मनुष्य के स्वास्थ्य के लिये शुद्ध जल पर सर्वाधिक बल दे रहा है।

वाणी को छानकर प्रयोग में लेने का अर्थ है-सोच-विचार कर बोलना। यदि हम सोच-विचार कर बोलते हैं तो अनेक प्रकार की बुराइयों से बच सकते हैं। मीठी वाणी बोलकर हम हर किसी को अपना बना सकते हैं और कड़वी वाणी के द्वारा हम दूसरों को शत्रु बना सकते हैं। इसलिये कहा भी गया है -

वाणी ऐसी बोलिये, मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपो शीतल होय।।

मनुष्य पर वाणी का प्रभाव सर्वाधिक पड़ता है। वाणी के अनुचित प्रयोग से कई बार बड़ी-बड़ी लड़ाइयां तक होती रही है। इन्हीं आधारों पर गुरु जाम्भोजी ने वाणी को छानकर प्रयोग में लेने की बात कही है।

पुराने एवं सूखे ईंधन में कई तरह के जीवाणु होते हैं, उनको बचाने के लिये ईंधन को भी झाड़कर काम में लेना चाहिये। ऐसा करने से जीव-हत्या से बचा जा सकता है और हम अहिंसा एवं जीव-दया का पालन कर सकते हैं।

गाय-भैंस आदि का दूध निकालकर उसको प्रयोग में लेने से पूर्व छानना चाहिये। पशुओं का दूध निकालते समय कई बार उनके शरीर से चिपके हुए जीवाणु एवं मिट्टी के कण दूध में गिर जाते हैं और दूध को उसी रूप में प्रयोग में लेने से वे पीने वाले के पेट में चले जाते हैं, जिससे मनुष्य रोगी बन जाता है। इसके साथ-साथ दूध को न छानने से जीव-हत्या भी हो जाती है। अत: हमें दूध को छानकर प्रयोग में लेना चाहिये। यह नियम स्वास्थ्य एवं अहिंसा दोनों ही दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है।

11. **क्षमावान रहें तथा हृदय में दया धारण करें।**

क्षमा मनुष्य का सबसे बड़ा मानवीय गुण है। दूसरों को क्षमा करने से जहां क्षमा दाता की उदारता एवं मानवीय संवेदना प्रकट होती है, वहीं वह सामने वाले को नतमस्तक कर देता है। कई बार क्षमा प्राप्त व्यक्ति के जीवन की धारा ही बदल जाती है और वह बुरे से अच्छा बन जाता है। उद्दण्ड से नम्र हो जाता है और वह अपने साथ-साथ दूसरे लोगों को भी सुधारने का प्रयास करता है। जब किसी व्यक्ति से अनजाने में या भूलवश अपराध हो जाता है तो उसके जीवन को सुधारने के लिये उसे क्षमा करना जरूरी है। क्षमा की शक्ति असीम है। हम जो काम किसी शक्ति से या दंड से नहीं कर सकते, उसे क्षमा के द्वारा किया जा सकता है। क्षमा करने वाले व्यक्ति के हृदय में दया का होना भी आवश्यक है। दया के कारण ही हम किसी के प्रति द्रवित हो सकते हैं और उसे क्षमा कर सकते हैं।

12. **चोरी न करें।**

दूसरे के धन, वस्तु, पशु या गहने आदि को उससे छिपाकर प्राप्त करने को चोरी कहते हैं। विभिन्न प्रकार की बुराइयों में से चोरी भी एक बुराई है-अवगुण है। इस आदत के पड़ने से व्यक्ति अकर्मण्य हो जाता है और धीरे-धीरे वह बड़े अपराध करना प्रारम्भ कर देता है। चोरी करना जहां सामाजिक बुराई है, वहीं यह कानूनी अपराध भी है, जिसकी अलग-अलग सजा मिलती है। जिस समाज या देश में चोरी करने की प्रवृति अधिक मात्रा में होती है, वहां का वातावरण घुटनशील एवं दु:खदायी हो जाता है। प्राय: सभी विचारकों एवं धर्म प्रवर्त्तकों ने चोरी का विरोध किया है। मानव जीवन के विकास के रास्ते में चोरी को प्रबल बाधा समझकर ही गुरु जाम्भोजी ने इसका विरोध किया है और अपने अनुयायियों को चोरी न करने की बात कही है।

13. **निंदा न करें।**

दूसरों के अवगुणों को उनकी अनुपस्थिति में वर्णन करना ही निंदा है। निंदा करने वाला कई बार किसी के वास्तविक अवगुणों का वर्णन करता है और कई बार दूसरों के अवगुणों को बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन करता है। अपनी निंदा सुनकर कई बार व्यक्ति अपने जीवन में सुधार कर लेता है पर निंदा करने वाले को इससे कोई लाभ नहीं होता। निंदा करने वाला तो निंदा के बदले दूसरों से दुश्मनी ही मोल लेता है पर वह अपनी आदत से विवश रहता है, जिसे वह छोड़ नहीं सकता। निंदा करने वाला स्वयं अनेक अवगुणों से युक्त होता है। वह अपने अवगुणों को त्यागने के स्थान पर दूसरों की निंदा करके आगे बढ़ने का असफल प्रयास करता है। निंदा के मूल में ईर्ष्या एवं द्वेष की भावना कार्य करती है। ये भावनाएँ निंदा करने वाले को ही नष्ट कर देती है, जिससे समाज का वातावरण भी दूषित हो जाता है। इसी आधार पर गुरु जाम्भोजी ने निंदा न करने का नियम बनाया था।

14. **झूठ न बोलें।**

झूठ बोलना मानवीय अवगुण है, जिसका सभी विद्वानों ने विरोध किया है। पाप-पुण्य में विश्वास करने वाले झूठ को सबसे बड़ा पाप मानते है। इसी आधार पर कहा भी गया है कि सच

बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप। इन्हीं सब आधारों पर गुरु जाम्भोजी ने भी झूठ का विरोध किया है और झूठ न बोलने को उनतीस नियमों में सम्मिलित किया है।

यदि मनुष्य इस नियम का दृढ़ता से पालन करता है तो वह अनेक प्रकार की बुराइयों से बच सकता है और अपने चरित्र को उज्ज्वल बना सकता है। यही उज्ज्वल चरित्र उसके व्यक्तित्व के विकास में सहायक हो सकता है। झूठ न बोलने वाले व्यक्ति की समाज में अलग पहचान होती है और वह बहुत प्रतिष्ठित माना जाता है। आज के इस असन्तोष भरे वातावरण में यदि मनुष्य सुख-शान्ति के साथ अपने जीवन को व्यतीत करना चाहता है तो उसे गुरु जाम्भोजी के द्वारा बताये गये झूठ न बोलने के इस नियम का दृढ़ता से पालन करना चाहिये।

15. वाद-विवाद न करें।

जब मनुष्य किसी विषय पर विचार-विमर्श करने के स्थान पर व्यर्थ के वाद-विवाद में उलझ जाता है, तो मूल विषय कहीं पीछे छूट जाता है। इस तरह के वाद-विवाद से समय एवं शक्ति नष्ट होती है और वाद-विवाद करने वालों में द्वेष व शत्रुता की भावना पनप जाती है। शत्रुता की यही भावना व्यक्ति एवं समाज के विनाश का कारण बनती है। वाद-विवाद की इस बुराई को देखकर गुरु जाम्भोजी ने वाद-विवाद न करने का नियम बनाया था। वाद-विवाद के मूल में अज्ञानता एवं अहंकार रहता है। अहंकार के वशीभूत होकर ही मनुष्य अपनी बात को सही मानता है और उसे स्थापित करने के लिये वाद-विवाद करता रहता है। वाद-विवाद का अन्त प्रायः झगड़े में होता है। इसी कारण समझदार लोग वाद-विवाद से दूर रहते हैं। वाद-विवाद के कारण घर का एवं समाज का वातावरण कलहमय बन जाता है। इसी कारण सुख एवं शान्ति के लिये वाद-विवाद को त्यागना आवश्यक है।

16. अमावस्या का व्रत रखें।

व्रत का महत्त्व धार्मिक एवं स्वास्थ्य दोनों ही दृष्टियों से है। बिश्नोई पंथ में अमावस्या का विशेष महत्त्व है। इसी कारण अमावस्या के दिन को सबसे पवित्र दिन माना गया है। इस दिन ऐसे कार्यो का निषेध किया गया है, जिससे हिंसा हो और ऐसे कार्यो के करने पर बल दिया है, जिससे परोपकार होता हो। इसी आधार पर अमावस्या के व्रत रखने के नियम को उनतीस नियमों में सम्मिलित किया है। बच्चे एवं रोगियों को छोड़कर सभी को अमावस्या का व्रत रखना चाहिये और अपना समय विष्णु भजन, परोपकार, दान एवं हवन करने आदि में व्यतीत करना चाहिये। स्वास्थ्य की दृष्टि से तीस दिनों के परिश्रम के बाद एक दिन का विश्राम लाभकारी है तथा हमारे भोजन-तंत्र को भी विश्राम मिल जाता है।

17. विष्णु का जप करें।

गुरु जाम्भोजी का इस संसार में अवतार लेने का मुख्य उद्देश्य बारह करोड़ जीवों का उद्धार करना था। इसके लिये उन्होंने विष्णु के नाम-जप पर सर्वाधिक बल दिया है। एक ओर उन्होंने विष्णु जप को उनतीस नियमों में सम्मिलित किया है तो दूसरी ओर उन्होंने सबदवाणी एवं अपने मंत्रों में भी

विष्णु-जप के महत्त्व को प्रतिपादित किया है। मोक्ष-प्राप्ति का इससे सरल कोई मार्ग नहीं हो सकता। इस मार्ग का अनुसरण अनपढ़ व्यक्ति भी कर सकता है। भक्तिकाल के प्रायः सभी संतों ने नाम-जप के महत्त्व को स्वीकार किया है। ध्वनि एवं शब्द का प्रभाव वक्ता एवं श्रोता दोनों पर पड़ता है। निरन्तर विष्णु नाम का जप करने से या विष्णु नाम को सुनने से दोनों का ही विष्णु के प्रति लगाव हो सकता है। वे मोह-माया को त्यागकर भक्ति के रास्ते पर अग्रसर हो सकते हैं। इसलिये मनुष्य का युक्ति पूर्वक जीवन जीने के साथ-साथ निरन्तर विष्णु का जप करते रहना चाहिये।

18. प्राणी मात्र पर दया करें।

गुरु जाम्भोजी प्राणी मात्र के हितैषी थे तथा अहिंसा के प्रबल समर्थक थे। अहिंसा का पालन तभी हो सकता है, जब मनुष्य के मन में दया की भावना हो। दया के कारण ही मनुष्य इस संसार के जीवों की रक्षा कर सकता है। पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से भी इस धरती के समस्त प्राणियों का सुरक्षित रहना आवश्यक है। इन प्राणियों की सुरक्षा का उत्तरदायित्व मनुष्य पर सबसे अधिक है। संसार के प्राणियों की सुरक्षा का कार्य कानून से नहीं दया की भावना से हो सकता है। यद्यपि बहुत से देशों ने वन्य प्राणियों की हत्या न करने के कानून बना रखे हैं पर दया के अभाव में वन्य प्राणियों का निरन्तर शिकार होता जा रहा है, जिससे आज अनेक वन्य जीव इस धरती से लुप्त हो गये हैं। आज जो वन्य प्राणी सुरक्षित हैं, उसमें बिश्नोई पंथ के लोगों का 'जीव दया पालणी' के नियम का सख्ती से पालन करना है। आज यदि हम पर्यावरण को शुद्ध रखना चाहते हैं और 'जीयो और जीने दो' के सिद्धान्त को संसार में लागू करना चाहते हैं तो हमें सभी प्राणियों पर दया करनी होगी।

19. हरा वृक्ष न काटें।

पर्यावरण संरक्षण के लिये मानव, मानवेत्तर प्राणियों एवं वनस्पति जगत में सन्तुलन रहना आवश्यक है। इसी बात को ध्यान में रखकर गुरु जाम्भोजी ने हरे वृक्ष न काटने का नियम बनाया था। इसके साथ-साथ वे यह भी मानते थे कि वृक्ष प्राणवान है। इसलिये जीव दया की भावना के कारण अन्य प्राणियों की रक्षा की तरह वृक्षों की भी रक्षा करना आवश्यक हैं। इन्हीं सभी कारणों के आधार पर गुरु जाम्भोजी ने हरे वृक्ष न काटने की आज्ञा दी और अपने जीवन काल में स्थान-स्थान पर वृक्षारोपण करके लोगों में वृक्ष प्रेम की भावना जाग्रत की थी। आज के इस पर्यावरण प्रदूषण के युग में इस नियम का महत्व और अधिक बढ़ गया है। इसलिये इस नियम का अधिक से अधिक प्रचार-प्रसार करना चाहिये, जिससे स्वार्थी मनुष्य के हाथों में पड़ी हुई कुल्हाड़ी से वृक्षों की रक्षा की जा सके।

जहां वृक्षों की अधिकता होगी, वहीं वर्षा अधिक होगी और अधिक वर्षा से अकाल की समस्या हल हो जायेगी। इसलिये वृक्ष बाढ़ से हमारी रक्षा करते है। वृक्षों के इस महत्त्व के आधार पर हमें हरे वृक्ष न काटने के नियम का दृढ़ता से पालन करना चाहिये।

20. काम, क्रोध, लोभ, मद एवं मोह को अपने वश में रखें।

काम, क्रोध, लोभ, मद एवं मोह ये पांचों अजर हैं। इनको वश में करना कठिन है। इनको वश में करना ही अजर का जरना है। जब मनुष्य इन बुरी प्रवृत्तियों के वशीभूत हो जाता है तो उसका जीवन नरकमय बन जाता है और उसके जीवन-विकास के सारे रास्ते बंद हो जाते हैं। इसके विपरीत जब मनुष्य इनको अपने वश में कर लेता है तो उसका जीवन, विकास के पथ पर बढ़ने लगता है और वह कठिन से कठिन परिस्थितियों पर नियंत्रण प्राप्त कर सकता है। यहां तक कि वह आवागमन के चक्कर से निकलकर मोक्ष प्राप्त करने में सफल हो सकता है।

21. रसोई अपने हाथ से बनावें।

यह नियम पवित्रता, स्वाभिमान एवं परिश्रम पर आधारित है। गुरु जाम्भोजी जात-पांत एवं छुआछूत के विरुद्ध थे। नासमझ लोगों को इस नियम में छुआछूत दिखाई देती है जबकि ऐसा सोचना ही गलत है। जो लोग अफीम, तम्बाकू तथा मांस-मदिरा का सेवन करते हैं और प्राय: स्नान नहीं करते तथा जीव-हत्या करते रहते हैं, उनके हाथों से बना हुआ खाना अपवित्र होता है। ऐसे अपवित्र लोगों के हाथों से बने खाने की अपेक्षा स्वयं खाना बनाकर खाना चाहिये। इससे व्यक्ति को खाने की पवित्रता पर भी कोई सन्देह नहीं होगा और साथ ही भोजन बनाने के परिश्रम करने से उसे सन्तुष्टि भी होगी।

'आन सूं पलो न लावै' का अर्थ यही है कि रसोई बनाते समय संस्कारहीन, अपवित्र एवं मलीन व्यक्ति से दूर रहें। ऐसे व्यक्ति के स्पर्श से विभिन्न बीमारियां हो सकती हैं। यदि हम इस ओर ध्यान नहीं देंगे तो हमारा स्वयं का भोजन बनाना निरर्थक है। अत: इस नियम में पवित्रता एवं संस्कारों पर बल दिया है।

22. थाट को अमर रखना।

प्रारम्भ में विश्नोई पंथ के लोग गाय-भैंस के साथ-साथ भेड़-बकरियां भी पालते थे। भेड़-बकरियों के पालने के कारण उनके साथ मेढ़ों एवं बकरों का बढ़ना भी स्वाभाविक था। भेड़-बकरियां तो बहुत बड़ी मात्रा में साथ-साथ रह सकती हैं परन्तु मेढ़ों-बकरों को बड़ी मात्रा में साथ रखना कठिन था और आर्थिक दृष्टि से भी ये इतने उपयोगी नहीं थे। इसलिये इनको लोग कसाइयों को बेच देते थे और कसाई इनको मार-काटकर अपनी जीविका चलाते थे। इस तरह से बिश्नोइयों से अप्रत्यक्ष रूप से जो जीव-हत्या होती थी, उसी को रोकने के लिये थाट बनाने की व्यवस्था की गई। थाट में रहने वाले बकरों के चारे-पानी की व्यवस्था समाज की ओर से होती थी। इनको कोई मार नहीं सकता था, वे अपनी ही मौत मरते थे। बाद में बिश्नोइयों ने भेड़-बकरी पालनी बंद कर दी। अब केवल गाय-भैंस पालते हैं। जीव दया की भावना के कारण इस नियम का पालन करना आवश्यक है।

23. बैल बधिया न करावें।

गाय के बछड़े को बड़ा होने पर खसी या नपुंसक न करावें। कृषि एवं पशु पालन, बिश्नोइयों के मुख्य व्यवसाय रहे हैं। इसी कारण गाय का बछड़ा बड़ा होकर बैल बनकर हल जोतने के काम आता रहा है पर इससे पहले बछड़े को नपुंसक कराना होता था। नपुंसक बनाने का परम्परागत तरीका बछड़े के लिये बड़ा पीड़ादायक था। सन्तान की तरह बछड़े का पालन–पोषण करके, बड़ा करके उसे ऐसा कष्ट पहुँचाना लोगों के लिये सम्भव नहीं था। इसके साथ ही इस कार्य से अहिंसा का पालन भी नहीं होता था। इसलिये अपने घर में अपनी गाय के बछड़े को बधिया कराना बंद कर दिया गया। इस नियम का दृढ़ता से पालन होता रहा है। अब तो खेती भी यंत्रों से होनी प्रारम्भ हो गई है। ऐसे में इस नियम की पालन करना सरल हो गया है।

24. अमल न खावें।

अमल में अत्यधिक नशा होता है। इसके खाने से व्यक्ति को एक बार अपने शरीर में शक्ति की अनुभूति होने लगती है। उससे एक अतिरिक्त स्फूर्ति आ जाती है। इसी लालच में आकर मनुष्य इसका सेवन प्रारम्भ कर देता है और धीरे–धीरे अमल का यह नशा मनुष्य को शारीरिक एवं मानसिक रूप से कमजोर बनाना प्रारम्भ कर देता है। अमल खाने से मनुष्य अनेक प्रकार की बीमारियों का शिकार हो जाता है। आर्थिक दृष्टि से कमजोर व्यक्ति डोडा का सेवन प्रारम्भ कर देता है। अमल के इस हानिकारक रूप को देखकर ही गुरु जाम्भोजी ने इसका विरोध किया है और अमल न खाने का नियम बनाया है। इसलिये हमें इसका किसी भी रूप में सेवन नहीं करना चाहिये।

25. तम्बाकू का प्रयोग न करें।

लोग तम्बाकू का प्रयोग बीड़ी, सिगरेट, हुक्का एवं चिलम आदि के माध्यम से करते हैं। कुछ लोग इसे सूखा भी चबा लेते हैं और कुछ पान में खाते हैं। तम्बाकू चाहे जिस रूप में भी शरीर में जाये वह नशा युक्त होता है और शरीर के लिए हानिकारक है। तम्बाकू के प्रयोग से मनुष्य कई तरह की बीमारियों का शिकार हो जाता है। दमा, खांसी, टीबी एवं केंसर जैसी जानलेवा बीमारियों का एक कारण तम्बाकू भी है। इसी तरह की हानि को देखकर गुरु जाम्भोजी ने तम्बाकू के प्रयोग न करने का नियम बनाया है। आधुनिक समय में डॉक्टर एवं वैज्ञानिक भी तम्बाकू से दूर रहने की चेतावनी देते हैं। कई देशों की सरकारों ने भी तम्बाकू के प्रयोग को कानूनी अपराध घोषित कर रखा है। अतः हमें किसी भी रूप में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये और बच्चों को तम्बाकू के प्रयोग से हर स्थिति में दूर रखना चाहिये।

26. भाँग न पीवें।

भाँग भी एक नशीला पदार्थ है, जो अत्यधिक हानिकारक है। कुछ लोगों ने इसे शिवजी से

जोड़ रखा है। इसी कारण लोग शिवरात्रि को भांग का प्रयोग शिवजी के प्रसाद के रूप में करते हैं पर ऐसा सोचना गलत है। भाँग के नशे से व्यक्ति अपनी सुध-बुध खो देता है और वह पागलों जैसा व्यवहार करने लगता है। भाँग के निरन्तर प्रयोग से व्यक्ति शक्तिहीन हो जाता है। इसके अधिक प्रयोग से मनुष्य पागल हो जाता है। इसी कारण गुरु जाम्भोजी ने भाँग न पीने की बात कही है। इसलिये हमें हर स्थिति में नशे से दूर रहने की दृष्टि से भाँग का सेवन नहीं करना चाहिये।

27. मॉस न खावें।

माँस का सीधा सम्बन्ध हिंसा से है और गुरु जाम्भोजी ने हिंसा का कड़ा विरोध किया है। इसलिये हमें हर स्थिति में माँस के प्रयोग से बचना चाहिये। हिंसा के साथ-साथ माँस स्वास्थ्य की दृष्टि से भी हानिकारक है। इसी कारण आज विश्व के कई मांसाहारी देश माँस खाने पर पाबन्दी लगा रहे हैं। प्रकृति ने मनुष्य को खाने के लिये अन्न, फल, दूध, दही एवं घी आदि न जाने कितने स्वादिष्ट पदार्थ निर्मित कर रखे हैं। इनके प्रयोग से मनुष्य स्वस्थ भी रह सकता है और दीर्घायु भी हो सकता है। हमारे ऋषिमुनि जंगलों में फल खाकर ही जीवन यापन करते रहे हैं। अत: बिश्नोई होकर किसी को भी माँस का प्रयोग नहीं करना चाहिये। मांस को पूर्णत: त्यागकर हम अपने आचार-विचार, शरीर एवं मन को पवित्र रखने में सफल हो सकते हैं।

28. मदिरा न पीवें।

मदिरा मनुष्य के लिये सबसे अधिक हानिकारक है। मदिरापान से जहां मनुष्य के धन एवं स्वास्थ्य की हानि होती है, वहीं गृह-कलह के कारण परिवार की सुख व शान्ति भंग हो जाती है। शराबी की समाज में कोई इज्जत नहीं रहती। आलस्य एवं शारीरिक कमजोरी के कारण वह ऐसा अकर्मण्य हो जाता है कि उसके परिवार को आर्थिक तंगी का सामना करना पड़ता है। धन के अभाव में शराबी चोरी करने लग जाता है और वह अपराधों की दुनिया में सम्मिलित हो जाता है। उसके जीवन में अनेक बुराइयां आ जाती है और शरीर बीमारियों का घर बन जाता है। शराब के कारण ही व्यक्ति असमय में ही मौत का शिकार हो जाता है। शराबी की सन्तान बिगड़ जाती है। इन्हीं सब बुराइयों के कारण हमें मदिरा न पीने के नियम का दृढ़ता से पालन करना चाहिये।

29. नील व नीले वस्त्र का प्रयोग न करें।

नीला वस्त्र विलासिता एवं मलिनता का प्रतीक है। इसलिये प्रारम्भ से ही हमारे विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों में इसका विरोध किया गया है और कहा गया है कि कोई भी श्रेष्ठ कार्य नीले वस्त्र पहनकर नहीं किया जाना चाहिये। गुरु जाम्भोजी ने 363 मार्गों का मंथन करके बिश्नोई पंथ की स्थापना की थी और पंथ के उनतीसवें नियम में कहा है-''नील न लावै अंग, देखत दूर ही त्यागै''।

इस संसार के मानव, का यह कर्तव्य है कि वे स्वयं सुख से जीयें और दूसरों को भी सुख से जीने दें। इस नियम का जो भी उल्लंघन करता है, वह श्रेष्ठ नहीं कहा जा सकता। दूसरों को दुख देने

वाले प्राणी का भौतिक एवं पारलौकिक जीवन दुखदायी बन जाता है। नील का पौधा भी प्रकृति के इस नियम की अवहेलना करने वाला है। जिस जमीन में नील की खेती होती है वह जमीन बंजर बन जाती है। इस आधार पर भी नील त्यागने योग्य है। नीले रंग को जिस तरह से नील के पौधों से तैयार करते हैं, उसमें जीव-हत्या भी होती है। इसलिये अहिंसा का पालन न होने पर भी नील त्याज्य है।

गुरु जाम्भोजी बारह करोड़ जीवों के उद्धार हेतु आचार-विचार की पवित्रता पर बल देते रहे हैं। आचार-विचार की पवित्रता के लिये मनुष्य का पहनावा भी साफ-सुथरा एवं मैल रहित होना आवश्यक है। यह तभी सम्भव हो सकता है जब मनुष्य सफेद पहनावे का प्रयोग करें। ऐसी स्थिति में भी नीले वस्त्रों का त्याग आवश्यक है। यह रंग सूर्य के ताप को भी रोकने के स्थान पर ग्रहण करता है, जिससे नीले वस्त्र धारण करने वाला व्यक्ति कई प्रकार के चर्म रोगों का शिकार हो जाता है।

6. उपदेश काल

गुरु जाम्भोजी का इस संसार में आने का मुख्य उद्देश्य भक्त प्रहलाद को दिये हुए वचन के अनुसार बारह करोड़ जीवों का उद्धार करना था। बिश्नोई पंथ की स्थापना के बाद उन्होंने अपने इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु लोगों को उपदेश देना प्रारम्भ कर दिया था और जीवन के अन्तिम समय तक यही कार्य करते रहे। पंथ प्रवर्त्तन से गुरु जाम्भोजी की कीर्ति दूर-दूर तक फैल गई थी। इसी कारण बड़ी संख्या में लोग उनके पास ज्ञान-चर्चा एवं शंका समाधान के लिये आने प्रारम्भ हो गये थे। जन साधारण के अलावा अनेक राजा-महाराजा एवं समाज के विशिष्ट व्यक्ति भी उनके सम्पर्क में आने लग गये थे और उनके कहने से बुरे कार्यो को त्यागकर, परोपकार के रास्ते पर चलने लग गये थे। इस काल में जो राजा-महाराजा गुरु जाम्भोजी के सम्पर्क में आये थे और उनकी आज्ञा को मानते थे, उनमें सिकन्दर लोदी, मुहम्मद खां नागौरी, जैसलमेर के राव जैतसी, जोधपुर के राव सांतल, मेवाड़ के राणा सांगा एवं बीकानेर के राव लूणकरण आदि प्रमुख रहे हैं। यद्यपि गुरु जाम्भोजी का स्थायी निवास सम्भराथळ धोरा ही रहा है तथापि वे भटके हुए लोगों को उपदेश देने के लिये दूर-दूर तक भ्रमण भी करते रहे हैं। यहाँ तक कि उन्होंने खुरासान एवं लंका आदि देशों में जाकर भी उपदेश दिया था।

गुरु जाम्भोजी इकावन वर्ष तक लोगों को सुखपूर्वक जीवन जीने एवं मोक्ष-प्राप्ति का उपदेश देते रहे हैं। इस बीच उनके सम्पर्क में जो लोग आये थे, उनमें से कुछ लोगों का समय निश्चित है और कुछ का समय निश्चित नहीं है। इस दृष्टि से गुरु जाम्भोजी के इस उपदेश काल को दो भागों में बांट सकते हैं।

अ. उपदेश की वे घटनाएं, जिनका समय निश्चित है या अनुमानित है।

ब. उपदेश की वे घटनाएं, जिनका समय निश्चित नहीं है या समय का ज्ञान नहीं है।

अ. उपदेश की वे घटनाएं, जिनका समय निश्चित है या अनुमानित है।

1. ऊदोजी नैण एवं सेठ कुलचन्द राय को उपदेश देना :-

ऊदोजी मांगलोद के निवासी थे। बिश्नोई पंथ में दीक्षित होने से पूर्व ये दधिमति माता (महमाई) के मन्दिर के पुजारी थे। सिवहारा के सेठ कुलचन्द राय गुरु जाम्भोजी के दर्शनों के लिये सम्भराथळ जाया करते थे। एक बार जब वे अपने साथियों के साथ सम्भराथळ जा रहे थे तो उन्होंने दधिमति माता के मन्दिर के पास अपना डेरा लगाया। ऊदोजी ने इन्हें देवी का भक्त समझा और इनका बहुत आदर-सत्कार किया। कुलचन्द और उसके साथियों ने उधर कोई ध्यान नहीं दिया। तब ऊदोजी ने इनका परिचय पूछा। इस पर कुलचन्द ने कहा कि हम गुरु जाम्भोजी के भक्त हैं और मोक्ष प्राप्ति हेतु उनके पास सम्भराथळ जा रहे हैं। ऊदोजी ने कुलचन्द एवं उनके साथियों द्वारा गाये गये भजन एवं साखियां सुनी। प्रातः काल वे भी उनके साथ रवाना हो गये। ऊदोजी का उनके साथ जाने का प्रमुख कारण यह था कि वे जिस देवी की पूजा करते थे, वह मोक्ष प्रदान नहीं कर सकती थी। सम्भराथळ पहुंचने पर गुरु जाम्भोजी ने ऊदोजी को मूर्ति पूजा न करने का उपदेश दिया और उनके प्रति एक सबद भी कहा। गुरु जाम्भोजी के उपदेशों एवं आशीर्वाद से ऊदोजी को ज्ञान हो गया। गुरु जाम्भोजी के कहने से ऊदोजी ने वहां एक साखी भी सुनायी और वे बिश्नोई पंथ में दीक्षित हो गये। बाद में वे समाज के अति प्रसिद्ध कवि हो गये थे। ये पंथ के प्रमुख एवं प्रामाणिक व्याख्याता माने जाते हैं। भ्रमण के समय ये प्रायः गुरु जाम्भोजी के साथ रहते थे। ऐसा माना जाता है कि ऊदोजी नैण एवं सेठ कुलचन्दराय सम्वत् 1545-1550 के मध्य में गुरु जाम्भोजी से मिले थे।

2. राव सांतल की प्रार्थना पर नेतसी सोलंकी को मल्लू खॉं की कैद से मुक्त करवाना :-

नेतसी सोलंकी जोधपुर के राव सांतल का भानजा था। एक बार नेतसी सोलंकी को अजमेर के सूबेदार मल्लूखाँ ने कैद कर लिया था। राव सांतल के लिये नेतसी को छुड़वाना आवश्यक था। नेतसी की मुक्ति बिना युद्ध के सम्भव नहीं थी। राव सांतल ने अपनी यह समस्या गुरु जाम्भोजी के सामने रखी। गुरु जाम्भोजी ने मल्लूखाँ को नेतसी को मुक्त करने के लिये कहा, तो मल्लू खाँ ने गुरु जाम्भोजी की आज्ञा का पालन किया और नेतसी को अपनी कैद से मुक्त कर दिया, जिससे राव सांतल एवं मल्लूखाँ के बीच होने वाला युद्ध टल गया। यह घटना सम्वत् 1545-1548 के बीच की मानी जाती है। इतिहास में इस घटना से सम्बन्धित व्यक्तियों का मौजूद रहना प्रमाणित है। उस समय गुरु जाम्भोजी ने मल्लूखाँ को सही राह पर चलने के लिये चार 'सबद' भी कहे थे। गुरु जाम्भोजी की शिक्षा से प्रभावित होकर ही मल्लूखाँ ने अपने राज्य में गो-हत्या बंद करवा दी थी और स्वयं ने मांस खाना छोड़ दिया था। उस समय राव सांतल के प्रति भी गुरु जाम्भोजी ने दो 'सबद' कहे थे। गुरु जाम्भोजी के उपदेशों के कारण ही राव सांतल अपने राज्य में बिश्नोइयों को कर (लगान) मुक्त करना चाहते थे पर गुरु जाम्भोजी के कहने पर उन्होंने आमदनी का पांचवां भाग लेना स्वीकार कर लिया था। इसी समय गुरु जाम्भोजी ने राठौड़ों के पुरोहित मूला की भी समस्या का समाधान एक 'सबद' द्वारा किया था और मोक्ष-प्राप्ति का सरल मार्ग बताया था।

3. राव बीदा से मोती मेघवाल को छुड़वाना :-

बीदा जोधावत द्रोणपुर में रहता था और द्रोणपुर उसी के अधिकार में था। बाद में उसने अपने नाम से बीदासर बसाया था। प्रारम्भ में बीदा गुरु जाम्भोजी एवं उनकी शिक्षा को नहीं मानता था। उस समय द्रोणपुर में ही मोती मेघवाल रहता था। वह गुरु जाम्भोजी का पक्का भक्त था और उनके बताये नियमों का पालन करता था। गुरु जाम्भोजी की शक्ति परीक्षा के लिये ही बीदा ने मोती मेघवाल को बंदी बना लिया था। मोती को छुड़वाने के लिये गुरु जाम्भोजी अपने शिष्यों के साथ संभराथळ से द्रोणपुर के पास एक धोरे पर पहुंचे। उसी धोरे पर बीदा पहुंच गया। गुरु जाम्भोजी के दर्शन करते ही बीदा बहुत प्रभावित हो गया था। उसके मन में गुरु जाम्भोजी के प्रति जो बुरे विचार थे, वे सब नष्ट हो गये थे। बीदा के कहने पर गुरु जाम्भोजी ने आक पर आम, नीम पर नारियल एवं पानी का दूध बनाने के तीन चमत्कार दिखाये थे। इन चमत्कारों से प्रभावित होकर बीदा ने गुरु जाम्भोजी से यह प्रार्थना की थी कि मैं आपको एक ही समय में एक रूप में अनेक स्थानों पर देखना चाहता हूं। गुरु जाम्भोजी ने बीदा की इस प्रार्थना को स्वीकार करके बीदा के आदमियों को अलग-अलग स्थानों पर एक ही समय में अपने एक ही रूप में दर्शन दिये। इससे प्रभावित होकर बीदा ने गुरु जाम्भोजी से क्षमा मांगी और मोती को अपनी कैद से मुक्त कर दिया। तभी गुरु जाम्भोजी ने बीदा को सबदवाणी के 'शुक्ल हंस' सबद द्वारा उपदेश दिया था। तब से बीदा गुरु जाम्भोजी का पक्का भक्त बन गया था। इस घटना का अनुमानित समय सम्वत् 1550-1555 के मध्य होना चाहिये।

4. मुहम्मदखाँ नागौरी और राव लूणकरण को उपदेश देना :-

गुरु जाम्भोजी के समय में नागौर के शासक मुहम्मदखाँ नागौरी थे और बीकानेर के राजा लूणकरण थे। इन दोनों को गुरु जाम्भोजी ने उपदेश दिया था और उन्हें जीवन का सच्चा रास्ता बताया था। ये दोनों ही अपनी-अपनी समस्याओं के लिये गुरु जाम्भोजी से मिले थे और उनके उपदेशों से प्रभावित हुए थे। एक बार मुहम्मद खाँ नागौरी स्वयं गुरु जाम्भोजी से मिला था। तब गुरु जाम्भोजी ने उसे कई सबदों द्वारा उपदेश दिया था। एक बार मुहम्मद खां एवं राव लूणकरण ने अपने काजी एवं पुरोहित को गुरु जाम्भोजी के पास भेजा था। काजी और पुरोहित के भेजने का प्रमुख उद्देश्य यह था कि ये दोनों यह जानना चाहते थे कि गुरु जाम्भोजी मुसलमानों के पीर हैं या हिन्दुओं के देव हैं। गुरु जाम्भोजी ने काजी और पुरोहित को अलग-अलग कई सबदों द्वारा समझाया था और बताया कि वे सच्चे मुसलमानों के पीर व सच्चे हिन्दुओं के देव हैं। यह घटना सम्वत् 1563 के आस-पास की मानी जाती है।

5. सिकन्दर लोदी की कैद से हासम-कासम को छुड़वाना :-

गुरु जाम्भोजी ने दिल्ली के बादशाह सिकन्दर लोदी को भी उपदेश दिया था और उन्हें जीवन का सच्चा रास्ता बताया था। स्वयं गुरु जाम्भोजी ने अपने एक सबद में सिकन्दर लोदी को चेताने की बात कही है। कहते है कि दिल्ली में हासम-कासम नाम के दो दर्जी रहते थे। ये दोनों सगे भाई थे और

गुरु जाम्भोजी के पक्के शिष्य थे। ये जाति के मुसलमान थे और दर्जी का काम करते थे। बिश्नोइयों से प्रभावित होकर ही इन्होंने गुरु जाम्भोजी को अपना गुरु मान लिया था। ये गुरु जाम्भोजी के दर्शन के लिये संभराथल भी गये थे। इन्होंने अपना आचरण गुरु जाम्भोजी के कहे अनुसार बना लिया था। इसी कारण इन्होंने मुसलमानों के हाथ का बना भोजन खाना छोड़ दिया था। इसी बात की शिकायत किसी ने बादशाह सिकन्दर से कर दी थी। शिकायत को सुनकर बादशाह बहुत नाराज हो गया था और इन दोनों को जेल में डाल दिया। जेल में इन्हें खाने को मांस दिया गया, जिसे इन्होंने ग्रहण नहीं किया। अपने भक्तों के दुख को देखकर गुरु जाम्भोजी, रणधीरजी को अपने साथ लेकर दिल्ली पहुंचे थे और सिकन्दर की कैद से हासम–कासम को मुक्त करवाया। उसी समय गुरु जाम्भोजी ने सिकन्दर लोदी को उपदेश दिया। गुरु जाम्भोजी के उपदेशों से प्रभावित होकर ही सिकन्दर लोदी ने हक की कमाई पर जीवन व्यतीत करना प्रारम्भ कर दिया था। उनकी शिक्षा से ही सिकन्दर लोदी ने क्रूरता एवं हिंसा का मार्ग त्याग दिया था और उन्होंने गुरु जाम्भोजी में श्रद्धा रखनी प्रारम्भ कर दी थी। यह घटना सम्वत् 1563 की मानी जाती है।

6. कर्नाटक के शेख सद्दो एवं मुल्तान के सधारी मुल्ला को उपदेश देना एवं गो–हत्या बंद करवाना :–

गुरु जाम्भोजी अहिंसा के प्रबल समर्थक थे। वे चाहते थे कि मनुष्य मन, वचन एवं कर्म से अहिंसा का पालन करे। इसी दृष्टि से ही उन्होंने बिश्नोई पंथ के उनतीस नियम बनाये थे। उन्होंने विभिन्न स्थानों पर भ्रमण करके अहिंसा का उपदेश दिया था और लोगों से गो–हत्या बंद करवायी थी। उनके समय में कर्नाटक के शेख सद्दो भी अनेक गायें मारकर उनका मांस भूखे मुसलमानों को खिलाता था। गुरु जाम्भोजी ने उसे उपदेश देकर उससे गो–हत्या बंद करवायी थी। गुरु जाम्भोजी के उपदेशों से प्रभावित होकर ही शेख सद्दो एवं उनके साथियों ने हमेशा के लिये गो–हत्या बंद कर दी थी। मुल्तान का सधारी मुल्ला भी जांभोजी के उपदेशों से प्रभावित हो गया था। कहा जाता है कि शेख सद्दो एवं सधारी मुल्ला के प्रति गुरु जाम्भोजी ने दो–दो सबद कहे थे और उन्हें अहिंसा के रास्ते पर चलने के लिये प्रेरित किया था।

7. जैसलमेर के रावल जैतसी को अहिंसा एवं परोपकार के रास्ते पर चलने का उपदेश :–

जैसलमेर के रावल जैतसी, मालदेव के पुत्र थे और गुरु जाम्भोजी के परम भक्त थे। कहते हैं कि रावल जैतसी गुरु जाम्भोजी की कृपा से कुष्ठ रोग से मुक्त हो गये थे। इसी कृपा के कारण रावल जैतसी गुरु जाम्भोजी को बहुत मानते थे। रावल जैतसी ने जैतसमन्द तालाब बनाया था। इसी तालाब के उद्यापन पर जैतसी ने गुरु जाम्भोजी को अपने यहां आने का निमन्त्रण दिया था और उनसे एक यज्ञ करवाया था। रावल जैतसी ने यह यज्ञ सम्वत् 1570 के आस–पास करवाया था। उस समय गुरु जाम्भोजी ने रावल जैतसी को एक सबद द्वारा उपदेश भी दिया था। गुरु जाम्भोजी के उपदेश से

प्रभावित होकर ही रावल जैतसी ने अपने राज्य में कुछ नियम लागू करने की प्रार्थना गुरु जाम्भोजी से की थी। इस पर गुरु जाम्भोजी ने जैतसी को निम्नलिखित नियम मानने का उपदेश दिया था।

1. जीवों का वध मत करो।
2. अपने राज्य में शिकारियों को शिकार न करने दो और उन्हें 'कुड़का' मत रोपने दो।
3. चोरों को उचित दण्ड की व्यवस्था हो तथा तालाब का पानी सभी के लिये सुलभ हो।
4. अपने राज्य में बिश्नोइयों से 'जगात कर' कभी नहीं लेना।

राजा जैतसी ने गुरु जाम्भोजी के सामने इन सभी नियमों को लागू करने का प्रण किया था। इन नियमों के साथ-साथ उन्होंने अपने राज्य में खरींगा गांव में लक्ष्मण और पांडू नामक दो बिश्नोइयों को भी बसाया था।

8. राणा सांगा एवं झाली रानी द्वारा गुरु जाम्भोजी की आज्ञा मानना :-

मेवाड़ के राणा सांगा और उनकी माता झाली रानी गुरु जाम्भोजी के विचारों से बहुत प्रभावित थे। गुरु जाम्भोजी के उपदेशों से प्रभावित होकर वे उनकी आज्ञा का पालन करते थे। गुरु जाम्भोजी की शिक्षा के कारण ही राणा सांगा ने अपने राज्य में बिश्नोइयों के लिये चुंगी माफ कर रखी थी।

जाम्भाणी साहित्य में लिखा है कि एक बार पूरब के कुछ बिश्नोई व्यापारी बैलगाड़ियों में माल लादकर चित्तौड़ पहुँचे थे। वहाँ उन्होंने माल बेचा तो वहाँ के राज-कर्मचारियों ने उनसे चुंगी मांगी, इस पर उन्होंने कहा कि हम गुरु जाम्भोजी के शिष्य हैं और हमारी चुंगी माफ है। इस बात को लेकर दोनों पक्षों में विवाद हो गया। तब राज कर्मचारियों ने इन्हें झाली रानी के सामने पेश किया। झाली रानी ने कहा कि यदि गुरु जाम्भोजी चुंगी न लेने के लिये कह देंगे तो आपसे चुंगी नहीं ली जायेगी। इस पर झाली रानी ने अपने दो विश्वास पात्र सेवकों को दो बिश्नोइयों के साथ सम्भराथळ भेजा। वहाँ पहुँचकर उन्होंने गुरु जाम्भोजी को सारी घटना सुनायी, तब गुरु जाम्भोजी ने सेवकों से बिश्नोइयों से चुंगी न लेने की बात कही और साथ ही में रानी के प्रति एक 'सबद' कहा। उन्होंने सेवकों से कहा कि यह 'सबद' रानी को सुना देना, जिससे रानी को अपना पूर्व जन्म याद आ जायेगा। इसके साथ ही गुरु जाम्भोजी ने सोवन नगरी से लायी गई वस्तुओं में से झारी, माला एवं सुलझाणी आदि वस्तुएं भी रानी के लिये भेंट स्वरूप भेजी। यह घटना सम्वत् 1572 के आस-पास की मानी जाती है। तभी से राणा सांगा एवं झाली रानी गुरु जाम्भोजी की आज्ञा का पालन करने लग गये थे। बाद में राणा सांगा भी गुरु जाम्भोजी से मिलने सम्भराथळ पर गये थे। वहाँ उन्होंने अपने राज्य में बिश्नोइयों को बसाने की प्रार्थना गुरु जाम्भोजी से की थी। इस पर गुरु जाम्भोजी ने आज्ञा दी कि पूर्व के जो व्यापारी तुम्हारे राज्य में आये थे, उन्हीं को ही अपने राज्य में बसा लो। इसी आधार पर भीलवाड़ा, पुर, दरीबा, संभेलिया आदि गांवों में बिश्नोई बस गये थे। कहते हैं कि बाद में झाली रानी जाम्भोळाव तालाब की खुदाई के समय स्वयं वहां गयी थी और तालाब के लिये धन भी दिया था।

9. बीकानेर के राव बीकाजी तथा राव लूणकरण को उपदेश :-

बीकानेर के संस्थापक राव बीकाजी गुरु जाम्भोजी से बहुत प्रभावित थे और वे उनके दर्शनार्थ तथा उपदेश सुनने संभराथळ जाया करते थे। इसी तरह बीकानेर के राव लूणकरण भी गुरु जाम्भोजी के शिष्य थे और उनकी आज्ञा का पालन करते थे। नारनौल के युद्ध में जाते समय राव लूणकरण एवं उनके पुत्र कुंवर जैतसी ने गुरु जाम्भोजी से भेंट की थी। गुरु जाम्भोजी ने राव लूणकरण को नारनौल के युद्ध में न जाने की सलाह दी थी, जिससे राव लूणकरण गुरु जाम्भोजी से कुछ नाराज भी हो गये थे। राव लूणकरण ने अपने पुत्र कुंवर जैतसी को न तो घोड़ा दिया था और न ही अपने साथ युद्ध में ले गये थे। उनके दूसरे पुत्र प्रताप सी के पास घोड़ा भी था और वह युद्ध में भी गया था। इससे कुंवर जैतसी राव लूणकरण से बहुत नाराज थे। इस घटना के बाद गुरु जाम्भोजी ने कुंवर जैतसी को बहुत समझाया था और उन्हें बीकानेर राज्य प्राप्ति का आशीर्वाद भी दिया था। इस समय गुरु जाम्भोजी ने कुछ सबदों द्वारा जैतसी को शिक्षा भी दी थी। यह घटना सम्वत् 1583 की मानी जाती है।

10. जोधपुर के कुंवर मालदेव एवं मूला पुरोहित को उपदेश देना :-

मूला पुरोहित जोधपुर के राठौड़ों का पुरोहित था। जब जोधपुर के राव सांतल ने नेतसी सोलंकी को मल्लूखां की कैद से मुक्त करवाया था, तब मूला पुरोहित भी उनके साथ था। उस समय गुरु जाम्भोजी के व्यक्तित्व एवं शिक्षा से मूला पुरोहित बहुत प्रभावित हो गया था। अपने दुख से मुक्त होने के लिये वह जाम्भोळाव पर गुरु जाम्भोजी से मिला था। तब गुरु जाम्भोजी ने मूला पुरोहित को एक सबद द्वारा समझाया था। मूला पुरोहित ने ही जोधपुर के दरबार में गुरु जाम्भोजी की महिमा का वर्णन किया था। इस महिमा को सुनकर जोधपुर के कुंवर मालदेव गुरु जाम्भोजी से बहुत प्रभावित हो गये थे और इसी कारण मालदेव ने लोहावट में गुरु जाम्भोजी से भेंट की थी। यहीं पर मालदेव ने गुरु जाम्भोजी से तीन प्रश्न पूछे थे, जिनके उत्तर में गुरु जाम्भोजी ने तीन सबद कहे थे। यह घटना सम्वत् 1584 के आसपास की मानी जाती है।

ब. उपदेश की वे घटनाएँ, जिनका समय निश्चित नहीं हैं या समय का ज्ञान नहीं है :-

1. सैंसा जोखाणी को अहं न करने का उपदेश देना :-

सैंसा नाथूसर गांव का रहने वाला था। वह अपने को गुरु जाम्भोजी का भक्त मानता था। अपने क्षेत्र में सैंसा एक दानी के रूप में प्रसिद्ध था। एक बार गुरु जाम्भोजी झींझाले धोरे पर अपना आसन लगाये हुए थे। सैंसा प्रायः गुरु जाम्भोजी के पास उपदेश सुनने जाया करता था। उसे जब भी मौका मिलता तब वह अपनी दानशीलता का अवश्य ही वर्णन करता था। गुरु जाम्भोजी को सैंसा की यह आदत अच्छी नहीं लगती थी। उन्हें सैंसा की बातों में अहं दिखाई देता था। गुरु जाम्भोजी सैंसा को इस आदत से मुक्त करना चाहते थे। इसलिये गुरु जाम्भोजी एक दिन वेश बदलकर सैंसा की

दानवीरता की परीक्षा लेने के लिये उसके घर पहुंच गये। वहां पहुंचकर गुरु जाम्भोजी ने अलख–अलख की आवाज लगाई। घर के सभी लोग अपने–अपने काम में लगे हुए थे। इसलिये किसी ने भी गुरु जाम्भोजी की आवाज पर ध्यान नहीं दिया परन्तु गुरु जाम्भोजी वहां से हटे नहीं। वे निरन्तर आवाज लगाते रहे तब उन्हें द्वार से हटाने के उद्देश्य से सैंसे की पत्नी ने उन्हें बासी धान डाल दिया। बासी धान एवं उसकी खुरचन डालते समय जरड़ी के ठरकाने से गुरु जाम्भोजी के भिक्षा–पात्र का किनारा खंडित हो गया था। कहते हैं कि वही खंडित भिक्षा–पात्र आज जांगलू के मन्दिर में रखा हुआ है। उसके बाद गुरु जाम्भोजी ने सर्दी से बचने के लिये वस्त्र मांगा। इस पर किसी ने उन्हें वहां से हटाने के लिये जोर का धक्का दिया पर गुरु जाम्भोजी वहां से हटे नहीं। वे बराबर वस्त्र की मांग करते ही रहे। तब तंग आकर सैंसा ने उन्हें एक फटा–पुराना वस्त्र दिया। इन दोनों वस्तुओं को लेकर गुरु जाम्भोजी झींझाले धोरे पर आ गये।

अगले दिन जब सैंसा गुरु जाम्भोजी के पास पहुँचा तब उसने फिर अपनी दानवीरता की प्रशंसा करनी प्रारम्भ कर दी, इस पर गुरु जाम्भोजी ने उसे और वहाँ उपस्थित सभी लोगों को उसकी दी हुई दोनों वस्तुएँ दिखाई। इस पर सैंसा बड़ा लज्जित हुआ। इस तरह गुरु जाम्भोजी ने सैंसा का अहं दूर किया। सबदवाणी के दो सबद सैंसा को ही सम्बोधित करके कहे हुए हैं। इन सबदों में गुरु जाम्भोजी ने यही समझाया है कि कोई भी व्यक्ति अपनी किसी भी प्रकार की शक्ति पर अहं करके मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता। इस संसार में रहते हुए मनुष्य की आयु निरन्तर घटती जा रही है। ऐसे में ईश्वर प्राप्ति के लिये सच्चा प्रयास न करने वाले की प्रत्येक सांस कसूरवार है।

2. बाजा तरड़ को अहिंसा के रास्ते पर चलने का उपदेश :-

बाजा तरड़ जसरासर गांव का रहने वाला था। वह गुरु जाम्भोजी का भक्त था और उनकी आज्ञा का पालन करता था। एक बार उसने विशाल भोज का आयोजन किया। भोज सम्पूर्ण होने पर वह गुरु जाम्भोजी के पास गया और उनसे पूछने लगा कि मेरा यह कार्य आपको कैसा लगा? गुरु जाम्भोजी ने उसके इस कार्य को अच्छा नहीं माना और कहा कि जिस काम के करने से पेड़–पौधों का विनाश होता हो और जिसमें पात्र–कुपात्र का ध्यान रखे बिना दान दिया जाता हो, वह कार्य अच्छा हो ही नहीं सकता। गुरु जाम्भोजी की बात को सुनकर बाजा तरड़ को बड़ा दुख हुआ। उसने तो यही सोचा था कि गुरु जाम्भोजी उसके भोज और दान की बात को सुनकर बड़े खुश होंगे पर ऐसा नहीं हुआ। तब उसने गुरु जाम्भोजी के आदेशानुसार एक दूसरे यज्ञ का आयोजन किया, जिसमें उसने गुरु जाम्भोजी को भी बुलाया था। तभी गुरु जाम्भोजी ने एक सबद द्वारा बाजा तरड़ को उपदेश दिया था।

3. रणधीर बाबल व चार अन्य भक्तों को सशरीर सोवन नगरी दिखाना :-

रणधीर जी बाबल गुरु जाम्भोजी के बहुत ही प्रिय शिष्य थे। भ्रमण के समय वे गुरु जाम्भोजी के साथ ही रहते थे। जब गुरु जाम्भोजी सम्भराथळ पर रहते थे तब रणधीर जी भी वहीं रहते थे। एक

बार गंगापार के कुछ बिश्नोइयों के साथ भींया भी सम्भराथळ पहुंचा था। वह गुरु जाम्भोजी को विष्णु नहीं मानता था। गुरु जाम्भोजी ने भींया को अनेक प्रकार से विश्वास दिलाया था और बताया था कि यह सम्भराथळ सोवन नगरी है और वे उसके स्वामी हैं। इस पर भींये ने कहा कि मुझे आप प्रत्यक्ष रूप में सोवन नगरी दिखावो तभी मुझे आपके विष्णु होने का विश्वास होगा। भींये के विश्वास के लिये गुरु जाम्भोजी अपने प्रिय शिष्य रणधीर जी बाबल, खींयो, भींयो, दुरजन और सैंसो को अपने साथ सोवन नगरी दिखाने के लिये ले गये थे। सम्भराथळ धोरे के पूर्व की ओर जहां लोग आजकल तालाब से मिट्टी निकालते हैं, वहीं से मिट्टी हटाकर गुरु जाम्भोजी ने इन पाँचों के साथ सोवन नगरी में प्रवेश किया था। सोवन नगरी को देखकर भींये को गुरु जाम्भोजी के विष्णु होने का पूर्ण विश्वास हो गया था। यद्यपि गुरु जाम्भोजी ने इन पाँचों को सोवन नगरी से कुछ भी न उठाने के लिये कहा था तथापि रणधीर जी वहां से सोने की एक सिलम उठा लाये थे। उसे देखकर गुरु जाम्भोजी ने कहा कि यह तुमने अच्छा नहीं किया। यदि तुम इसका उपयोग परोपकार के लिये करोगे तो कुछ प्रायश्चित हो सकता है और यह कभी समाप्त नहीं होगी। अपना शरीर त्यागने के पूर्व गुरु जाम्भोजी ने रणधीर जी को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया था और उन्हें एक विष मारन मुद्रिका (मूंदड़ा) दी थी, जिससे उन्हें कोई विष देकर न मार सके। कहते हैं कि उसी सिलम से रणधीर जी ने मुकाम का मन्दिर बनवाया था। बाद में किसी ने धोखे से वह मूंदड़ा रणधीर जी से ले लिया था और उन्हें विष देकर मार डाला था।

4. लोहा पांगल को उपदेश देना और उसे बिश्नोई पंथ में दीक्षित करना :-

गुरु जाम्भोजी के समय में मरुस्थल में नाथ पंथ के योगियों का बहुत प्रभाव था। वे चमत्कार प्रदर्शन एवं जंत्र-मंत्र से लोगों को गुमराह करते रहते थे। ये गुरु जाम्भोजी के विरुद्ध भी प्रचार करते रहते थे। गुरु जाम्भोजी ने इन लोगों को सही राह पर लाने के बहुत प्रयास किये थे। इसी कारण उन्होंने नाथ पंथ के योगियों को इक्कीस सबदों द्वारा उपदेश दिया था। उनके उपदेशों के कारण ही अनेक नाथ एवं उनके नेता गुरु जाम्भोजी के शिष्य बन गये थे। लोहा पांगल भी अति प्रसिद्ध नाथ था और उसके सैकड़ों शिष्य थे। वह इनके साथ दूर-दूर तक घूमता रहता था और लोगों को अपने चमत्कार से प्रभावित करता रहता था। वह लोहे का कच्छ पहनता था। इसलिये वह लोहा पांगल के नाम से प्रसिद्ध था। किसी संत ने ही उसे यह कहा था कि जब तुम्हें कोई सच्चा सत् पुरुष मिल जायेगा तब इस लोह-कच्छ की कड़ियाँ अपने आप झड़ जायेगी। लोहा पांगल ने गुरु जाम्भोजी के सामने अपनी शक्ति दिखाने के बहुत प्रयास किये थे और कई चमत्कार दिखाये थे पर अन्त में उसे गुरु जाम्भोजी के सामने हार माननी पड़ी थी। उसी समय उसके लोह-कच्छ की कड़ियाँ भी झड़ गई थी और वह नाथ-पंथ की वेशभूषा को छोड़कर गुरु जाम्भोजी का शिष्य बन गया था। गुरु जाम्भोजी ने उसे रूपा नाम देकर बिश्नोई पंथ में दीक्षित किया और उसे धरनोक गांव की प्याऊ पर बैठा दिया। बाद में उसे खींदासर गांव का भंडारी बना दिया था।

5. ऊदो-अतली की अतिथि सेवा :-

मेड़तावाटी क्षेत्र के पंडवाला गांव में अतिथि सेवा प्रेमी ऊदो-अतली (पति-पत्नी) रहते थे। वे गुरु जाम्भोजी के बताये हुए रास्ते पर चलते थे और सच्चे भाव से घर आये अतिथियों की सेवा करते थे। पंडवाला गाँव में अतिथि सेवा से पूर्ण सन्तुष्ट न होने पर वे हिंगुणिये गाँव में चले गये और वहां से कूदसूं पहुँच गये। कूदसूं में रहते हुए कुसंगति के कारण इनके मन में सेवा भाव कम हो गया, जिससे इनके पास धन का भी अभाव हो गया था। तब ये गुरु जाम्भोजी से मिले और उनके आशीर्वाद एवं आज्ञा से पारवा गांव में पहुँच गये। यहां इन्हें गंगापार के बिश्नोईयों की सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ। गुरु जाम्भोजी ने भी वेश बदलकर ऊदो-अतली की अतिथि सेवा की परीक्षा ली, जिसमें वे सफल रहे थे। बाद में गुरु जाम्भोजी ने उन्हें मोक्ष प्राप्ति का वरदान दिया था और उनके प्रति एक सबद भी कहा था।

इन राजा-महाराजाओं एवं समाज के प्रतिष्ठित व्यक्तियों के अतिरिक्त और भी अनेक व्यक्ति गुरु जाम्भोजी के सम्पर्क में आये थे और उनसे शिक्षा ग्रहण की थी पर विस्तार भय के कारण उन सबका वर्णन करना सम्भव नहीं है। चारण जाति के अल्लूजी, कान्हाजी, तेजाजी तथा कोल्हाजी आदि गुरु जाम्भोजी की कृपा से अपना मन वांछित फल प्राप्त करने में सफल हुए थे और उनके बताये हुए मार्ग पर चलते रहे। रावण-गोयंद भी गुरु जाम्भोजी के प्रभाव से डाकू कर्म से मुक्त हो गये थे और वे गुरु जाम्भोजी के शिष्य बन गये थे।

7. गुरु जाम्भोजी की यात्राएँ

गुरु जाम्भोजी का स्थायी निवास सम्भराथळ धोरा ही रहा है। सम्भराथळ पर ही उन्होंने बिश्नोई पंथ की स्थापना की थी। बिश्नोई पंथ की स्थापना के बाद यहीं रहकर वे लोगों को ज्ञान का उपदेश देकर उनकी शंकाओं का समाधान करते रहे हैं। वे कहीं जाते भी थे तो लौटकर यहीं आते थे। इसके साथ-साथ वे समय-समय पर लोगों को युक्ति-पूर्वक जीवन जीने एवं मोक्ष प्राप्ति की शिक्षा देने के उद्देश्य से अपने शिष्यों के साथ दूर-दूर तक भ्रमण करते रहते थे। गुरु जाम्भोजी का भ्रमण क्षेत्र बहुत विस्तृत रहा है। वे देश विदेश में अनेक स्थानों पर भ्रमण करके लोगों को अहिंसा एवं परोपकार के रास्ते पर चलने के लिये प्रेरित करते रहे हैं। उन्होंने 'सुक्ल हंस' सबद में छापर, द्रोणपुर, रणथम्भौर, कश्मीर, कच्छ, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र, तैलंगाना, दिल्ली, कोंकण, गुजरात, मालवा, खुरासान एवं लंका आदि स्थानों पर भ्रमण करने का वर्णन किया है। एक ओर वे अपने भक्तों पर आये संकट को दूर करने हेतु उस स्थान विशेष पर जाते थे तो दूसरी ओर अपने भक्तों की प्रार्थना पर उनके निवास स्थान

पर पहुंचकर लोगों को उपदेश देते रहे हैं। अपने भक्त हासम-कासम के कष्टों को दूर करने के लिये वे दिल्ली गये थे। वहाँ सिकन्दर लोदी को उपदेश देकर उसे जीवन का सही रास्ता दिखाया था और हासम-कासम को छुड़ाया था। जैसलमेर के राव जैतसी की प्रार्थना पर वे जैसलमेर गये थे। इसी तरह वे रोटू में जोखे भादू की बेटी उमा (नौरंगी) को भात भरने गये थे। कहते हैं कि लोगों को जीवन का सही मार्ग बताने और उन्हें मोक्ष दिलाने हेतु गुरु जाम्भोजी ने योजनाबद्ध ढ़ंग से अपने शिष्यों के साथ तीन बार यात्राएँ की थी। जंभसार में इन यात्राओं का विस्तृत वर्णन है। यात्रा के समय उनके साथ उनके शिष्य, सन्त-महात्मा एवं भक्त हजारों की संख्या में रहते थे। इन यात्राओं में वे कई स्थानों पर तो बहुत कम ठहरे थे और कई स्थानों पर उन्होंने कई दिन व्यतीत किये थे।

गुरु जाम्भोजी के समय में मक्का-मदीना, काबुल एवं मुल्तान आदि स्थानों पर अबाध रूप से जीव-हत्या होती थी और वहां के लोग मांस खाते थे। इस जीव-हत्या को रोकने के लिये वे मक्का-मदीना, काबुल एवं मुल्तान गये थे। वहां उन्होंने पाखंडी एवं जीव हत्या करने वालों को अपने उपदेशों एवं विभिन्न चमत्कारों के द्वारा अपने ईश्वरीय रूप का विश्वास दिलाया था और उनसे जीव-हत्या बंद करवायी थी। इसके साथ-साथ गुरु जाम्भोजी ने वहाँ के अनेक लोगों को बिश्नोई पंथ में दीक्षित किया था। गुरु जाम्भोजी अपने भ्रमण काल में नगीना, बिजनौर, महमदपुर, लोदीपुर, लखनऊ, कन्नौज, कानपुर, काशी, आगरा, अवध के साथ-साथ हांसी, हिसार, मलेर कोटड़ा, लाहौर, कर्नाटक आदि स्थानों पर गये थे। मरुप्रदेश गुरु जाम्भोजी का मुख्य उपदेश स्थल रहा है। इसलिये उन्होंने यहां के पुर, दरीबा, संभेलिया, मेवाड़, रामड़ावास, लोहावट, जाम्भोळाव, जोधपुर, जैसलमेर, बीकानेर, चित्तौड़, अजमेर एवं अलवर आदि स्थानों की यात्राएँ की थी। इन स्थानों के अतिरिक्त भी गुरु जाम्भोजी देश के अनेक स्थानों पर गये थे पर उन सबका वर्णन करना यहां संभव नहीं है।

8. निर्वाण

गुरु जाम्भोजी इस संसार में बारह करोड़ जीवों के उद्धार हेतु आये थे। सम्भराथळ पर रहते हुए जब उन्हें यह लगा कि उनका यह कार्य पूरा हो गया है तो उन्होंने इस भौतिक संसार को त्यागने के बारे में सोचा। एक दिन उन्होंने अपने प्रिय शिष्यों को अपने पास बुलाया और उनके सामने इस संसार से जाने की इच्छा प्रकट की। तब उन्होंने अपने कुछ शिष्यों को महंत नियुक्त किया और कुछ को उनका सहायक बनाया। अपने शिष्यों को महंत नियुक्त करने की योजना के अनुसार गुरु जाम्भोजी ने रेड़ोजी को काली पोशाक के संतों का महंत नियुक्त किया। रणधीर जी को भगवीं पोशाक के संतों का महंत और निहालदास को लाल पोशाक के संतों का महंत नियुक्त किया। गुरु जाम्भोजी ने सफेद पोशाक एक सन्दूक में रख दी। शिष्यों ने जब पूछा कि यह किसके लिये है तो गुरु जाम्भोजी ने कहा कि आज से आठ वर्ष बाद एक

बालक आयेगा, यह पोशाक आप उसको दे देना। शिष्यों ने पूछा कि हम उसको कैसे पहचानेंगे ? तब गुरु जाम्भोजी ने कहा कि आप उन्हें मेरे सबदों को सुनाना, एक बार सुनने के बाद उसे वे सबद याद हो जायेंगे और वह उन्हें बोलने लगेगा। यही उसकी पहचान होगी। आगे पंथ को वही चलायेगा। सफेद पोशाक वाला यह सन्दूक आप उसको दे देना और उसे पंथ में दीक्षित कर लेना।पंथ को आगे बढ़ाने और उसके प्रचार–प्रसार के सम्बन्ध में गुरु जाम्भोजी ने अनेक बातें अपने शिष्यों को बतायी। इसके बाद वे शिष्य मंडली के साथ सम्भराथळ से चलकर लालासर गांव के पास ही जंगल में स्थित एक कंकेड़ी के पास आकर विराजमान हो गये। लालासर साथरी की इसी हरी कंकेड़ी के नीचे गुरु जाम्भोजी ने सम्वत् 1593 की मार्गशीर्ष वदि नवमी को अपना भौतिक शरीर त्याग दिया था। कहते हैं कि गुरु जाम्भोजी के शरीर त्यागने के साथ ही उनके अनेक शिष्यों ने स्वेच्छा से अपने–अपने प्राण त्याग दिये थे। गुरु जाम्भोजी की इच्छा के अनुकूल ही उनके शिष्य एवं अन्य बहुत से लोगों ने उनके भौतिक शरीर को लेकर लालासर की साथरी से जाम्भोळाव के लिये प्रस्थान किया पर वे जब तालवा गांव में पहुंचे तो वहां बीकानेर के राजा जैतसी ने उनके राज्य के देव को वहीं समाधि देने का निवेदन किया। सभी लोगों ने विचार विमर्श करके एकादशी के दिन तालवा गांव के पास (वर्तमान मुकाम) गुरु जाम्भोजी के शरीर को समाधिस्थ कर दिया। गुरु जाम्भोजी का अन्तिम मुकाम होने के कारण ही उनका समाधि क्षेत्र मुकाम गांव के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

9. निज मन्दिर का निर्माण

सम्वत् 1593 की पोह सुदि दूज सोमवार को निज मन्दिर की नींव रखी गई और सम्वत् 1597 की चैत्र सुदि सप्तमी शुक्रवार को मन्दिर का निर्माण कार्य पूरा हो गया था। मन्दिर का निर्माण कार्य रणधीर जी ने अपने एवं जन सहयोग के धन से पूरा करवाया था। इसके साथ यह भी कहा जाता है कि रणधीरजी ने सोवन नगरी से प्राप्त सोने की सिलम से इसका निर्माण करवाया था और इसी के लालच में किसी ने उन्हें जहर देकर मरवा डाला था। उस समय मन्दिर का कार्य रोळ (नागौर) के मुसलमान कारीगर कर रहे थे। इस घटना से सारा कार्य अस्त–व्यस्त हो गया था। बाद में चैने ने मन्दिर पर कब्जा करने के लिये अपने भाई मेहोजी को मरवाने की योजना बनाई पर मेहोजी पहले ही मन्दिर से गुरु जाम्भोजी की टोपी, चोला एवं चींपी (भिक्षा–पात्र) लेकर जांगलू चले गये। बाद में टोपी तो मुकाम के थापनों को वापस दे दी गई। इस घटना के बाद में जांगलू के बरसिंह बणियाल के पुत्र स्याणोजी के नेतृत्व में नाथोजी एवं रेड़ोजी के सहयोग से बिश्नोइयों ने मन्दिर की प्रबंध व्यवस्था अपने हाथों में ले ली। कहते हैं कि सम्वत् 1600 में कार्तिक शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा को बिश्नोइयों की

पंचायत ने मन्दिर पर मकराने पत्थर का कलश चढ़ाया और वहां विधिवत् हवन एवं पूजा-अर्चना प्रारम्भ की, जो आज तक चल रही है। अब समाज ने समाधि पर बने मन्दिर को करोड़ों रुपये खर्च करके और भव्य बना दिया है, जिसमें सर्वाधिक योगदान बिश्नोई रत्न स्व. चौ. भजनलाल जी का रहा है।

10. सबदवाणी

गुरु जाम्भोजी के द्वारा कहे गये सबदों के संग्रह का नाम सबदवाणी है। इसे जम्भवाणी भी कहते हैं। गुरु जाम्भोजी ने सात वर्ष की आयु में नागौर के तांत्रिक के पाखंड के विरोध में प्रथम सबद कहा था। सात वर्ष की अवस्था से लेकर निर्वाण तक गुरु जाम्भोजी ने लोगों को उपदेश देने के लिये अनेक सबद कहे थे। इन्हीं सबदों का संग्रह सबदवाणी है। सबदवाणी का प्रमुख विषय ज्ञान का उपदेश देना है। इसका मुख्य उद्देश्य आत्म ज्ञान और लोक कल्याण है। गुरु जाम्भोजी अपने सम्पूर्ण जीवन में लोगों की विभिन्न शंकाओं को दूर करते रहे हैं और भटके हुए लोगों को जीवन का सही मार्ग बताते रहे हैं। इसके साथ-साथ वे लोगों को मोक्ष प्राप्ति के लिये प्रेरित करते रहे हैं। गुरु जाम्भोजी का इस संसार में आने का मुख्य उद्देश्य ही बारह करोड़ जीवों का उद्धार करना था। इस दृष्टि से उनके लिये लोगों के आचार-विचार को शुद्ध करके उन्हें मोक्ष दिलाना आवश्यक था। इन सब कार्यो के लिये गुरु जाम्भोजी ने अनेक सबद कहे थे पर आज उनके द्वारा कहे हुए 120 सबद एवं कुछ मंत्र ही उपलब्ध हैं। मौखिक प्रवृत्ति के कारण उनके द्वारा कहे गये कुछ सबदों को लोग भूल गये और वे काल में समाहित हो गये। इस तरह सबदवाणी का रचनाकाल सम्वत् 1515 से 1593 तक का है।

गुरु जाम्भोजी द्वारा कहे गये सबदों का उनके समय में ही एक विशेष लय के साथ हवन के समय पाठ होना प्रारम्भ हो गया था, जो आज तक चल रहा है। इस परम्परा के कारण ही उनके इतने सबद सुरक्षित रह पाये हैं। सर्वप्रथम वील्होजी ने 'सबदवाणी' को लिपिबद्ध किया था परन्तु यह पोथी अब उपलब्ध नहीं है। परमानंद बणियाल बिश्नोई पंथ के अति प्रसिद्ध कवि हुए हैं। उन्होंने वील्होजी की पोथी से सम्वत् 1796 में सबदवाणी को लिपिबद्ध किया था। आज लिपिबद्ध व उपलब्ध सबदवाणियों में परमानन्द बणियाल द्वारा लिपिबद्ध सबदवाणी ही सबसे प्राचीन व प्रामाणिक मानी जाती है।

सबदवाणी के कुछ सबद छोटे हैं और कुछ बड़े हैं। इसके कुछ सबद ऐसे हैं, जिनमें एक सबद में अनेक विषयों का वर्णन हुआ है और कुछ बातों को कई सबदों में दोहराया गया है। सबदवाणी के सभी सबद छन्दोबद्ध नहीं है। सबदवाणी में मरुभाषा का प्रयोग हुआ है। इसकी भाषा एक जैसी नहीं है। कहीं-कहीं अरबी-फारसी शब्दों का भी प्रयोग हुआ है पर इसमें अधिकतर ग्रामीण शब्दों का

ही प्रयोग हुआ है। सबदवाणी में ज्ञान भक्ति एवं कर्म की त्रिवेणी प्रवाहित हुई है। इसका प्रमुख सन्देश **'जीया नै जुगति अर् मूवा नै मुगति'** है। इन सब बातों के कारण सबदवाणी का महत्त्व बहुत बढ़ गया है। इसी महत्व के कारण कुछ विद्वानों ने इसे पांचवां वेद कहा है। बिश्नोई पंथ का मूल आधार सबदवाणी है और गुरु जाम्भोजी के विचारों को जानने का प्रमुख ग्रंथ भी सबदवाणी है। आज विश्व में पर्यावरण प्रदूषण, भ्रष्टाचार, आतंकवाद, विलासिता, हिंसा एवं नशे आदि की जो समस्याएँ हैं, उनका समाधान गुरु जाम्भोजी की विचारधारा में है और उनकी विचारधारा को जानने का प्रमुख आधार सबदवाणी है।

11. बिश्नोई पंथ के प्रमुख धाम एवं साथरी

गुरु जाम्भोजी बिश्नोई पंथ के संस्थापक हैं। पंथ में इन्हें साक्षात् विष्णु माना जाता है और इसी रूप में इनकी पूजा की जाती है। बिश्नोई पंथ में गुरु जाम्भोजी से बढ़कर कोई नहीं है। इसी कारण इनसे सम्बन्धित जितने भी महत्त्वपूर्ण स्थान हैं, वे सभी समाज के पूजनीय स्थल हैं और समाज के प्रमुख धाम हैं। गुरु जाम्भोजी ने अपने जीवन काल में जिन स्थानों का भ्रमण किया था और वहां ठहर कर ज्ञान का उपदेश दिया था, वे स्थान साथरी कहलाते हैं। इन पवित्र स्थलों पर गुरु जाम्भोजी के मन्दिर बने हुए हैं और वहां समाज के मेले लगते हैं, जिनमें देश के कोने-कोने से लोग बड़ी श्रद्धा के साथ पहुंचते हैं। इन धामों पर प्रतिदिन सबदों के पाठ के साथ हवन होता है और जीव दया की भावना से पक्षियों को चूण बिखेरा जाता है। ऐसे प्रमुख धाम निम्नलिखित हैं :-

1. पीपासर - यह गुरु जाम्भोजी का अवतार स्थल है। यह मुकाम से लगभग 10-12 कि.मी. दक्षिण में और नागौर से लगभग 45 कि.मी. उत्तर में है। गाँव में जिस कुएँ के पास गुरु जाम्भोजी ने सबदवाणी का प्रथम सबद कहा था, वह गाँव में है और अब बंद पड़ा है। इसी कुएं पर राव दूदा जी ने गुरु जाम्भोजी को चमत्कारिक ढ़ंग से पशुओं को पानी पिलाते हुए देखा था। वर्तमान साथरी गुरु जाम्भोजी के घर की सीमा में है, जिसकी देखभाल सन्तजन करते हैं। यहीं पर एक छोटी सी गुमटी है। कहते है कि यहीं पर गुरु जाम्भोजी का जन्म हुआ था। साथरी में रखी हुई खड़ाऊ की जोड़ी और अन्य सामान गुरु जाम्भोजी का बताया जाता है। कुएँ एवं साथरी के बीच आज भी वह खेजड़ा मौजूद है, जिस खेजड़े के राव दूदा ने अपना घोड़ा बांधा था। यहीं पर गुरु जाम्भोजी ने अपने पशुचारण-काल में राव दूदाजी को 'परचा' दिया था। राव दूदाजी की प्रार्थना पर गुरु जाम्भोजी ने उन्हें मेड़ते प्राप्ति का आशीर्वाद और एक काठ-मूठ की तलवार दी थी। सम्भराथळ पर रहना प्रारम्भ करने से पूर्व तक गुरु जाम्भोजी पीपासर में रहते थे। यहां जन्माष्टमी को मेला लगता है। पीपासर में साथरी के अतिरिक्त गुरु जम्भेश्वर भगवान का मन्दिर

भी है। अब यहाँ पर राजस्थान सरकार की ओर से एक पेनोरमा भी बनाया जा रहा है, जिसमें गुरु जम्भेश्वर भगवान के जीवनवृत्त को आधुनिक उपकरणों के माध्यम से दर्शाया जायेगा। मुकाम में लगने वाले मेलों के समय भी लोग इस पवित्र धाम के दर्शन करने पहुँचते हैं।

2. सम्भराथळ– यह बीकानेर जिले की नोखा तहसील में स्थित है। सम्भराथळ मुकाम से दो कि.मी. दक्षिण में है तथा पीपासर से लगभग 10–12 कि.मी. उत्तर में है। बिश्नोई पंथ में सम्भराथळ का अत्यधिक महत्त्व है। यह स्थान गुरु जाम्भोजी का प्रमुख उपदेश स्थल रहा है।यहां गुरु जाम्भोजी इक्यावन वर्ष तक मानव कल्याण हेतु लोगों को ज्ञान का उपदेश देते रहे हैं। विभिन्न स्थानों पर भ्रमण करने के बाद गुरु जाम्भोजी यहीं आकर निवास करते थे। यह उनका इक्यावन वर्ष तक स्थायी निवास रहा है। सम्वत् 1542 में इसी स्थान पर गुरु जाम्भोजी ने अपनी अलौकिक शक्ति से अकाल पीड़ितों की सहायता की थी। सम्भराथळ पर ही गुरु जाम्भोजी ने सम्वत् 1542 की कार्तिक वदि अष्टमी को बिश्नोई पंथ की स्थापना की थी। मुकाम में लगने वाले मेलों के समय लोग प्रात: काल यहां पहुंचकर हवन करते हैं और पाहळ ग्रहण करते हैं। सम्भराथळ को सोवन–नगरी, थला, थल एवं संभरि आदि नामों से भी पुकारते हैं। इसका प्रचलित नाम धोक धोरा है। सम्भराथळ धोरे की सबसे ऊंची चोटी पर, जहां बैठकर गुरु जाम्भोजी उपदेश देते थे और हवन करते थे, वहां पहले एक गुमटी थी और अब एक सुन्दर मन्दिर बना दिया गया है और साथ ही पूर्व दिशा में नीचे उतरने के लिये पक्की सीढ़ियां बना दी गई हैं। इस मन्दिर के निर्माण में ब्रह्मलीन स्वामी चन्द्रप्रकाश जी व ब्रह्मलीन स्वामी रामप्रकाश जी का विशेष योगदान रहा था। वर्तमान में सम्भराथळ पर इन्हीं संतों की परम्परा के दो आश्रम हैं।

सम्भराथळ के पूर्व की ओर नीचे तालाब बना हुआ है, यहां से लोग मिट्टी निकालकर आस–पास 'पालों' पर डालते हैं और कुछ मिट्टी ऊपर लाकर डालते हैं। कहते है कि यहीं से गुरु जाम्भोजी ने अपने पांचो शिष्यों खींया, भींया, दुर्जन, सेंसो और रणधीर जी को सोवन–नगरी में प्रवेश करवाया था। अब लोगों द्वारा वहां से मिट्टी निकालने के पीछे सम्भवत: एक धारणा यह है कि शायद सोवन नगरी का दरवाजा मिल जाय और वे उसमें प्रवेश कर जायें। सम्भराथळ और मुकाम के बीच में बनी हुई पक्की सड़क पर समाज की एक बहुत बड़ी गौशाला है, जो समाज की गो–सेवा की भावना की प्रतीक है।

3. मुकाम– यह बीकानेर जिले की नोखा तहसील में है, जो नोखा से लगभग 16 कि.मी. दूर है। यहां पर गुरु जाम्भोजी की पवित्र समाधि स्थित है। इसी कारण समाज में सर्वाधिक महत्त्व मुकाम का ही है। इसके पास ही पुराना ताळवा गाँव है। कहा जाता है कि गुरु जाम्भोजी ने अपने स्वर्गवास से पूर्व समाधि के लिये खेजड़े एवं जाल के वृक्ष को निशानी के रूप में बताया था और कहा था कि वहां 24 हाथ की खुदाई करने पर शिवजी का धूणा एवं त्रिशूल मिलेगा। खुदाई करने पर जो त्रिशूल मिला था, वही आज समाधि पर बने मन्दिर के गुम्बद पर लगा हुआ है और खेजड़ा एवं जाल मन्दिर परिसर

में स्थित है। मुकाम में वर्ष में दो मेले लगते हैं- एक फाल्गुन की अमावस्या को तथा दूसरा आसोज की अमावस्या को। फाल्गुन की अमावस्या का मेला तो प्रारम्भ से ही चला आ रहा है पर आसोज का मेला संत वील्होजी ने प्रारम्भ किया था। आजकल हर अमावस्या को बहुत बड़ी संख्या में श्रद्धालु पहुँचने प्रारम्भ हो गये हैं। कई वर्षों से मुकाम में समाज की ओर से नि:शुल्क भण्डारे की व्यवस्था चल रही है। मुकाम में पहुंचने वाले सभी जातरी समाधि के दर्शन करते हैं और धोक लगाते हैं। सभी मेलों पर यहां बहुत बड़ा हवन होता है, जिसमें कई मण घी एवं खोपरे होमे जाते हैं। घी के साथ-साथ जातरी पक्षियों के लिये चूण भी डालते हैं, जिसे पक्षी वर्षभर चुगते रहते हैं। अब समाधि पर बने मन्दिर का जीर्णोद्धार करके एक भव्य मन्दिर बना दिया गया है। समाधि पर बने मन्दिर को निज मन्दिर भी कहते है। मुकाम में मेलों में आने वाले लोगों के व्यक्तिगत मकान भी है तथा समाज की भी अनेक धर्मशालाएं हैं। मेलों की समस्त व्यवस्था अखिल भारतीय बिश्नोई महासभा एवं अखिल भारतीय गुरु जम्भेश्वर सेवक दल द्वारा की जाती है।

4. जांगलू- जांगलू गाँव देशनोक से लगभग 10-12 कि.मी. दक्षिण-पश्चिम में है। यह बीकानेर जिले की नोखा तहसील में है। गांव में गुरु जाम्भोजी का मन्दिर है, जिसमें गुरु जाम्भोजी का चोला एवं चींपी रखी हुई है। कहते हैं कि यहां रखी हुई चींपी वही है, जो सैंसा के घर खंडित हो गई थी। मूल चींपी सुरक्षित रहे, इसलिये उसे काम में नहीं लेते। उसी आकार की एक दूसरी चींपी है, जिसे श्रद्धालु अपनी मनोकामना के लिये अमावस्या को घी से भरते हैं। कहते हैं कि मेहोजी मुकाम से चोला, चींपी एवं टोपी लेकर जांगलू आये थे। मुकाम के थापनों के निवेदन पर टोपी तो मेहोजी ने वापिस दे दी थी और शेष दोनों वस्तुएं जांगलू मन्दिर में आज भी सुरक्षित है। मन्दिर के पास ही मेहोजी की समाधि है। जांगलू के वर्तमान मन्दिर की नींव सन्त मनरूप जी ने सम्वत् 1883 में चैत सुदि नवमी, सोमवार को रखी थी। जांगलू मन्दिर में वर्ष में दो मुख्य मेले प्रथम चेत की अमावस्या तथा दूसरा भादवा की अमावस्या को लगते हैं।

जांगलू गांव से पांच कि.मी. दूर साथरी है, जहां पर गुरु जाम्भोजी ने अपने शिष्यों के साथ विश्राम किया था। साथरी से उत्तर की ओर एक चौकी बनी हुई है, जहां गुरु जाम्भोजी ने हवन किया था। चौकी के पास ही एक कंकेड़ी का वृक्ष है। कहते हैं कि इसे गुरु जाम्भोजी ने लगाया था। यहां से थोड़ी दूरी पर एक तालाब है, जिसे बरसिंह बणियाल ने खुदवाया था। इसी कारण इसे 'वरींगआली नाडी' कहते हैं। लोग अपनी मनोकामना पूर्ण करने हेतु इसमें स्नान करते हैं और मिट्टी निकालते हैं।

5. लोदीपुर- यह स्थान जिला मुरादाबाद (उत्तरप्रदेश) में स्थित है। लोदीपुर, मुरादाबाद-दिल्ली रेलवे लाईन पर है और मुरादाबाद से लगभग 5 कि.मी. दूर है। भ्रमण के समय गुरु जाम्भोजी लोदीपुर पहुंचे थे। लोगों में वृक्ष-प्रेम की भावना जाग्रत करने के उद्देश्य से गुरु जाम्भोजी ने यहां खेजड़ी का एक वृक्ष लगाया था, जिसे आज भी देखा जा सकता है। इसी खेजड़ी वृक्ष के पास गुरु जाम्भोजी का

एक मन्दिर बना हुआ है। यहां प्रति वर्ष चैत्र की अमावस्या को मेला लगता है।

6. रोटू- यह नागौर जिले की जायल तहसील में है तथा नागौर से लगभग 50 कि.मी. पूर्व में है। वर्तमान में यहाँ एक भव्य मन्दिर बना हुआ है, जिसमें एक खांडा रखा हुआ है। रोटू का सर्वाधिक महत्त्व इस बात के लिये है कि यहाँ गुरु जाम्भोजी ने अक्षय तृतीया वि. सं. 1572 को जोखे भादू की बेटी उमा (नौरंगी) को भात भरा था। उसी समय लोगों की प्रार्थना पर गुरु जाम्भोजी ने यहाँ खेजड़ियों का बाग लगा दिया था। यह बाग आज भी यहाँ मौजूद है। यह भी कहा जाता है कि यहाँ की चिड़ियाँ या अन्य पक्षी यहाँ की फसलों से दाने नहीं चुगते। वे यहां खेजड़ियों पर बैठकर विश्राम करते हैं।

7. जाम्भोळाव- यह जोधपुर जिले की फलोदी तहसील में स्थित है। फलौदी से लगभग 15-20 कि.मी. पूर्वोत्तर में एक बड़ा तालाब है, जिसे गुरु जाम्भोजी ने खुदवाया था। यही जाम्भोळाव के नाम से प्रसिद्ध है। जाम्भोळाव पर बने मन्दिर में सफेद मकराने के पत्थर का एक पूर्वाभिमुख सिंहासन है। कहते हैं कि इसी पर बैठकर गुरु जाम्भोजी तालाब की खुदाई का काम देखते थे। यहां से थोड़ी दूरी पर जाम्भा नामक गांव है। यहां साधुओं की दो परम्पराएं हैं- एक आगूणी जागां और दूसरी आथूणी जागां। तालाब के पास पशुओं की कर माफी का एक शिलालेख लगा हुआ है। जाम्भोळाव को विसन तीरथ, कलियुग का तीरथ, विसन तालाब, कपिल सरोवर एवं यति तालाब भी कहा जाता है पर इसका लोक प्रचलित नाम जाम्भोळाव ही है। कहा जाता है कि इसी स्थान पर पूर्व में कपिल मुनि ने तपस्या की थी और पाण्डवों ने भी यज्ञ किया था। कलियुग में इसे गुरु जाम्भोजी ने प्रकट किया था।

यहाँ वर्ष में दो मेले लगते हैं-एक चैत्र की अमावस्या को और दूसरा भाद्रपद की पूर्णिमा को। दोनों मेले संत वील्होजी ने प्रारम्भ करवाये थे। पहला मेला सम्वत् 1648 में प्रारम्भ किया गया था और दूसरे मेले के लिये वील्होजी ने पली गांव के माधो जी गोदारा का सहयोग लिया था। इसी कारण इसे माधा मेला भी कहते हैं। जांभाणी संतों ने इसका महत्त्व अड़सठ तीर्थों से भी अधिक माना है। यहां पर आने वाले जातरी तालाब में स्नान करते हैं, मिट्टी निकालते है, साधुओं को भोजन कराते हैं और सूत फिराते हैं। अनेक श्रद्धालु अपनी मनोकामना पूर्ति के लिये तालाब से मिट्टी निकालने की जात बोलते हैं। समाज में यहां के किये गये फैसले को अन्तिम माना जाता रहा है। मन्दिर व तालाब की व्यवस्था एक वर्ष आथूणी जागां और दूसरे वर्ष अगुणी जागां के सन्त करते हैं।

8. लालासर- लालासर की साथरी बीकानेर जिले की नोखा तहसील में है। यह बीकानेर से लगभग 30 कि.मी. दक्षिण-पूर्व में है तथा लालासर गांव से 6 कि.मी. तथा मुकाम से 25-30 कि.मी. दूर जंगल में स्थित है। यह गुरु जाम्भोजी का निर्वाण स्थल है। बिश्नोई पंथ के संस्थापक गुरु जाम्भोजी ने मिगसर वदि नवमी सम्वत् 1593 को यहां अपना भौतिक शरीर त्याग दिया था। बिश्नोई पंथ में इस दिन को 'चिलत नवमी' भी कहते हैं। कहते हैं कि लालासर की साथरी पर स्थित हरी कंकेड़ी के नीचे

गुरु जाम्भोजी ने अपना शरीर त्यागा था। आज इस कंकेड़ी के चारों ओर पक्का चबूतरा बना हुआ है। मुकाम में लगने वाले दोनों मेलों के समय श्रद्धालु यहां साथरी के दर्शन करने के लिये भी आते हैं। यहां चिलत नवमी को मेला भी लगता है। अब यहां भव्य मन्दिर बनाया जा रहा है।

उपर्युक्त आठों धाम बिश्नोई समाज में अष्ठ धामों के नाम से प्रसिद्ध है। इन धामों के अतिरिक्त भी समाज में कुछ और धाम तथा साथरियाँ प्रसिद्ध हैं, जो निम्नलिखित हैं :-

1. लोहावट– यह जोधपुर जिले की फलोदी तहसील में है। लोहावट गांव फलौदी तहसील से लगभग 20–25 कि.मी. दक्षिण में है। लोहावट रेलवे स्टेशन से साथरी लगभग 2 कि.मी. पूर्व में है। साथरी के पास ही रेत का एक ऊंचा धोरा है, जिसे लोग सम्भराथळ के समान मानकर धोक धोरा कहते हैं। कहते हैं कि इस धोरे पर गुरु जाम्भोजी ने हवन किया था और यहीं सम्वत् 1584 में जोधपुर के कुंवर मालदेव गुरु जाम्भोजी से मिले थे और उनसे ज्ञान प्राप्त किया था। साथरी के मन्दिर में एक पत्थर पर पैर का एक निशान बना हुआ है, जिसे लोग गुरु जाम्भोजी का मानते हैं।

2. रणीसर– रणीसर, जोधपुर जिले की फलोदी तहसील में है। यहाँ की साथरी गुरु जाम्भोजी के चाचा पूल्होजी की बतायी जाती है। गुरु जाम्भोजी के बैकुण्ठवास का समाचार सुनकर पूल्होजी ने रिणसीसर (रणीसर) में स्वेच्छा से अपने प्राण त्याग दिये थे। रिणसीसर के महन्त लोहावट के बिश्नोई साधुओं की परम्परा के हैं।

3. भींयासर– यह गांव जोधपुर जिले की फलोदी तहसील में है। भींयासर गांव से लगभग दो कि.मी. पश्चिम की ओर साथरी है। आऊवा के ठाकुर दलपतसिंह राठौड़ ने 259 बीघा जमीन गोचर भूमि के लिये साथरी को दी थी, जिसका वहां एक शिलालेख लगा हुआ है। यहां के मन्दिर का निर्माण साथरी के स्व. महंत भोलाराम ने करवाया था। यहीं पर महंत भोलाराम तथा लालासर साथरी के महंत खेमदास की समाधियां बनी हुई है। जाम्भाणी साहित्य के प्रसिद्ध कवि सुरजनदास जी पूनिया इसी गांव के थे और उनकी समाधि भी गांव में पूनियों के बास में बनी हुई है।

4. रामड़ावास– रामड़ावास, जोधपुर जिले की पीपाड़शहर तहसील में है। यह जोधपुर से लगभग 35 कि.मी. दूरी पर है। बिश्नोई पंथ के अति प्रसिद्ध संत वील्होजी ने अनेक वर्षों तक यहां निवास किया था। यहीं पर सम्वत् 1673 की चैत्र सुदि एकादशी रविवार को उन्होंने अपना शरीर त्यागा था। रामड़ावास में वील्होजी की समाधि है। यह वील्होजी का धाम माना जाता है। इसी कारण इसका इतना महत्त्व है। उनकी शिष्य परम्परा में आने वाले गुलाबदास जी एवं प्रसिद्ध कवि साहबराम जी ने सम्वत् 1911 में वील्होजी के मन्दिर का निर्माण करवाया था, जिसमें वील्होजी की समाधिस्थ मूर्ति है। यहीं मन्दिर निर्माण का शिलालेख लगा हुआ है। एक अन्य शिलालेख में गायों की उगाई माफी का वर्णन है। मन्दिर के पास ही साथरी है। कवि गोविन्दराम जी ने रामड़ावास के महत्त्व पर कुछ छन्द भी लिखे हैं। वर्तमान में यहां चैत्र सुदि एकादशी एवं भादवा की अमावस्या को दो मेले लगते हैं।

5. रुड़कली– यह गाँव जोधपुर जिले में है। रूड़कली से लगभग एक कि.मी. उत्तर में एक बड़ा तालाब है, जिसे यहां के लोग जाम्भोळाव या जाम्भो तालाब कहते हैं। अपने जीवन काल में वील्होजी यहां आये थे और उन्होंने ज्ञाननाथ नामक वामपंथी साधक को हराकर बिश्नोई बनाया था। जाम्भाणी साहित्य के प्रसिद्ध कवि ऊदोजी अड़ींग इसी गांव के थे। गाँव के पास ही वह कुआं है, जहां पर ऊदोजी को वैराग्य प्राप्त हुआ था। वर्तमान में रुड़कली के श्रीमहंत शिवदास जी है।

6. गुड़ा– यह जोधपुर जिले की लूणी तहसील में है, जो जोधपुर से लगभग 20 कि.मी. दक्षिण में है। कहते हैं कि यहां गुरु जाम्भोजी पधारे थे। यहां एक मन्दिर है, जिसे सम्वत् 2015 में पंचायत ने बनाया था। इस गांव से थोड़ी दूरी पर ही वह स्थान है, जहां पर 'खेजड़ली का खड़ाणा' हुआ था और जिसमें 363 स्त्री–पुरुष वृक्षों की रक्षा के लिये शहीद हो गये थे।

7. पुर– यह भीलवाड़ा जिले में है। कहते हैं कि यहां पर गुरु जाम्भोजी आये थे और पांच दिन ठहरे थे। उसी स्थान पर अब मन्दिर बना हुआ है। गांव में पंवार, चौहान, राठौड़, उमराव, मोहिल, गुजेला, चन्देल, देवड़ा, सिसोदिया, भोजावल, सागर एवं अहूदिया आदि गोत्र के बिश्नोई रहते हैं। पहले अन्य बिश्नोइयों से सम्पर्क न होने के कारण पुर, दरीबा एवं संभेलिया के बिश्नोइयों के आपस में वैवाहिक सम्बन्ध होते थे। उदयपुर राज्य की ओर से मन्दिर की भूमि पर कर में छूट आदि के दो परवाने एवं एक ताम्र पत्र प्राप्त हैं।

8. दरीबा– दरीबा, भीलवाड़ा जिले में स्थित है। यहां बिश्नोइयों के अनेक घर हैं। यहां पंवार,पूनिया, बाबल, ढ़ाका, गोदारा, मालीवाल, कालीराणा, परवाल एवं बणियाल आदि गोत्र के बिश्नोई रहते हैं। यहां गुरु जाम्भोजी का एक मन्दिर है। मन्दिर की सीढ़ियों के पास मन्दिर निर्माण के समय (जेष्ठ वदि 5, सम्वत् 1939) से सम्बन्धित शिलालेख लगा हुआ है। महाराणा स्वरूपसिंह की ओर से दिया एक ताम्रपत्र है, जिसमें बिश्नोई साधु मनीराम को एक बावड़ी एवं ढ़ाई बीघा जमीन देने का उल्लेख है। गांव के पश्चिम की ओर वह बावड़ी है और उसके पास एक शिलालेख है, जिस पर बावड़ी का निर्माणकाल (सम्वत् 1904 की भादो सुदि 15) अंकित है। यहां पर चिमनाराम महाराज की समाधि है।

9. संभेलिया – यह भीलवाड़ा जिले में है तथा भीलवाड़ा से लगभग 10 कि.मी. दूर है। यहां एक बहुत बड़ा एवं प्रसिद्ध मन्दिर है। मन्दिर की नींव सम्वत् 1690 बैसाख सुदि तीज को रखी गई थी। अब यह मन्दिर बांध के पानी से घिर गया है। यह मन्दिर साणिया सिद्ध ने बनाया था। मन्दिर के पास ही दक्षिण–पूर्व में पांच समाधियाँ है। मन्दिर के पूर्व की ओर एक समाधि मन्दिर है। यह समाधि ज्ञाननाथ (उपनाम अज्ञाने) की बतायी जाती है। पुराना संभेलिया गांव पानी से घिरा होने के कारण अब यहां के लोग पास में नया गांव बसा कर रह रहे हैं।

10. नगीना– यह बिजनौर (उत्तरप्रदेश) जिले में स्थित है। यहां दो बिश्नोई मन्दिर हैं – एक बड़ा एवं दूसरा छोटा। कहते हैं कि बड़े मन्दिर का निर्माण सेठ कुलचन्दराय के दामाद चेलोजी ने करवाया था। छोटे

मन्दिर के पास एक कुआं है, जो कुलचन्द राय के पुत्रों धन्ना और बिच्छू द्वारा बनाया हुआ बताया जाता है। गुरु जाम्भोजी अपने अन्तिम भ्रमण के समय नगीना भी गये थे।

11. छान–नाडी– रामड़ावास से लगभग दो कि.मी. दक्षिण–पूर्व में एक बड़ा तालाब है, जिसे सुरजन जी का तालाब या 'छान–नाडी' कहते हैं। कहते हैं कि इस तालाब का निर्माण प्रसिद्ध कवि सुरजन जी पूनिया ने करवाया था और वे स्वयं तालाब की पाल पर छान (छप्पर) बनाकर रहते थे। उनका अधिकांश समय यहीं व्यतीत हुआ था।

12. रावतखेड़ा– यह हिसार (हरियाणा) जिले में स्थित है। यहां गुरु जाम्भोजी का एक प्राचीन मन्दिर है। यह मन्दिर भींयासर की साथरी का माना जाता है।

13. शहीद स्थल खेजड़ली– यह जोधपुर से लगभग 22 कि.मी. दक्षिण में स्थित है। 'खेजड़ली के खड़ाणे' की घटना जोधपुर के तत्कालीन राजा अभयसिंह के शासनकाल की है। सम्वत् 1787 में राजा अभयसिंह के वजीर गिरधरदास भंडारी अपने कारिन्दों एवं मजदूरों को लेकर खेजड़ली गांव में खेजड़ी के वृक्षों को काटने पहुंचा। बिश्नोइयों ने वृक्ष काटने का विरोध किया पर भंडारी पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उसने शक्ति के नशे में वृक्ष काटने प्रारम्भ कर दिये। तभी वहां के आस–पास के 84 गांवों के बिश्नोइयों ने वृक्षों की रक्षा के लिये प्राण न्यौछावर करने प्रारम्भ कर दिये। इस घटना की पूर्णाहुति सम्वत् 1787 की भादवा सुदि 10, मंगलवार को हुई, जिसमें 363 स्त्री–पुरूष शहीद हो गये। इन शहीदों की याद में यहां सन् 1978 से भादवा सुदि 10 वीं को मेले का निरन्तर आयोजन हो रहा है। इस मेले को प्रारम्भ करवाने में स्व. सन्तकुमार जी राहड़ का विशेष योगदान रहा है। यह मेला बिश्नोई समाज के वृक्ष–प्रेम का प्रतीक है। यहां शहीदों की स्मृति में एक शहीद स्मारक बना हुआ है। आज यह एक विश्व प्रसिद्ध स्थान बन गया है। अब समाज इसे एक विश्व प्रसिद्ध धरोहर के रूप में विकसित करने का प्रयास कर रहा है।

इन धामों के अतिरिक्त भी आज देश के विभिन्न भागों में गुरु जाम्भोजी के भव्य मन्दिर एवं धर्मशालाएँ बनी हुई हैं, जिनमें नित्य हवन होता है और अमावस्या को सबदवाणी के सबदों का पाठ, हवन एवं पाहळ होता है। इनमें से कुछ स्थानों पर समाज की ओर से भंडारे की भी व्यवस्था की जाती है। आज देश की राजधानी दिल्ली से लेकर गांव–गांव तक गुरु जाम्भोजी के मन्दिर बन गये हैं। उन सबका यहाँ विस्तार भय के कारण वर्णन करना सम्भव नहीं है।

12. बिश्नोई पंथ के भंडारे

गुरु जाम्भोजी ने समाज में परोपकार की भावना विकसित करने के उद्देश्य से भंडारों की व्यवस्था की थी। इन भण्डारों में साधु–संत, अतिथि, अपाहिज एवं गरीबों को भोजन कराया जाता था। गुरु जाम्भोजी

द्वारा प्रारम्भ किये गये इन भंडारों में कभी भी भोजन की कमी नहीं आती थी। कहते हैं कि एक बार सम्भराथळ पर भंडारे से भोजन को समाप्त करने के उद्देश्य से नाथ पंथ के कुछ योगियों ने बहुत प्रयास किया था पर इनको सफलता नहीं मिली। अत्यधिक लोगों द्वारा अत्यधिक मात्रा में भोजन करने पर भी भोजन सामग्री वैसी की वैसी रही। भंडारों की व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिये गुरु जाम्भोजी ने अपने शिष्यों को भंडारी का कार्य सौंप रखा था। इन भंडारों पर अधिकांश ऐसे व्यक्ति थे जो पहले किसी दूसरे पंथ में थे और गलत रास्ते पर चलते थे। ऐसे लोगों को गुरु जाम्भोजी ने उपदेश देकर बिश्नोई पंथ में दीक्षित किया था और उन्हें सेवा-कार्य में लगा दिया था। लोहा-पांगल ऐसा ही नाथ पंथ का योगी था, जिसका रूपा नाम रखकर खींदासर गांव का भंडारी नियुक्त किया था। बिश्नोई पंथ में रणधीरजी प्रमुख भंडारी के रूप में प्रसिद्ध रहे हैं। गुरु जाम्भोजी के बाद धीरे-धीरे यह व्यवस्था बंद हो गई पर गत कुछ वर्षों से भंडारे की व्यवस्था पुनः प्रारम्भ हुई है। अब कई स्थानों पर समाज की ओर से भंडारों का संचालन हो रहा है। इनमें से सबसे बड़ा भंडारा मुकाम का है। पुराने समय में समाज में चौबीस भण्डारों की मान्यता रही हैं, जिन बाईस भंडारों की प्रामाणिक रूप से जानकारी मिलती है उनके नाम यहां दिये जा रहे हैं-

1. संभराथळ	2. पीपासर	3. ईवारो	4. सांवतसर	5. पारवा
6. कूदसूं	7. नाथूसर	8. धरणोक	9. खींदासर	10. रोटू
11. डेलाणो	12. जाम्भोळाव	13. ननेऊ	14. खरींगा	15. लोहावट
16. हिंगूणियो	17. पुर	18. नगीना	19. लोदीपुर	20. भींयासर
21. कोसांणो	22. पंडवालो।			

13. छः राजवियों की विगत

गुरु जाम्भोजी के समय में सामान्य व्यक्तियों के अतिरिक्त राजा-महाराजा भी उनके सम्पर्क में आये थे। ऐसे अनेक राजाओं को गुरु जाम्भोजी ने अपनी शिक्षा एवं शक्ति से प्रभावित किया था और उन्हें जीवन का सही मार्ग बताया था। उन्होंने बहुत से राजाओं को हिंसा का मार्ग छुड़वाकर अहिंसा एवं परोपकार के रास्ते पर चलने के लिये प्रेरित किया था। दिल्ली के बादशाह सिकन्दर लोदी, नागौर के मुहम्मदखां नागौरी, मेड़ते के राव दूदाजी राठौड़, जोधपुर के राव सांतल, जैसलमेर के रावल जैतसी एवं मेवाड़ के राणा सांगा की गणना छः राजवियों की विगत में है। ये सभी राजा गुरु जाम्भोजी की आज्ञा का पालन करते थे।

14. चौईसां को लूरो

लूर का अर्थ है–नूर। नूर अर्थात् ज्ञान का प्रकाश। चौईसां के लूरो में ऐसे चौईस व्यक्ति हैं, जिन्हें गुरु जाम्भोजी से ज्ञान का प्रकाश प्राप्त हुआ था। ये सभी लोग पहले किसी दूसरे धर्म के अनुयायी थे। बाद में गुरु जाम्भोजी से ज्ञान प्राप्त करके बिश्नोई पंथ में दीक्षित हो गये थे। इनमें से कुछ लोग तो पंथ के प्रसिद्ध कवि भी रहे हैं। 'चौईसां को लूरो' से सम्बन्धित व्यक्ति निम्नलिखित हैं–

1. रायचन्द सुथार	2. लालचन्द नाई	3. ऊदो ढ़ाढ़णियो
4. कांधल मोहिल	5. रायसल हुडो	6. दुर्जण माल
7. गोगो तरड़	8. अली बांभण	9. ठुकरो राहड़
10. सधारण नैण	11. गोयंद झोरड़	12. रावण झोरड़
13. घड़ूको सारण	14. करणो पुंवार	15. तेजो चारण
16. अल्लू चारण	17. कान्हो चारण	18. साल्हो गायणो
19. आसनो भाट	20. खींयो मांझू	21. सीसारो राठौड़
22. लूंको पोकरणो	23. भींयो लुहार	24. पांडू गोदारो।

15. पुण्य

गुरु जाम्भोजी के समय से ही कुछ बिश्नोई पुरुष एवं कुछ स्त्रियाँ अत्यधिक पुण्यवान माने जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि ये बिश्नोई स्त्री–पुरुष मोक्ष प्राप्त करने में सफल हो गये थे। ऐसे लोगों में 35 बिश्नोई पुरुष एवं 27 बिश्नोई स्त्रियाँ अत्यधिक प्रसिद्ध रही हैं, इनको ही 35 पुन्ह (पुण्य) तथा 27 लुगाईयों की पुन्ह कहा जाता है। समाज में प्रत्येक बिश्नोई पुरुष 35 की पुन्ह और प्रत्येक स्त्री 27 लुगाईयों की पुन्ह की श्रेणी में सम्मिलित होने की कामना करती हैं। ऐसी कामना करना स्वाभाविक भी है, क्योंकि मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्त करना है। '35 की पुन्ह' एवं '27 लुगाईयों की पुन्ह' में सम्मिलित बिश्नोई पुरुषों एवं स्त्रियों के नाम निम्नलिखित हैं :–

★ 35 की पुन्ह

1. डूमो भादू	2. बूढ़ो खिलहरी	3. रावल जाणी	4. पूरो जाणी
5. खेतो जाणी	6. पूरव जाणी	7. मंगोल जाणी	8. तोलो
9. जोखो भादू	10. वीरम भादू	11. रेड़ो सांवक	12. नाथो सांवक
13. लखमण गोदारो	14. पांडू गोदारो	15. वरसिंह खदाह	16. केलण खदाह

17. सायर गोदारो 18. सायर गुरसेर 19. दूदो गोदारो 20. जोखो कसवो
21. सहंसो कसवो 22. विरियाम साहू 23. वीसल पुंवार 24. दणियर पंवार
25. राणो गोदारो 26. वाल्हो खिलहरी 27. आल्हो झोधगण 28. ऊदो नैण
29. धन्नो साह 30. बिच्छू साह 31. चेलो साह 32. अगरवाल कुलचन्द राय
33. रिणधीर बाबल 34. टोहो सुथार 35. पालो वाड़ेट।

★ 27 लुगाइयां की पुन्ह

1. खेतू भादू 2. ओरमी पुंवारी 3. नायकी पुंवार 4. तांतू पुंवार
5. वीरां एचरी 6.अजायवदे गोदारी 7. अली वणियाल 8. जैती वणियाल
9. सवीरी लोल 10. सीको सुथारी 11. झीमा पूनियाणी 12.गोरा बागड़ियाणी
13. अतली कासणियांणी 14. सरिया जांणण 15. लोचां मंडी 16. मरियम पठाणी
17. वीरां गोदारी 18. आल्ही जांघू 19. चोखी सोहवी 20. लाहण वरी
21. पेमासाही थापन 22. देउ सेवदी 23. राजी मातवी 24. टांकू नफरी
25.गींदू नफरी 26. मोल्ही नफरी 27. साल्ही नफरी।

16. जम्मा

जम्मे का अर्थ है – एकत्र होना। बिश्नोई पंथ में बिश्नोई साधुओं, गायणों एवं किसी गृहस्थ के द्वारा रात्रि में जाम्भाणी साखियों एवं गुरु जाम्भोजी से सम्बन्धित भजनों का जो गायन किया जाता है, उसे जम्मा कहते हैं। जम्मे में साखियों को 'अरथाया' भी जाता है अर्थात् साखियों के भावार्थ को स्पष्ट किया जाता है। समाज के लोग वहाँ एकत्रित होकर इन साखियों एवं भजनों को श्रवण करते हैं। जम्मे की प्रथा गुरु जाम्भोजी के समय से ही प्रचलित है। किसी घर में किसी भी अच्छे कार्य के सम्पन्न होने पर या किसी बुरी स्थिति के टालने के उद्देश्य से घर में जम्मा लगाया जाता है। इसको समाज में अत्यधिक पुण्य का कार्य माना जाता है। जम्मे में गुरु जाम्भोजी के समय से ही पांच साखियाँ अनिवार्य रूप से गायी जाती रही हैं। आधी रात को आटे का चौमुखा दीपक जलाया जाता है और गुरु जाम्भोजी की आरती गायी जाती है। इस समय पदमकृत आरती गाने की ही परम्परा अधिक रही है। इस आरती में कर्ममय जीवन का सन्देश है। गुरु जाम्भोजी की विचारधारा भी कर्ममय जीवन पर आधारित है। सम्भवत: इसी साम्य के कारण इस आरती को इतना महत्त्व दिया जाता है। आरती के बाद सबको प्रसाद बांटा जाता है। इसके बाद भी जाम्भाणी साखियां, भजन एवं आख्यान गाये जाते हैं। प्रात:काल हवन होता है जिसमें सबदवाणी के समस्त सबदों का पाठ किया जाता है। तत्पश्चात् कलश की स्थापना करके विधिपूर्वक पाहळ किया जाता है और सबको पाहळ दिया

जाता है। इसके बाद पूर्णाहुति दी जाती है। इसके साथ ही जम्मे की प्रक्रिया पूर्ण हो जाती है। प्रातःकाल सभी आमन्त्रित मेहमानों को भोजन कराया जाता है और जम्मे के गायकों को दान-दक्षिणा देकर विदा किया जाता है।

17. हवन

बिश्नोई पंथ में हवन का अत्यधिक महत्त्व है। समाज के प्रत्येक संस्कार पर हवन होता है। गुरु जाम्भोजी ने उनतीस नियमों में 'नित्य हवन' करने के नियम को सम्मिलित किया है। इसके साथ-साथ सबदवाणी में भी हवन के महत्त्व को प्रकट किया है और हवन न करने को मनुष्य का बड़ा अपराध माना है। बिश्नोई पंथ में गुरु जाम्भोजी के समय से ही हवन की प्रथा चली आ रही है। हवन के समय सबदवाणी के सबदों का एक विशेष लय में पाठ किया जाता है। घरों में किये जाने वाले प्रतिदिन के हवन में सबदवाणी के प्रारम्भिक पांच-सात सबदों का पाठ करके अन्त में 'शुक्ल हंस' सबद बोला जाता है। हवन के सम्पूर्ण होने पर धूप मंत्र बोला जाता है। हवन के इस महत्त्व के पीछे एक कारण यह भी है कि पंथ में हवन की ज्योति में गुरु जाम्भोजी के दर्शन माने जाते हैं।

हवन का आधार केवल आध्यात्मिक नहीं है अपितु इसके साथ-साथ इसका आधार वैज्ञानिक भी है। आज विज्ञान ने भी हवन के महत्त्व को स्वीकार कर लिया है। पर्यावरण को शुद्ध रखने में भी हवन का सर्वाधिक योगदान है। हवन से प्रदूषण नष्ट हो जाता है और सम्पूर्ण वातावरण शुद्ध हो जाता है। बिश्नोई पंथ में प्रतिदिन जो घरों में हवन होता है उससे घर का वातावरण शुद्ध रहता है और मन्दिरों में होने वाले सामूहिक हवन से समाज का वातावरण शुद्ध रहता है।

18. पाहळ

बिश्नोई पंथ में प्रत्येक संस्कार पर हवन एवं पाहळ का होना अनिवार्य है।प्रत्येक संस्कार के प्रारम्भ में ही सर्वप्रथम संस्कार स्थल पर कच्ची मिट्टी का नया घड़ा शुद्ध जल से भरकर रख लेते हैं। हवन के बाद कलश-पूजा मंत्र बोला जाता है। इसके बाद पाहळ मंत्र बोला जाता है। इस तरह कलश का मंत्रों से शुद्ध किया हुआ जल पाहळ कहलाता है। यह सर्वविदित है कि मंत्रों में अपार शक्ति होती है। इसी कारण मंत्रों से शुद्ध किया हुआ जल पाहळ बनकर अत्यधिक शक्तिशाली हो जाता है। इसी कारण पाहळ लेने वाला व्यक्ति पवित्र हो जाता है और उसमें नियमों पर दृढ़ रहने की शक्ति आ जाती है। एक तरह से पाहळ लेने वाला अपने हाथों में पाहळ लेकर गुरु जाम्भोजी द्वारा बताये गये उनतीस नियमों पर दृढ़ रहने का संकल्प लेता है।

बिश्नोई पंथ में पाहळ का बहुत महत्त्व है। इसी कारण बिश्नोई पंथ की स्थापना के समय प्रत्येक व्यक्ति पाहळ ग्रहण करके ही बिश्नोई पंथ में दीक्षित हुआ था और आज भी बिश्नोई के घर में उत्पन्न बच्चा भी पाहळ के द्वारा ही बिश्नोई बनता है। बालक मंत्र में कहा भी गया है ''विष्णु मंत्र कान जल छुआ, गुरु कृपा से बिश्नोई हुआ'' इतना ही नहीं अपितु प्रसव के बाद 30 दिन का सूतक भी पाहळ के द्वारा समाप्त हो जाता है, जच्चा गृह–कार्य करने के लिये सक्षम हो जाती है और पाहळ के छींटे से घर पवित्र हो जाता है।

19. बिश्नोई पंथ में अभिवादन प्रणाली

प्रत्येक पंथ की अपनी एक अलग पहचान होती है। इसी आधार पर हर पंथ का अपना इष्ट देव होता है और उसके अपने नियम होते हैं। भाषा, पहनावा, रीति–रिवाज, संस्कार एवं अभिवादन प्रणाली आदि सब हर पंथ के अलग–अलग होते हैं। बिश्नोई पंथ का भी अपना अलग वैशिष्ट्य है। इसी कारण उसकी अन्य विशेषताओं के साथ–साथ उसकी अभिवादन प्रणाली भी अलग प्रकार की है। इस अभिवादन को सुनते ही यह तुरन्त मालूम हो जाता है कि व्यक्ति बिश्नोई है। बिश्नोई पंथ में जब भी दो बिश्नोई आपस में मिलते हैं तो 'नवण–प्रणाम' कहते हैं इसके बदले में सामने वाला 'विष्णु जी नै, गुरु जाम्भोजी नै' कहता है अर्थात् यह नम्रता युक्त प्रणाम मुझे न करके भगवान विष्णु और गुरु जाम्भोजी को करो। अभिवादन की यह प्रणाली बिश्नोई पंथ की नम्रता की विशेषता को प्रकट करती है।

20. जम्भेश्वरीय संवत्

बिश्नोई पंथ में जम्भेश्वरीय सम्वत् भी प्रचलित रहा है। इस सम्वत् का प्रारम्भ गुरु जाम्भोजी के निर्वाण की तिथि मार्गशीर्ष वदि नवमी सम्वत्1593 से माना जाता है। विक्रम सम्वत् में से 1593 घटाने पर जम्भेश्वरीय सम्वत् आ जाता है। यद्यपि इसका अधिक प्रचलन नहीं हो सका है।

21. संस्कार, व्रत और त्योहार

हिन्दू धर्म में कुल सोलह संस्कार है पर सरलता, सादगी एवं आडम्बरहीनता के कारण बिश्नोई समाज में प्रमुख संस्कार चार है- जन्म, सुगरा, विवाह एवं मृत्यु। बिश्नोई पंथ में इन चारों ही संस्कारों पर हवन करना, कलश स्थापना एवं पाहळ करना आदि क्रियाएँ समान रूप से सम्पन्न होती है।

जन्म संस्कार–

जन्म का संस्कार प्रथम संस्कार है। इस संस्कार के द्वारा एक प्राणी का संसार में आगमन होता है। इस आगमन पर पारिवारिक लोगों का प्रसन्न होना स्वाभाविक है। भारतीय समाज में कन्या की अपेक्षा पुत्र का अधिक महत्त्व रहा है। इसलिये अन्य लोगों की तरह बिश्नोई समाज में भी पुत्र–जन्म पर थाली बजाकर प्रसन्नता प्रकट की जाती है। प्रसव के बाद तीस दिन तक सूतक रखा जाता है। सूतक वाले घर का कुछ व्यक्ति अन्न–जल ग्रहण नहीं करते। तीस दिनों तक बच्चा एवं बच्चे की मां (जच्चा) को घर में अलग रहने की व्यवस्था की जाती है। तीस दिनों तक जच्चा घर का कोई काम नहीं करती। वह पूर्ण विश्राम करती है। इस अवधि में उसे पौष्टिक आहार दिया जाता है। तीस दिन पूर्ण होने के पश्चात् हवन करके, कलश की स्थापना द्वारा पाहळ किया जाता है। इसी पाहळ को बच्चे के मुंह में दिया जाता है तथा उसके कानों से छुवाया जाता है। इस अवसर पर बालक मंत्र बोला जाता है। बालक मंत्र एवं पाहळ ग्रहण करने से ही बिश्नोई घर में जन्मा बच्चा बिश्नोई कहलाता है। प्रसव के बाद 31 वें दिन कलश की स्थापना करके जो पाहळ जच्चा–बच्चा को दिया जाता है उसे ही 'चळू' लेना कहते हैं। पाहळ के छींटे पूरे घर में देकर घर को पवित्र किया जाता है। इस दिन से घर का सूतक समाप्त हो जाता है और बच्चे की मां घर का कार्य करना प्रारम्भ कर देती है।

सुगरा संस्कार–

जब बालक–बालिका की अवस्था 12 वर्ष से 15 वर्ष मध्य हो तब तक सुगरा संस्कार हो जाना चाहिये क्योंकि सुगरा संस्कार के बिना मानव जीवन निष्फल माना गया है। यह संस्कार विधि विधानपूर्वक हवन पाहल करके करें। ओ३म् शब्द 'गुरु........मंत्र' को गुरु आगे बोलें, सुगरा होने वाला शिष्य पीछे बोले। इस क्रम से तीन बार बोलकर पाहळ दें और गुरु मंत्र के महत्त्व पर प्रकाश डालें। गुरु द्वारा प्रदत्त मंत्र गुप्त ही रखना चाहिये। मंत्रदाता गुरु एक ही होता है। गुरु योग्य, विद्वान, चरित्रवान बिश्नोई सन्त ही होना चाहिये। सुगरा संस्कार केवल संत ही कर सकते हैं। गृहस्थ को इसका अधिकार नहीं है।

विवाह संस्कार–

जीवन में विवाह का संस्कार बहुत आनन्द दायक होता है। बिश्नोई समाज में विवाह की सभी रस्में बड़े सादे ढ़ंग से सम्पन्न होती हैं। विवाह के लिये किसी भी मुहूर्त की प्रतीक्षा नहीं की

जाती। जन्म-पत्री मिलाना, तारे व नक्षत्रों आदि का विवाह कार्य में कोई दखल नहीं रहता। अक्षय तृतीया को शुभ मूर्हूत मानते रहे हैं। इसमें वर-वधू पक्ष की सुविधा ही प्रमुख रहती है। यह समाज के आडम्बरहीन होने का प्रमाण है। बिश्नोई समाज में दादी, नानी, मां एवं स्वयं के गोत्र को छोड़कर किसी गोत्र में भी वैवाहिक सम्बन्ध हो जाता है। विवाह से पूर्व जब लड़के-लड़की का सम्बन्ध तय हो जाता है, तब सगाई की रस्म की जाती है। सगाई में वर-कन्या दोनों पक्षों में से कोई भी किसी के यहां जाकर इस रस्म को पूरा कर लेते हैं। इसमें कन्या पक्ष की ओर से सवा रुपया एवं नारियल भेंट किया जाता है और वर पक्ष की ओर से कन्या को 'पगेलगाई' (कुछ रूपये) दी जाती है। वहां उपस्थित समाज के लोगों को गुड़ बांटा जाता है। विवाह के लिये सगाई का होना आवश्यक भी नहीं है। कभी-कभी मौखिक रूप से सम्बन्ध तय हो जाता है और सीधे विवाह की तिथि निश्चित कर लेते हैं। दोनों पक्षों द्वारा अपनी सुविधानुसार किसी भी समय विवाह की तिथि निश्चित कर ली जाती है। विवाह के लिये कन्या पक्ष के लोग अपने घर पर अपने भाई-बन्धुओं को बुलाकर कच्चे सूत की दो लच्छियाँ तैयार करते हैं। इन दोनों में उतनी ही गांठें लगाई जाती हैं, जितने दिनों के बाद विवाह का दिन निश्चित किया जाता है, फिर उन्हें हल्दी से पीला कर लेते हैं। इसे ही 'डोरा करना' कहते हैं। उस समय हल्दी में कुछ चावल भी पीले किये जाते हैं। ये चावल विवाह में आमन्त्रित करने वालों को भेजे जाते हैं। पीले चावल, सवा रुपया एवं एक डोरा नाई को देकर वर-पक्ष को भेजा जाता है। नाई वर-पक्ष के गांव में पहुंचने से पूर्व खेजड़ी की एक टहनी अपने साथ लेकर जाता है। खेजड़ी की यह टहनी बिश्नोई समाज की वृक्ष-प्रेम की प्रतीक मानी जाती है। इस टहनी से लोग यह भी समझ जाते हैं कि किसी के घर डोरा आया है। वर-पक्ष के लोग नाई का मान-सम्मान करते हैं तथा बधाई के रूप में रूपये एवं कम्बल आदि देते हैं। डोरे को वर व कन्या दोनों पक्षों के बुजर्ग अपनी-अपनी पगड़ी के बांधते हैं और प्रतिदिन एक गांठ खोलते रहते हैं।

बिश्नोई समाज में विवाह के समय अन्य लोगों की तरह फेरे नहीं होते अपितु वहाँ पीढ़ी बदलते हैं। प्रारम्भ में वर को बांए एवं कन्या को दांए उत्तर की ओर मुंह करके अलग-अलग पीढ़ी पर बैठाया जाता है। संस्कारकर्त्ता द्वारा वर के कमरबन्द से कन्या के ओढ़ने के पल्ले में गांठ बांधी जाती है, जिसे गंठ जोड़ा कहते हैं। इसके साथ ही कन्या के बांए हाथ को वर के दांए हाथ में पकड़ाकर, दोनों हाथों के बीच में मेंहदी की पींडी रखते है, जिसे हथलेवा कहते हैं। इसके बाद यज्ञ वेदी एवं दोनों पक्षों के लोगों के सन्मुख संस्कारकर्त्ता द्वारा कलश की स्थापना की जाती है, पाहळ किया जाता है तथा गोत्राचार एवं प्रश्नोत्तरी पढ़ी जाती है। इसके बाद वर-कन्या का स्थान बदला जाता है। स्थान बदलने पर कन्या, वर के बांयी ओर बैठती है, जिसे पीढ़ी बदलना कहते हैं। पीढ़ी बदलने के बाद शिव-पार्वती, राम-सीता एवं कृष्ण-रूक्मणी का साखोचार पढ़ा जाता है। साखोचार के पढ़ने से यह आशा की जाती है कि वर-वधू की यह जोड़ी शिव-पार्वती, राम-सीता या कृष्ण-रुक्मणी की तरह आदर्श जोड़ी प्रमाणित हो। अन्त में कन्या

की मां वर-वधू की आरती करती है। बाद में संस्कारकर्त्ता द्वारा वर-वधू को पाहळ दिया जाता है तथा वर को ध्रुव तारा दिखाया जाता है। ध्रुव तारा दिखाने के पीछे यह धारणा है कि वर अपने पारिवारिक उत्तरदायित्व के प्रति ध्रुव की तरह अटल रहेगा।

बिश्नोई समाज में सामूहिक विवाह की भी प्रथा प्रचलित है। इसके साथ-साथ किसी वृद्ध या वृद्धा के मृत्यु-भोज पर भी सामूहिक विवाह होते रहे हैं, जो अब कम होते जा रहे हैं। समाज में स्त्री-पुरुष दोनों को ही पुनर्विवाह करने का अधिकार है। स्त्री का पुनर्विवाह न होकर केवल नाता किया जाता है जबकि पुरुष विवाह की सभी रस्में पुनः पूरी करता है। बिश्नोई समाज में इस तरह के विवाह एवं नाते को पूर्ण सम्मान दिया जाता है। समाज में पुनर्विवाह की इस व्यवस्था से स्त्री-पुरुष की समानता भी प्रमाणित होती है।

मृत्यु संस्कार-

संसार में मनुष्य की मृत्यु के बाद शरीर के अन्तिम संस्कार की चार प्रथाएं प्रचलित हैं- अग्नि दाग, भूमि दाग, जल दाग एवं वायु दाग। अन्य परम्पराओं की तरह बिश्नोई समाज में मृतक का अन्तिम संस्कार भी भिन्न है। बिश्नोई समाज में मृत्यु के बाद शरीर को भूमि में गाड़ने (भूमि दाग) की प्रथा है। सुविधा, सरलता एवं पर्यावरण शुद्धता की दृष्टि से इसे उत्तम माना जा सकता है। मृत्यु की निकटता को जानकर प्राणी को सबदवाणी का 'कूंचीवाला' सबद सुनाने की भी परम्परा है। मृत्यु की निकटता के आधार पर या मृत्यु होने पर शरीर को धरती पर लेटाया जाता है। मृतक-देह को शुद्ध पानी में गंगाजल या जाम्भोळाव का जल डालकर अन्तिम स्नान करवाया जाता है। स्नान के बाद मृतक को कफन (खाफण) उढ़ाया जाता है। पुरुष को सफेद, स्त्री को रंगीन एवं साधु को भगवे रंग के कफन का प्रयोग किया जाता है। कफन उढ़ाने के बाद मृतक को ज्वार या बाजरी के तिनके के गट्ठर की बनी शैया पर लेटाया जाता है। उसके बाद उसे उसके पुत्र या उसके अन्य निकट के चार सम्बन्धी उठाकर श्मशान भूमि या अपने खेत में ले जाते हैं। मृतक को उठाने वाले सभी नंगे पांव चलते हैं। जैसे ही किसी का स्वर्गवास होता है, वैसे ही दिन में कुछ लोग श्मशान भूमि या खेत में जाकर छः-सात फुट लम्बा, दो-तीन फुट चौड़ा तथा पांच-छः फुट गहरा खड्डा खोदते है, जिसे 'घर बनाना' कहते हैं। इसी में मृतक की देह को त्रण रहित करके उसके परिवार जन उत्तर दिशा की ओर सिर करके सुला देते हैं इसके बाद वहां उपस्थित सभी लोग उस घर को मिट्टी से भर देते हैं और उस पर कुछ पानी बरसाकर पक्षियों के लिये गेंहू आदि डाली जाती है। इसे ही 'मिट्टी देना' कहते हैं। तत्पश्चात् सभी लोग किसी तालाब, नदी, कुएँ या घर पर आकर स्नान करते हैं।

बिश्नोई समाज का यह विश्वास है कि मृत्यु के बाद मृतक का जीव तीन दिनों तक परिजनों के साथ घर में ही रहता है। इसी विश्वास के आधार पर मृत्यु के दिन मिट्टी देने के बाद मृतक को घर की मुंडेर पर उसका मन पसन्द भोजन कौवों को खाने के लिये रखते है, इसे ही कागोळ देना कहते हैं। यह कागोळ दो दिन घर पर एवं तीसरे दिन मेहमानों के लिये बने हुए धान (हलवा) एवं दही की कागोळ

श्मशान या खेत में देते हैं, जहां मृतक को मिट्टी दी गई होती है। इसके बाद घर आकर एक नये घड़े में पानी भरकर उसे किसी ऊनी वस्त्र में से छानते हुए अनाज के दानों के साथ खेजड़ी की जड़ में बरसाया जाता है, जिसे 'बारा ढ़ालणा' कहते हैं। इसके साथ ही मृतक के जीव की उस घर से परिजनों की ओर से अन्तिम विदाई हो जाती है। इसके बाद वह जीव उस घर को त्यागकर स्वर्ग लोक की ओर प्रस्थान कर जाता है। इस क्रिया के बाद लोग पाहळ ग्रहण करते हैं और आये हुए सभी मेहमान भोजन करते हैं। भोजन के उपरान्त शोक समाप्त करने के प्रतीक रूप में मृतक के पुत्रों को उनके ससुराल के लोगों की ओर से पगड़ी व चादर दी जाती है, जिसे 'पागड़ी-पोतिया' करना कहते हैं। इसी तरह घर की बेटियों एवं बहुओं को भी वस्त्र भेंट किये जाते हैं, जिसे ओढ़ावणी कहते हैं। रात्रि को मृतक के जीव के कल्याण हेतु गुरु जाम्भोजी का जम्मा लगाया जाता है और प्रातः काल हवन, कलश स्थापना एवं पाहळ किया जाता है।

★ व्रत और त्योहार

बिश्नोई समाज हिन्दू समाज का अभिन्न अंग है। इसके साथ-साथ उसकी अपनी एक अलग पहचान है। इसी कारण बिश्नोई समाज हिन्दुओं द्वारा मनाये जाने वाले व्रत व त्योहारों को उसी तरह से मनाता है जैसे हिन्दू समाज उन्हें मनाता आया है पर कुछ व्रत एवं त्योहारों का आयोजन अलग प्रकार से किया जाता है। बिश्नोई समाज में अमावस्या के व्रत का सर्वाधिक महत्त्व है। अमावस्या का व्रत रखना बिश्नोई धर्म के उनतीस नियमों में भी है। इसी कारण बिश्नोई समाज में अमावस्या का व्रत रखा जाता है। अमावस्या का व्रत अमावस्या के लगने एवं उतरने तक रखा जाता है। अमावस्या को कई प्रकार के दैनिक कार्य नहीं किये जाते, विशेषकर ऐसे कार्य जिनके करने से मूक पशुओं को कष्ट पहुंचता हो या जीव हिंसा होती हो। अमावस्या को लोग प्रातःकाल सामूहिक हवन करते हैं, कलश की स्थापना करके पाहळ बनाते हैं और ग्रहण करते हैं। दिन में तालाब से मिट्टी निकालते हैं और स्त्रियां भजन गाती हैं। बिश्नोई समाज में होली को छोड़कर अन्य हिन्दू त्योहार बड़े आनन्द के साथ मनाये जाते हैं। अपने को प्रहलाद पंथी मानने के कारण बिश्नोई होली के त्योहार को अलग प्रकार से मनाते हैं।

भक्त प्रहलाद के पिता हिरण्यकश्यप ईश्वर विरोधी थे। वे भक्त प्रहलाद को भी ईश्वर भक्ति के रास्ते से हटाना चाहते थे। अनेक प्रयास करने पर जब उन्हें सफलता नहीं मिली तो उन्होंने अपनी बहिन होलिका के द्वारा भक्त प्रहलाद को अग्नि में जलाने का षड्यन्त्र रचा। इस षड्यन्त्र में होलिका जल गई और प्रहलाद बच गये। बाद में भगवान ने भक्त प्रहलाद के उद्धार हेतु नृसिंह के रूप में अवतार लिया। नृसिंह भगवान नें हिरण्यकश्यप का वध किया और भक्त प्रहलाद का उद्धार किया। उस समय भक्त प्रहलाद के तेतीस करोड़ अनुयायी थे। प्रहलाद ने इन्हीं तेतीस करोड़ अनुयायियों के उद्धार का वचन भगवान से मांगा था। भगवान ने इन तेतीस करोड़ जीवों के उद्धार का वचन प्रहलाद को दिया था, जिनमें से पांच करोड़ को प्रहलाद के साथ मुक्ति दे दी। सात करोड़ का त्रेतायुग में राजा

हरिश्चन्द्र के साथ तथा नौ करोड़ का उद्धार द्वापर में राजा युधिष्ठिर के साथ कर दिया गया। शेष बारह करोड़ जीवों के उद्धार हेतु गुरु जाम्भोजी को कलियुग में आना पड़ा। कलियुग में गुरु जाम्भोजी ने जिन बारह करोड़ लोगों के उद्धार का वचन दिया था, वे सब प्रहलाद पंथी थे। इसी आधार पर बिश्नोई अपने आप को प्रहलाद पंथी मानते हैं।

प्रहलाद पंथी होने के कारण होली बिश्नोइयों के लिये शोक का त्योहार है। भक्त प्रहलाद को होलिका के द्वारा जलाने की आशंका से बिश्नोई होली की सन्ध्या को किसी प्रकार का उत्सव नहीं मनाते। प्रात: काल प्रहलाद के जीवित होने की सूचना पर प्रसन्नता प्रकट करते हैं। सामूहिक हवन करते हैं और कलश की स्थापना करके पाहळ किया जाता है। होली के इस पाहळ को सभी ग्रहण करते हैं और बाद में भोजन करते हैं। इसी कारण बिश्नोई समाज में होली के पाहळ का विशेष महत्व है

22. वृक्ष रक्षा के लिये दिये गये बलिदान

आज पूरे विश्व में पर्यावरण प्रदूषण की एक भयंकर समस्या उत्पन्न हो गई है। इस समस्या का प्रभाव हमारे देश पर भी पड़ रहा है। आज यह समस्या मानव जीवन को ही निगलने को तैयार हो रही है। यद्यपि गुरु जाम्भोजी के समय पर्यावरण प्रदूषण की कोई समस्या नहीं थी तथापि उन्होंने इस समस्या की भयंकरता को समझा था और इसके समाधान के पक्के उपाय बताये हैं। पर्यावरण संरक्षण के सम्बन्ध में गुरु जाम्भोजी ने जो विचार व्यक्त किये हैं, उनके आधार पर उन्हें विश्व का प्रथम पर्यावरणविद् कहा जा सकता है। आज पूरा संसार इस समस्या से चिन्तित है। इसी कारण आज विश्व में जहां-जहां गुरु जाम्भोजी की विचारधारा पहुँच रही है, वहां-वहां वे देश गुरु जाम्भोजी की विचारधारा को अपनाते जा रहे हैं। जिस दिन पूरा विश्व गुरु जाम्भोजी की विचारधारा को अपना लेगा, उस दिन विश्व में पर्यावरण प्रदूषण की कोई समस्या नहीं रहेगी।

प्रकृति के प्रमुख घटक तीन है - मानव, पेड़-पौधे व अन्य प्राणी। इन तीनों में मानव अपनी रक्षा खुद कर सकता है। शेष दोनों घटकों की रक्षा मानव की इच्छा पर निर्भर है। मानव का हित इन दोनों को सुरक्षित रखने में है। इन तीनों घटकों में जब सन्तुलन रहता है तो पर्यावरण शुद्ध रहता है और इनमें जब सन्तुलन बिगड़ता है तो पर्यावरण प्रदूषित हो जाता है। इन्हीं सब बातों को समझकर गुरु जाम्भोजी ने पर्यावरण संरक्षण के लिये जो मूल मंत्र दिया है, वह है- ''जीव दया पालणी अर् रूंख लीलो नहिं घावै'' अर्थात् पृथ्वी के समस्त जीवों पर दया करो और हरे वृक्ष मत काटो।

प्रदूषण को समाप्त करने एवं पर्यावरण को शुद्ध रखने के लिये वृक्ष सबसे उत्तम साधन है। वैसे भी वृक्ष मानव के लिये बहुत उपयोगी हैं। वृक्षों के बिना प्राणीमात्र के जीवन की कल्पना नहीं की

जा सकती। वृक्षों की उपयोगिता के आधार पर मनुष्य उसे देवता मानकर उसकी पूजा करता आ रहा है। वृक्षों की इसी उपयोगिता एवं उसे प्राण युक्त मानकर गुरु जाम्भोजी ने अपने अनुयायियों में वृक्ष-प्रेम की भावना जाग्रत की थी। पर्यावरण को शुद्ध रखने एवं लोगों में वृक्ष प्रेम की भावना जाग्रत करने के उद्देश्य से ही गुरु जाम्भोजी ने स्थान-स्थान पर खेजड़ी के वृक्ष लगाये थे, जो आज भी देखे जा सकते हैं। गुरु जाम्भोजी ने वृक्षों की रक्षा की दृष्टि से ही उनतीस नियमों में एक नियम बनाया था कि हरे वृक्ष मत काटो। गुरु जाम्भोजी के बाद संत-वील्होजी ने वृक्षों की रक्षा का बहुत प्रचार-प्रसार किया था। उनके इस प्रचार-प्रसार का बिश्नोई समाज पर बहुत प्रभाव पड़ा था। लोग वृक्षों के महत्त्व को अच्छी तरह से समझ गये थे और वृक्षों की रक्षा के लिये तैयार हो गये थे। लोगों के हृदय में '**सिर सांटे रूंख रहे तो भी सस्तो जांण**' की भावना स्थापित हो गई थी। इसी भावना के कारण बिश्नोई समाज ने वील्होजी के समय में ही वृक्षों की रक्षा के लिये प्राण न्यौछावर करने प्रारम्भ कर दिये थे।

इस संसार में अनेक लोगों ने दूसरों के लिये अपने जीवन का बलिदान किया है। कुछ लोगों ने मातृभूमि की रक्षा के लिये अपने जीवन का बलिदान किया है तो कुछ ने मानव, पशु-पक्षी एवं विभिन्न जीव-जन्तुओं की रक्षा के लिये अपने प्राण न्यौछावर किये हैं पर वृक्षों की रक्षा के लिये प्राण न्यौछावर करने वाला केवल बिश्नोई समाज ही है। बिश्नोई समाज में वृक्ष-रक्षा के लिये प्राण न्यौछावर करने की एक लम्बी परम्परा रही है। बिश्नोई समाज के अतिरिक्त ऐसी एक भी घटना विश्व इतिहास में नहीं है।

करमां और गौरां का बलिदान :- बिश्नोई पंथ में वृक्षों की रक्षा के लिये अपने जीवन का बलिदान करने की पहली घटना जोधपुर राज्य के रामासड़ी गाँव में घटित हुई थी। यह घटना वि. सं. 1661 की ज्येष्ठ वदि दूज, शनिवार को घटित हुई थी। 17 वीं शताब्दी में रामासड़ी गाँव में अनेक बिश्नोई रहते थे। बिश्नोइयों के कारण इस गाँव में खेजड़ी के अनेक वृक्ष थे। इसी गाँव में करमां एवं श्रीमती गौरां बिश्नोई रहती थी। दोनों ही गुरु जाम्भोजी के बताये हुए रास्ते पर चलती थी। दोनों के आचार-विचार समान थे। इसलिये दोनों पक्की सहेलियां थी। वह रजवाड़ों का युग था। गाँव के ठाकुर गाँव के वृक्षों को अपनी जायदाद मानते थे। वृक्षों को काटना वे अपना अधिकार मानते थे। इसी आधार पर गाँव के ठाकुर ने वृक्षों को काटने के लिये अपने कारिन्दों को रामासड़ी गाँव में भेजा। कारिन्दों के गाँव में पहुंचते ही वृक्षों की कटाई की बात पूरे गांव में फैल गई। गौरां एवं करमां को भी इसकी जानकारी हो गई थी। दोनों ने वृक्षों को बचाने का निर्णय लिया और विष्णु को स्मरण करके घर से निकल पड़ी। गांव के चौराहे पर उन्होंने वृक्ष काटने वालों को रोका पर उनकी बातों का उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। तब उन्होंने वृक्षों की रक्षा के लिये स्वेच्छा से अपने प्राण न्योछावर कर दिये। इस बलिदान से गांव का चौराहा लाल हो गया, जिससे वृक्ष काटने वाले घबराकर वहां से तुरन्त रवाना हो गये। इस घटना का वर्णन तत्कालीन कवि वील्होजी ने अपनी एक साखी में किया है। विश्व में वृक्षों की रक्षा के लिये

अपने जीवन का बलिदान करने की यह पहली घटना है। इस घटना से बिश्नोई समाज में वृक्ष रक्षा की भावना और प्रबल हो गई थी।

खींवणी खोखर, मोटा जी एवं नेतू नैण का बलिदान :- रामासड़ी गांव की इस घटना के कुछ वर्षो बाद ही तिलासणी गांव में भी वैसी ही घटना घटित हो गई। यह गांव जोधपुर की बिलाड़ा तहसील में है। उस समय तिलासणी में भी बहुत से बिश्नोई रहते थे और वे सभी वृक्षों से अत्यधिक प्रेम करते थे। इसी कारण गांव के सभी वृक्ष सुरक्षित थे। उन दिनों गोपालदास भाटी 'खेजड़ला' गांव में रहता था। तिलासणी गांव उसी के अधिकार में था। गोपालदास भाटी के गांव में किरपो भाटी रहता था। वह वृक्षों का दुश्मन था। एक दिन वह अपने साथियों को लेकर तिलासणी गांव के पास वृक्ष काटने पहुंच गया। वृक्षों की कटवाई रुकवाने के उद्देश्य से तिलासणी के लोग गोपालदास भाटी के पास पहुंचे। उन्होंने भाटी से वृक्षों की कटवाई रुकवाने की प्रार्थना की। इस प्रार्थना का गोपालदास भाटी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। तिलासणी के बिश्नोई वृक्ष रक्षा के लिये हिंसा का सहारा नहीं लेना चाहते थे। तब उन्होंने वृक्ष रक्षा के लिए अपने प्राण न्यौछावर करने का निश्चय किया। इसी निश्चय के आधार पर श्रीमती खींवणी खोखर, श्री मोटा जी खोखर एवं श्रीमती नेतू नैण ने वृक्ष-रक्षा के लिये अपने प्राण न्यौछावर कर दिये। इस पर गोपालदास ने वृक्षों की कटवाई रुकवा दी और किरपो भाटी को वापस बुला लिया। इस घटना से आसपास के क्षेत्र में यह बात पूर्ण रूप से स्थापित हो गई कि बिश्नोई अपने क्षेत्र में वृक्ष नहीं काटने देंगे। इस घटना का वर्णन कवि वील्होजी ने अपनी एक साखी में किया है, जो तिलासणी की साखी के नाम से प्रसिद्ध है।

बूचोजी ऐचरा का बलिदान:- वृक्षों की रक्षा के लिये प्राण न्यौछावर करने की एक घटना सम्वत् 1700 की है। यह घटना मेड़ता परगने के पोलावास गाँव की है। उस समय पोलावास में अधिकतर बिश्नोई रहते थे। इसी गाँव में बूचोजी ऐचरा रहते थे। गाँव के पास ही खेजड़ियों का घना वन था। उस समय रैन एवं राजौद में राव दूदा के वंशज रहते थे। पोलावास गाँव इनके ही अधिकार में था। राव दूदा को गुरु जाम्भोजी के आशीर्वाद से मेड़ते का खोया हुआ राज्य प्राप्त हुआ था पर उनके वंशज गुरु जाम्भोजी की इस कृपा को भूल गये थे। वे शक्ति के अहं में डूबे हुए थे। शक्ति के इसी अहं के कारण उन्होंने पोलावास के वन से होली जलाने के लिये वृक्ष कटवा लिये थे। इस घटना की जानकारी मिलने पर पोलावास तथा आसपास के गांवों के वृक्ष प्रेमी राजौद के सामन्तों के पास पहुंच गये। दोनों पक्षों में विवाद होने लगा पर कोई समझौता नहीं हुआ। इससे वृक्ष प्रेमी लोग उत्तेजित हो रहे थे। इस उत्तेजना को देखकर बूचोजी ऐचरा ने सोचा कि यहां किसी भी समय वृक्ष प्रेमी बड़ी संख्या में अपने प्राण त्याग सकते हैं। इसी आशंका के कारण उन्होंने वृक्ष काटने वालों के सरदार रतनसिंह से कहा कि अब आप मेरे शरीर को काट सकते हैं पर मैं आपको वृक्ष नहीं काटने दूंगा। इस पर दुष्ट एवं निर्दयी रतनसिंह ने बिना सोचे समझे बूचोजी के शरीर पर तलवार चला दी। इस तरह बूचोजी वृक्ष रक्षा के लिये शहीद

हो गये। यह घटना वि. सं. 1700 की चैत्र वदि तीज की है। इस घटना का वर्णन कवि केसौजी गोदारा ने अपनी एक साखी में किया है। हमें बूचोजी के बलिदान से प्रेरणा लेकर अधिक से अधिक वृक्ष लगाने हैं और उनकी रक्षा करनी होगी।

★ खेजड़ली बलिदान

वृक्षों की रक्षा के लिये प्राण न्यौछावर करने की रोमांचकारी एवं विश्वप्रसिद्ध घटना खेजड़ली बलिदान की है। यह घटना जोधपुर से 25 कि.मी. दूर खेजड़ली गांव में घटित हुई थी, जो खेजड़ली के खड़ाणें के नाम से प्रसिद्ध है।

सम्वत् 1787 में जोधपुर के महाराजा अभयसिंह थे। उस समय राज्य की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। ऐसे समय में राजा नया किला बनाना चाहते थे। उस युग में चूने से ही निर्माण कार्य होता था। इसलिये महाराजा ने चूना पकाने के लिये लोगों को लकड़ियों की खोज में इधर-उधर भेजा। लोगों ने सूचना दी कि खेजड़ली गाँव में खेजड़ी के पर्याप्त वृक्ष हैं। उस समय गिरधरदास भंडारी जोधपुर का हाकिम था। महाराजा ने भंडारी को ही लकड़ियों की व्यवस्था करने का कार्य सौंपा था। राजा की आज्ञा से भंडारी कारिन्दों एवं मजदूरों को लेकर खेजड़ली गाँव में पहुंच गया। वहां पहुंचकर उसने अपने आदमियों को वृक्ष काटने की आज्ञा दे दी। कुल्हाड़ियों की आवाज सुनकर उस गांव के बहुत से बिश्नोई वहां पहुंच गये और उन्होंने वृक्ष काटे जाने का विरोध किया। भंडारी ने कहा कि यदि आपको वृक्ष इतने ही प्रिय हैं तो इन्हें बचाने के लिये आपको धन देना होगा। लोगों ने कहा कि हम धन देकर अपने धर्म को कलंकित नहीं कर सकते। बहुत प्रयास करने पर भी भंडारी को वृक्ष काटने में सफलता नहीं मिली। तब उन्होंने जोधपुर पहुंचकर महाराजा को सारी घटना सुना दी। इस समस्या के समाधान के लिये महाराजा ने अनेक वर्गों के लोगों से सलाह ली। सभी ने महाराजा को वृक्ष न काटने की सलाह दी और महाराजा ने उनकी सलाह स्वीकार कर ली पर भंडारी को यह निर्णय ठीक नहीं लगा। वह अपने साथ अधिक आदमियों को लेकर पुनः खेजड़ली पहुंच गया। खेजड़ली के लोगों ने अपने आसपास के चौरासी गांवों में वृक्ष काटे जाने की सूचना भेज दी। सूचना मिलते ही विभिन्न गांवों के लोग वहां पहुंच गये। उन सभी ने वृक्ष काटे जाने का विरोध किया पर भंडारी पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ा और उसने वृक्ष कटवाने प्रारम्भ कर दिये। तब सब लोगों ने वृक्षों की रक्षा के लिये सिर सौंपने का निर्णय लिया। इस निर्णय के अनुसार वहां उपस्थित सभी लोग वृक्षों से चिपक गये। इसका भी भंडारी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। भंडारी की आज्ञा से उसके कारिन्दों ने वृक्षों से चिपके हुए लोगों पर कुल्हाड़ियों से प्रहार करना प्रारम्भ कर दिया। कुल्हाड़ियों के प्रहार से लोगों के सिर कट-कट धरती पर गिरने लग गये। धरती खून से लाल हो गई। इस बलिदान में सर्वप्रथम अणदो जी शहीद हुए। उनके बाद बिरतोजी, चावोजी, ऊदोजी, कान्होजी, किसनोजी एवं दयाराम आदि वीर शहीद हो गये। वृक्ष रक्षा के इस महाबलिदान में स्त्रियों का

महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। स्त्रियों में सर्वप्रथम अमृता, दामी, चीमा आदि ने अपने जीवन का बलिदान किया। इतनी बड़ी संख्या में सिर सौंपने से भी लोगों के उत्साह में कोई कमी नहीं आ रही थी। वे दुगुने वेग से भाग-भागकर वृक्षों से चिपक रहे थे। इसी बीच इस नरसंहार की सूचना जोधपुर के महाराजा के पास पहुंच गई। उन्होंने तुरन्त वृक्षों की कटवाई रूकवा दी। महाराजा ने यह भी आदेश भेजा कि भविष्य में उनके राज्य में बिश्नोइयों के गांवों में कोई भी हरा वृक्ष नहीं काटेगा। महाराजा द्वारा वृक्षों की कटवाई रुकवाने से पूर्व वहां 363 स्त्री-पुरुष शहीद हो चुके थे। इस घटना की पूर्णाहुति वि. सं. 1787 की भादो सुदि दशमी मंगलवार को हुई थी। तत्कालीन कवि गोकुलजी ने अपनी एक साखी में इस घटना का वर्णन किया है।

बिश्नोई समाज के लोग सदियों से अपने प्राण देकर वृक्षों की रक्षा करते आ रहे हैं। इस आधार पर बिश्नोई समाज का पर्यावरण संरक्षण में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है पर शिक्षा के अभाव में वृक्षों के लिये किये गये बलिदानों का व्यापक प्रचार-प्रसार नहीं हो पाया। स्वतंत्रता के बाद जैसे-जैसे समाज में शिक्षा का प्रचार-प्रसार हुआ वैसे-वैसे इन बलिदानों का प्रचार-प्रसार होना प्रारम्भ हो गया। इसी के परिणाम स्वरूप सन् 1978 में बिश्नोई समाज की ओर से अखिल भारतीय जीव रक्षा बिश्नोई सभा ने वृक्षों के लिये शहीद होने वालों को सामूहिक रूप से श्रद्धांजलि देने का निर्णय लिया। इसी निर्णय के अनुसार सन् 1978 की भादवा सुदि दशमी को खेजड़ली में मेले का आयोजन किया गया। यहां वृक्ष प्रेमियों ने शहीदों की याद में 363 वृक्ष लगाये। तब से यह मेला प्रतिवर्ष आयोजित हो रहा है। यह मेला बिश्नोइयों के वृक्ष-प्रेम का प्रतीक है। खेजड़ली गांव के पास शहीद स्थल पर गुरु जाम्भोजी का एक मन्दिर बना हुआ है। मन्दिर के पास कोई तीन सौ वर्ष पुराना जाल का वृक्ष है। यह वृक्ष शहीदों का साक्षी है। इस जाल के वृक्ष के पास ही एक छोटा सा तालाब है, जिसे अब पक्का बना दिया गया है। इस जाळ एवं नाडी (छोटा तालाब) के कारण ही इस क्षेत्र के लोग आज भी इस स्थान को 'जालनाडिया' के नाम से पुकारते हैं। अब यहां शहीदों की स्मृति में एक शहीद स्मारक भी बना दिया गया है।

23. वन्य जीवों की रक्षा के लिये दिये गये बलिदान

गुरु जाम्भोजी अहिंसा के प्रबल समर्थक रहे हैं। वे चाहते थे कि मनुष्य मन, वचन एवं कर्म से अहिंसा का पालन करे। समाज में अहिंसा का वातावरण निर्मित करने के लिये ही उन्होंने सबदवाणी में हिंसा का तर्क युक्त विरोध किया है। गुरु जाम्भोजी के समय में अबाध गति से जीव-हत्या होती थी। इसी जीव-हत्या को रोकने के लिये उन्होंने अनेक प्रयास किये थे और अपने उपदेशों से लोगों को जीवन का सही रास्ता बताया था। उन्होंने स्थान-स्थान पर भ्रमण करके अनेक राजाओं से गो-हत्या बंद करवायी थी। मानव समाज को हिंसा मुक्त देखने के उद्देश्य से ही गुरु जाम्भोजी द्वारा बताये गये उनतीस नियमों में से

अनेक नियम अहिंसा से सम्बन्धित हैं।

गुरु जाम्भोजी की विचारधारा में अहिंसा का विशेष महत्त्व होने के कारण बिश्नोई समाज के लोग अहिंसा का बड़ी दृढ़ता से पालन करते आ रहे है। गुरु जाम्भोजी के बाद सन्त वीलहोजी ने भी साहित्य के द्वारा समाज में व्याप्त अहिंसा की भावना को और अधिक दृढ़ करने का प्रयास किया था। वील्होजी इस बात पर अधिक बल देते रहे हैं कि हमें हिंसा के विरोध में अपने जीवन का भी बलिदान कर देना चाहिये। वील्होजी की इस शिक्षा के कारण लोग मन, वचन एवं कर्म से अहिंसा का पालन करने लग गये थे। स्वयं अहिंसा का पालन करना एक सरल काम है पर दूसरों से अहिंसा का पालन करवाना बहुत ही कठिन काम है। बिश्नोई इसी कठिन काम को निरन्तर करते आ रहे हैं, जिसके परिणाम स्वरूप बिश्नोई न तो स्वयं जीव-हत्या करते हैं और न अपने सामने किसी को करने देते हैं। इसी विशेषता के कारण बिश्नोई समाज के लोग समय-समय पर अपने जीवन का बलिदान करके वन्य जीवों की रक्षा करते आ रहे हैं, जिससे बिश्नोई पंथ का इतिहास वन्य जीवों की रक्षा के बलिदानों से भरा पड़ा है। इन समस्त बलिदानों की प्रेरणा लोगों को गुरु जाम्भोजी से प्राप्त हुई है। गुरु जाम्भोजी ने एक सबद में कहा है कि अच्छा काम करते हुए यदि मनुष्य के जीवन में बाधा आती है तो मनुष्य को पश्चात्ताप नहीं करना चाहिये। गुरु जाम्भोजी की इस सीख को लोगों ने पूरी तरह से अपने मन में स्थापित कर रखा है। गुरु जाम्भोजी की इस सीख से प्रेरित होकर लोग वन्य प्राणियों की रक्षा के लिये अपने जीवन का बलिदान करते आ रहे हैं।

चूनाराम का बलिदानः- 19 मई 1939 को जोधपुर जिले के रोहिचा कलां गांव के श्री चूनाराम पुत्र श्री हरदान गोदारा ने हिरणों की रक्षा करते हुए अपने प्राण न्यौछावर कर दिये।

चिमनाराम व प्रतापराम का बलिदान :- 12 जुलाई 1947 को बाड़मेर जिले के बारासण गांव के श्री चिमनाराम पुत्र श्री गोरखाराम मांझू तथा श्री प्रतापराम पुत्र श्री पोलाराम मांझू हिरणों की रक्षा के लिये शहीद हो गये थे।

अर्जुनराम पंवार का बलिदानः- 3 फरवरी 1950 को ही जोधपुर जिले के भगतासणी गांव के 36 वर्षीय श्री अर्जुनराम पुत्र श्री प्रभुराम पंवार हिरणों की रक्षार्थ शहीद हो गये।

धोंकलराम माल का बलिदानः- सन् 1947 के आस पास रोटू जिला नागौर में श्री धोंकलराम माल ने हिरणों की रक्षार्थ अपना बलिदान दिया था।

भींयाराम का बलिदानः- 17 मई 1963 को इसी जिले के बनाड़ गाँव के 25 वर्षीय श्री भींयाराम पुत्र श्री लालाराम गोदारा ने हिरणों को बचाने के लिये अपने प्राणों की बलि दे दी थी।

लोहावट के बीरबलराम का बलिदानः- 17 दिसम्बर 1977 को जोधपुर जिले के लोहावट गांव के तीस वर्षीय श्री बीरबल राम पुत्र श्री बिड़दाराम खीचड़ हिरणों को बचाते हुए शहीद हो गये। इस घटना में अपराधियों को आजीवन कारावास की सजा भी मिली थी।

अरब शहजादे के शिकार पर रोकः- दिसम्बर 1978 को जब अरब शहजादा बदर

गोडावण के शिकार के लिये जैसलमेर आया तो सर्वप्रथम यहां के बिश्नोइयों ने उसके विरुद्ध आवाज उठायी और देश में अनेक स्थानों पर आन्दोलन हुए। बिश्नोइयों के इस विरोध के कारण अरब शहजादे को जनवरी 1979 में वापिस जाने के लिये विवश होना पड़ा। आज गोडावण जैसे दुर्लभ पक्षी की जो जाति जीवित है, वह बिश्नोइयों की जीव दया की भावना के कारण ही है।

मेहराणा (पंजाब) के वीर का बलिदानः- पंजाब के मेहराणा गांव के हजारीलाल पुत्र श्री भागीरथराम मांझू 19 मई 1990 को हिरणों की रक्षार्थ शहीद हो गये।

शहीद निहालचन्द को शौर्यचक्रः- 03 अक्तूबर 1996 को चूरू जिले के सांवतसर गांव के 35 वर्षीय श्री निहालचन्द पुत्र श्री हनुमानराम धारणिया हिरणों की रक्षार्थ शहीद हो गये। इस बलिदान पर भारत के राष्ट्रपति द्वारा 22 अक्तूबर 1999 को उन्हें मरणोपरान्त वीरता के सर्वोच्च सम्मान-शौर्यचक्र से सम्मानित किया गया। वीरता का यह सम्मान प्रायः सैनिकों को ही मिलता है पर इसे श्री निहालचन्द को देकर भारत सरकार ने जीव-दया की भावना का परिचय दिया है।

अभिनेता सलमान खान के विरुद्ध मुकदमाः- सितम्बर, 1998 को फिल्मी अभिनेता सलमान खान एवं उनके साथियों द्वारा जोधपुर जिले के गांव काकणी एवं गुड़ा बिश्नोईयान में हिरणों के शिकार करने पर उस क्षेत्र के बिश्नोइयों ने उनके विरुद्ध मुकदमा दर्ज करवाया और आन्दोलन करके उन्हें गिरफ्तार करवाया। बिश्नोइयों ने यह सब कुछ जीव दया की भावना से प्रेरित होकर किया था।

शहीद श्री गंगाराम को अमृतादेवी पुरस्कारः- 12 अगस्त सन् 2000 को जोधपुर जिले के चैराई गांव के श्री गंगाराम पुत्र श्री फूसाराम ईसरवाल ने हिरणों को बचाने के लिये अपने प्राणों की आहूति दे दी। उन्हें सन् 2001 को राज्य सरकार द्वारा अमृतादेवी पर्यावरण पुरस्कार से तथा 29 अक्तूबर 2002 को भारत सरकार द्वारा प्रथम अमृतादेवी पर्यावरण पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

गंगाराम ज्याणी का बलिदानः- 26 अप्रैल 2006 को पाली जिले के नेहड़ा गांव के श्री गंगाराम पुत्र श्री जीयाराम ज्याणी हिरणों की रक्षार्थ शहीद हो गये।

शैतानाराम भादू का बलिदानः- 28-29 जनवरी 2014 की रात्रि को ननेऊ गांव के श्री शैतानाराम भादू पुत्र श्री अर्जुनराम भादू हिरणों को बचाने के लिये शहीद हो गये। उनका अन्तिम संस्कार जाम्भोळाव में किया गया। बिश्नोई समाज में आज भी वन्य प्राणियों की रक्षा के लिये प्राण न्यौछावर करने की परम्परा चल रही है और कभी-कभी दूसरे लोग भी इन घटनाओं से प्रेरणा लेकर वन्य जीवों की रक्षा के लिये अपने प्राण न्यौछावर कर देते हैं।

★ वन्य जीव रक्षा एवं बिश्नोई महिलाएँ

चाहे वृक्ष रक्षा की बात हो और चाहे वन्य जीवों की रक्षा की बात हो, बिश्नोई महिलाएँ भी पुरुषों से पीछे नहीं रही हैं। कई बिश्नोई महिलाओं ने हिरणों के अनाथ बच्चों को अपने स्तनों का दूध पिलाकर, उनकी रक्षा की है। 10 मई 1978 को हिसार जिले के नाढ़ोड़ी गांव के क्षेत्र में एक हिरणी शिकारियों के भय से अपने नवजात शिशु से बिछुड़ गई थी। हिरणी के इसी नवजात बच्चे को नाढ़ोड़ी गांव की श्रीमती रामादेवी बिश्नोई उठा लाई और अपने स्तनों का दूध पिलाकर उसका पालन–पोषण किया। हिरण का यह बच्चा जब बड़ा हो गया तो उसे हिसार की सैंच्यूरी में पहुंचा दिया।

सन् 1980 में फिरोजपुर जिले के मेहराणा गांव की श्रीमती शारदा बिश्नोई शिकारियों को घायल करके हिरणों को बचाने में सफल हो गई। धांगड़ गांव की श्रीमती परमेश्वरी देवी भी अपने स्तनों का दूध पिलाकर हिरण के बच्चे का पालन–पोषण करने में सफल रही है।

आज पूरे देश में बिश्नोई संगठित होकर वन्य प्राणियों की रक्षा करने में लगे हुए हैं। इसी प्रयास के कारण आज कोई भी शिकारी बिश्नोई गांवों की सीमा में शिकार करने की हिम्मत नहीं कर पा रहे हैं। वृक्ष एवं जीव–रक्षा की भावना के कारण ही वृक्षों की अधिकता एवं हिरणों के झुण्ड बिश्नोई गांवों की पहचान के आधार बने हुए हैं। इस संसार में अनेक लोगों ने समय–समय पर पशु–पक्षियों की रक्षार्थ अपने जीवन का बलिदान किया है पर किसी पंथ या वर्ग विशेष में वन्य जीवों की रक्षार्थ प्राण न्यौछावर करने की परम्परा नहीं रही है। ऐसी परम्परा केवल बिश्नोई पंथ में ही देखी जा सकती है। पर्यावरण संरक्षण एवं अहिंसा की दृष्टि से यह परम्परा बहुत ही मूल्यवान एवं उपयोगी है। आज आवश्यकता इस बात की है कि बिश्नोई पंथ की इस परम्परा का अधिक से अधिक प्रचार–प्रसार करना चाहिये।

24. प्रमुख जांभाणी मंत्र

मंत्र के सम्बन्ध में कहा गया है कि जिससे हमारा मन स्थिर हो सके, वही मंत्र है। मंत्रों की संख्या अनेक हैं। ये अत्यधिक शक्तिशाली होते हैं, जिनसे मनुष्य को त्रिताप से मुक्ति प्राप्त हो जाती है और उसका जीवन सुखी बन जाता है। मंत्रों के निरन्तर जाप से मनुष्य के चारों ओर का वातावरण उर्जा युक्त हो जाता है और यही उर्जा मनुष्य के अनिष्ट का विनाश करती है और उसके विकास में सहायक होती है। मंत्रों से मोक्ष भी प्राप्त किया जा सकता है।

बिश्नोई पंथ में गुरु जाम्भोजी को विष्णु मानकर उनकी पूजा की जाती है। इसलिये पंथ में

उनके द्वारा कहे गये सबदों, मंत्रों एवं उनतीस नियमों का सर्वाधिक महत्त्व है। उनके द्वारा कहे हुए मंत्रों का सम्बन्ध विभिन्न संस्कारों से है। मंत्रों में निहित शक्ति के कारण ही इनका विभिन्न संस्कारों पर प्रयोग होता है और उनसे संस्कार विशेष को महत्त्व प्राप्त होता है।

★ गोत्राचार

विश्व के प्रायः सभी देश अग्नि को सर्वोच्च शक्ति या देवता मानकर उसकी किसी न किसी रूप में पूजा करते हैं। जल की तरह अग्नि में भी असीम शक्ति है। इसके बिना हम जीवन की कल्पना ही नहीं कर सकते। हमारे यहां भी अग्नि को देवता मानकर उसकी पूजा-अर्चना की जाती है।

गोत्राचार का सम्बन्ध अग्नि देव से है। इसमें अग्नि देव के वंश, गोत्र, स्वभाव एवं गुणों आदि का वर्णन किया गया है। गोत्राचार किसी एक कवि की रचना नहीं है अपितु यह विभिन्न कवियों की सूक्तियों का संग्रह है, जिसमें पार्वती व महादेव के संवादों के द्वारा अग्नि देव की महिमा का वर्णन किया गया है।

बिश्नोई पंथ में होम का सर्वाधिक महत्त्व है, जिससे अग्नि देव का महत्त्व स्वतः प्रकट हो जाता है। समाज में प्रत्येक संस्कार पर होम का होना आवश्यक है। यहां तक कि गुरु जाम्भोजी ने बिश्नोई पंथ की स्थापना भी हवन करके ही की थी। गोत्राचार का जो सर्वमान्य रूप है, वह इस प्रकार है:-

★ अथ गोत्राचार प्रारम्भ

ओ३म् जदूवासरूपम् पूज्यत्रम् सामनिधिम्। गुणनिधिम्। आकाश पितरम्। सतारामम्। पंचम पाताल मुखम्। वरुण ते शिव मुखम् ।।१।। श्रीपार्वत्युवाच- कस्मिन्मासे। कस्मिन् पक्षे। कस्मिन् तिथौ। कस्मिन्वासरे। कस्मिन् नक्षत्रे। कस्मिन् लग्ने। उत्पन्नौऽसौ।।२।। श्री महादेवउवाच।। आषाढ़ मासे, कृष्ण पक्षे, अर्द्धरात्रौ, मीन लग्ने, चतुर्दश्यां शनिवासरे, रोहिणी नक्षत्रे, ऊर्ध्वमुखे, दृष्टपाताले, अगोचरन्नामाग्निः।।३।। श्री पार्वत्युवाच।। कातस्य माता क्वतस्य पिता क्वतस्य गोत्रः, कति जिह्वा प्रकाशितः।।४।। श्रीमहादेव उवाच। अरणस माता वरुणष्पिता, शाण्डिल्यगोत्रे, वनस्पति पुत्रम्, पावकनामकम्, वसुन्धरम्।।५।। चत्वारि श्रृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वेशीर्षे सप्तहस्तासो अस्य। त्रिधावद्धो वृषभोरोरवीति महोदेवोमर्त्यां आविवेश।।६।। निखिलब्रह्माण्डमुदरे यस्य द्वादश लोचनम्। सप्त जिह्वा।।७।। काली कराली च मनोजवा च सुलोहिता या च सुधूम्रवर्णा स्फुलिङ्गिनी विश्वरूपी च देवी लेलायमाना इति सप्तजिह्वा।।८।। प्रथमस्तु घृतम्। द्वितीये यवम्। तृतीये तिलम्। चतुर्थे दधि। पञ्चमे क्षीरम्। षष्ठे श्रीखंडम्। सप्तमे मिष्टान्नम्। एतानि सप्तअग्नेर्भोजनानि। एतैः सप्तजिह्वा प्रकाश्यन्ते।।९।। ऊर्ध्वमुखा अधोमुखाभिमुखैः साहाय्यङ्करोति। घृत-मिष्टान्नादि पदार्थाः महाविष्णुमुखे प्रविशन्ति। सर्वे देवा ब्रह्मा विष्णुः महेश्वरादयस्तृप्यन्ति।।१०।।

बिश्नोई पंथ में प्रचलित मंत्र निम्नलिखित हैं-

★ सन्ध्या-मंत्र

एक बार गुरु जाम्भोजी की भूआ तांतू देवी ने गुरु जाम्भोजी से पूछा कि आप मेरे को ऐसा सरल उपाय बताये, जिससे मुझे मोक्ष की प्राप्ति हो जाये। इस पर गुरु जाम्भोजी ने भूआ तांतू को एक मंत्र सुनाया और कहा कि इसका जाप करके कोई भी मोक्ष प्राप्त करने में सफल हो सकता है। गुरु जाम्भोजी द्वारा भूआ तांतू को सुनाये गये मंत्र को ही सन्ध्या-मंत्र या नवण-मंत्र कहते हैं। यह मंत्र समाज में बहुत प्रसिद्ध है और बहुत से लोगों को कण्ठस्थ है। सन्ध्या मंत्र इस प्रकार है-

★ श्री गुरु जम्भेश्वर प्रणीतम्

विसंन-2 तूं भणि रे प्राणी, साधां भगतां ऊधरणौ।
देवला सह दानूं दायस्ब दानूं, मदसुदानूं महंमहणौ।
चेतोचित जांणी सारंग पांणी, नादे वेदे निज रहणौ।
आदि विसंन वाराहूँ, दाढां कर धर उधरणौ।
लिछमीं नारायण निहचल थांणौ, थिर रहणौ।
मोहन आप निरंजण सांमी,
भणि गोपालू त्रिभूवण तारूं। भणता गुणता पाप खयौ।
तिह तूठै मोख मुगति ज लाभै, अवचल राजूं खाफर खानूं खै गुवणौ।
चीतै दीठै मिरघ तरासै, बांघा रोलै गऊ तरासै, तीर पूल्यै गुण बांण हयौ।
तपति बूझै धारा हरि बूठै यो विसंन जपंता पाप खयौ
ज्यों भूख को पालण अन्न अहारूं, विष को पालन गुरड़ दवारू।
कांही कांही पंखेरवां सींचांण तरासै, विंसन जपंता पाप विणासै।
विसनु ही मन विसनुं भणियो, विसनु ही मन विसनु रहियौ।
इकवीस कोड़ि बैकुण्ठ पहोता, साचै सतगुरु को मंत्र कहियौ।

★ कलश स्थापना मंत्र

बिश्नोई पंथ में जन्म, सुगरा, विवाह, मृत्यु, अमावस्या, होली एवं विभिन्न स्थानों पर आयोजित होने वाले धार्मिक मेलों पर कलश स्थापना, हवन एवं पाहळ आदि क्रियाएं अनिवार्य रूप से होती हैं। सर्वप्रथम यज्ञकर्त्ता मिट्टी के नये घड़े को जल से भरकर तथा उसके मुंह को नये सफेद वस्त्र से ढ़ककर यज्ञ वेदी के पास रखता है। इसके बाद सबदवाणी के सम्पूर्ण सबदों के सस्वर पाठ के द्वारा हवन किया जाता है। हवन के बाद यज्ञकर्त्ता वहां उपस्थित समाज के लोगों में से किसी बुजुर्ग को कलश पर हाथ रखने के लिये आमंत्रित करता है। वह बुजुर्ग कलश के सामने बैठकर अनाज के दानों के साथ दोनों हाथ

कलश पर रखता है। इसके बाद यज्ञकर्त्ता बुजुर्ग के हाथों पर हाथ रखकर गुरु जाम्भोजी के आदेश पर मंत्र पढ़ना प्रारम्भ करता है, इसी मंत्र को कलश स्थापना मंत्र कहते हैं। इस मंत्र में सृष्टि की उत्पत्ति एवं उसके विकास का वर्णन है। कलश पूजा मंत्र इस प्रकार है–

★ अथ कलश पूजा मंत्र प्रारम्भ

ओं अकलरूप मनसा उपराजी। तामा पांच तत्त्व होय राजी।।1।। आकाश वायु तेज जल धरणी। तामा सकल सृष्टि की करणी।।2।। ता समरथ का सुणो विचार। सप्तदीप नवखण्ड प्रमाण।।3।। पांच तत्व मिल इण्ड उपायों। विगस्यो इण्ड धरणि ठहरायों।।4।। इण्डे मध्ये जल उपजायों। जलमां विष्णु रूप ऊपनों।। ता विष्णु को नाभकवल बिगसानों। तामां ब्रह्मा बीज ठहरानों।।5।। तां ब्रह्मा की उत्पति होई। भानै घड़ै संवारै सोई।।6।। कुलाल कर्म करत है सोई। पृथिवी ले पाके तक होई।।7।। आदि कुम्भ जहां उत्पन्नों। सदा कुम्भ प्रवर्तते।।8।। कुम्भ की पूजा जे नर करते। तेज काया भौखण्डते।।9।। अलील रूप निरंजनों । जांके न थे माता न थे पिता न थे कुटुम्ब सहोदरम्।। जे करै ताकी सेवा। ताका पाप दोष क्षयो जायंते।।10।। आदि कुम्भ कमल की घड़ी। अनादि पुरुष ले आगे धरी।।11।। बैठा ब्रह्मा बैठा इन्द्र। बैठा सकल रवि अरु चन्द्र।।12।। बैठा ईश्वर दो कर जोड़। बैठा सुर तेतीसां कोड़।।13।। बैठी गङ्गा जमुना सरस्वती। थरपना थापी बाल निरंजन गोरख जती।।14।। सत्रह लाख अठाइस हजार सतयुग प्रमाण। सतयुग के पहरे में सुवर्ण को घाट। सुवर्ण को पाट। सुवर्ण को कलश। सुवर्ण को टको। पांच क्रोड़या के मुखी गुरु श्री प्रहलाद जी महाराज कलश थाप्यो। वै कलश जो धर्म्म हुआ सो इस कलश हुइयो श्री सिद्धेश्वर महाराज भला करियो ओ३म् विष्णो तत्सत् ब्रह्मणे नमः।।15।। बारह लाख छयानवे हजार त्रेता युग प्रमाण। त्रेता युग के पहरे में रूपे को घाट। रूपे को पाट। रूपे को कलश। सुवर्ण को टको। सात क्रोड़या कै मुखी राजा हरिश्चन्द्र तारादे रोहितास कलश थाप्यो। वै कलश जो धर्म हुआ सो इस कलश हुइयो श्री सिद्धेश्वर महाराज भला करियो। ओ३म् विष्णो तत्सत् ब्रह्मणे नमः।।16।। आठ लाख चौसठ हजार द्वापर युग प्रमाण। द्वापर युग के पहरे में तांबे को घाट तांबे को पाट। तांबे को कलश। रूपे को टको। नव क्रोड़या कै मुखी राजा युधिष्ठिर कुन्ती माता द्रौपदी पांच पाण्डव मिल कलश थाप्यो। वै कलश जो धर्म हुआ सो इस कलश हुइयो। श्री सिद्धेश्वर महाराज भला करियो। ओ३म् विष्णो तत्सत् ब्रह्मणे नमः।।17।। चार लाख बत्तीस हजार कलियुग प्रमाण। कलियुग के पहरे में माटी को घाट माटी को पाट। माटी को कलश। तांबा को टको अनन्त क्रोड़या कै मुखी गुरु जम्भेश्वर कलश थाप्यो। वै कलश जो धर्म्म हुआ सो इस कलश हुइयो। श्री सिद्धेश्वर महाराज भला करियो। ओ३म् विष्णो तत्सत् ब्रह्मणे नमः।।18।।

★ पाहळ मंत्र

बिश्नोई पंथ में प्रत्येक संस्कार पर पाहळ अवश्य बनाया जाता है। गुरु जाम्भोजी ने भी सर्वप्रथम बिश्नोई पंथ की स्थापना के समय लोगों को पाहळ देकर ही बिश्नोई पंथ में दीक्षित किया था। बिश्नोई

पंथ में प्रत्येक संस्कार पर कलश पूजा मंत्र के बाद मिट्टी के कलश में भरे हुए जल को जिस मंत्र के द्वारा पाहळ बनाया जाता है, उसे पाहळ मंत्र कहते हैं। वस्तुतः अभिमंत्रित जल ही पाहळ कहलाता है। प्रत्येक संस्कार में उपस्थित सभी लोग पाहळ को बड़ी निष्ठा एवं श्रद्धा के साथ ग्रहण करते हैं और अपने जीवन को सात्विक बनाते हैं। प्रत्येक बिश्नोई जब-जब भी पाहळ ग्रहण करता है तो वह अपने मन में गुरु जाम्भोजी के द्वारा बताये गये नियमों पर दृढ़ रहने का संकल्प लेता है। पाहळ बनाने के लिये जो पाहळ मंत्र बोला जाता है, वह इस प्रकार है-

★ अथ पाहळ मंत्र प्रारम्भ

ओं नमो स्वामी शुभकरतार। निर्तार, भवतार, धर्म्म धार पूर्व एक ओंकार।।1।। साधूनां दर्शणम्पुण्यम्। सन्मुखे पापनाशणम्।।2।। जन्म फिरंता को मिलै। सन्तोषी सुचियार। अपणो स्वार्थ ना करै। पर पिण्ड पोषणहार।।3।। पर पिण्ड पोषणहार जीवत मरै। पावै मोक्ष हि द्वार।।4।। एहस पाहळ भाइयो साधे लिवी विचार। एहस पाहळ भाइयो थूले मेल्ही हार।।5।। एहस पाहळ भाइयो ऋषि सिद्धों के काज। एहस पाहळ भाइयो ऊधरियो प्रहलाद।।6।। तेतीस कोटि देवाकुली लाधो पाहळ बन्द। एहस पाहळ भाइयो ऊधरियो हरिचन्द।।7।। पाहळ लीन्हीं कुन्ती माता होती करणी सार। साधू एहा भेटिया मिल्यो मोक्ष को द्वार।।8।। आओ पांचों पाण्डवों। गुरु की पाहळ ल्योह। पाहळ सार न जाणहीं। तिसे पाहळ मत द्योह।।9।। पाहळ गति गंगा तणी। जेकर जाणै कोय। पाप शरीरां झड़ पड़ै। पुण्य बहुत सा होय।।10।। नेमतलाई नेमजल। नेम के जीमे पाहळ। कायम राजा आइयो। बैठो पाव पखाल।।11।। ऋषि थाप्या गति ऊधरै। देता दिये पाहळ। वन वन चन्दन न अगरण। सरसर कमल न फूल।।12।। एका एकी होय जपो ज्यों भागै भ्रमभूल। अड़सठ तीर्थ कांय फिरो। न इण पाहळ सम तूल।।13।। गोवल गोवल को को धवल। सब संता दातार। विष्णु नाम सदा जीम। पाहळ एह विचार।।14।। सद्गुरु बोले भाइयो। सन्त सिद्ध शुचियार।। मछ की पाहळ कच्छ की पाहळ। बाराह की पाहळ। नृसिंह की पाहळ। बावन की पाहळ। परशुराम की पाहळ। राम लक्ष्मण की पाहळ। कृष्ण की पाहळ। बुद्ध की पाहळ। निष्कलंक की पाहळ। सर्वाधार सर्वशक्तिमान सर्वेश्वर मेरी जम्भेश्वर की पाहळ।।16।।

★ बालक मंत्र

बिश्नोई के घर में शिशु के जन्म पर 30 दिन का सूतक रखा जाता है। इस अवधि में जच्चा-बच्चा के लिये घर में रहने की अलग व्यवस्था की जाती है। जच्चा पूर्ण विश्राम करती है, उसे गृहकार्य से पूर्णतः पृथक रखा जाता है तथा उसे पौष्टिक भोजन दिया जाता है। 31 वें दिन घर की पूर्ण सफाई की जाती है, बच्चे के सिर के बाल मुंडवाकर उसे अच्छी तरह स्नान करवाया जाता है और उसे नये वस्त्र पहनाये जाते हैं। उसके बाद संस्कारकर्त्ता कलश की स्थापना द्वारा हवन करके पाहळ करता है। इसी पाहळ को नवजात शिशु को देता है और उसके कानों

से छुवाता है। उस समय संस्कारकर्त्ता एक मंत्र पढ़ता है, जिसे बालक मंत्र कहते हैं। इसी मंत्र के द्वारा बिश्नोई घर में जन्मा नवजात शिशु बिश्नोई कहलाने के योग्य बनता है। जिस बालक मंत्र के द्वारा नवजात शिशु बिश्नोई बनता है, वह मंत्र इस प्रकार है :-

★ बालक मन्त्र

ओम् शब्द गुरु देव निरंजन। ता इच्छा से भये अंजन।।
हरि के हाथ पिता के पिष्ट। विष्णु माया उपजी सिष्ट।।
सप्तधात को उपज्यौ पिंड। नौ दस मास बालो रह्यो अघोर कुंड।।
अरध मुख ता उरध चरण हुतास। हरी कृपा से भया खलास।।
जल से न्हाया त्याग्या मल। विष्णु नाम सदा निरमल।।
विष्णु मंत्र कान जल छूवा। श्री जम्भगुरु कृपा से विश्नोई हुवा।।

★ साधु गुरु दीक्षा मंत्र

कभी-कभी किसी मनुष्य का मन गृहस्थ जीवन से उचट जाता है। तब वह गृहस्थ जीवन को छोड़कर साधुओं के डेरों में रहना प्रारम्भ कर देता है और उसकी रूचि साधु जीवन की ओर बढ़ने लगती है। वह किसी साधु के व्यक्तित्व एवं विचारों से प्रभावित होकर उसकी संगति में रहना प्रारम्भ कर देता है। दोनों के साथ-साथ रहने से वे एक-दूसरे को समझ लेते हैं और नया व्यक्ति अपने मन में साधु विशेष को अपना गुरु स्वीकार कर लेता है और साधु भी नये व्यक्ति को परख कर अपना शिष्य बनाने का मानस बना लेता है। इसके बाद किसी निश्चित दिन पर विभिन्न साधुओं की उपस्थिति में पूर्ण विधि-विधान (सबदवाणी का पाठ, हवन एवं पाहळ) के द्वारा गुरु बनने वाला साधु शिष्य बनने के इच्छुक व्यक्ति को दीक्षा मंत्र सुनाता है और उसे अपनी ओर से भगवी चादर देता है। इसे ही भेष देना कहते हैं और वह इच्छुक व्यक्ति उस साधु का शिष्य बन जाता है। उस दिन उस शिष्य को नया नाम दिया जाता है और उसका गृहस्थ जीवन से सम्बन्ध समाप्त हो जाता है। गुरु बनने वाला साधु अपने शिष्य को साधु बनाने के लिये जो मंत्र सुनाता है, उसे ही साधु दीक्षा मंत्र कहते हैं, जो इस प्रकार है-

★ साधु गुरु दीक्षा मन्त्र

ओं शब्द सोहं आप। अन्तर जपै अजप्या जाप।।
सत्य शब्दले लंघै घाट। बहुरि न आवै योनि वाट।।
परसै विष्णु अमृत रस पीवै। जरा न व्यापै जुग जुग जीवै।।
विष्णु मंत्र है प्राणाधार। जो कोई जपै सो उतरै पार।।
ओं विष्णु सोहं विष्णु तत स्वरूपी तारक विष्णुः।।

★ गुरु मंत्र

बिश्नोई घर में जन्मे बच्चे अनिवार्य रूप से किसी बिश्नोई साधु को अपना गुरु धारण करते हैं। गुरु धारण संस्कार को भी एक महत्त्वपूर्ण संस्कार माना जाता है। यही संस्कार सुगरा संस्कार कहलाता है। बाल्यावस्था की समाप्ति के बाद जब बच्चे किशोरावस्था में प्रवेश करते हैं, तब वे किसी भी समय किसी बिश्नोई साधु को अपना गुरु धारण कर लेते हैं। उस समय वह साधु विधि विधान के माध्यम से बालक–बालिका को जिस मंत्र के द्वारा अपना शिष्य बनाता है, उसे ही गुरु मंत्र या सुगरा मंत्र कहते हैं। गुरु धारण संस्कार के समय गुरु के द्वारा शिष्य को जो गुरु मंत्र दिया जाता है, वह इस प्रकार है–

★ गृहस्थ गुरु मन्त्र
(सुगरा मन्त्र)

ओम् शब्द गुरु सुरत चेला। पांच तत्व में रहे अकेला।।
सहजे जोगी शून्य में वास। पांच तत्व में लियो प्रकाश।।
ना मेरे माई ना मेरे बाप। अलख निरंजन आपही आप।।
गंगा यमुना बहै सरस्वती। कोई कोई नहावे बिरला यती।।
तारक मन्त्र पार गिराम। गुरु बतायो निश्चय नाम।।
जो कोई सुमिरै उतरै पार। बहुरि न आवै मैली धार।।

इन मंत्रों के अतिरिक्त हवन–ज्योति के विलियन के समय विभिन्न कवियों के धूप मंत्र बोले जाते हैं। हवन की समाप्ति पर ध्यान मंत्र का प्रयोग किया जाता है। यह मंत्र मूल रूप में बड़ा है पर वर्तमान में इसका संक्षिप्त रूप ही प्रचलित है, जो इस प्रकार है–

भले हूं भेटा देई, कुमाणस हूं पासे टाली।
आई बलाय दफै करी और सुख स्यांति राखी।।

25. बिश्नोई पंथ का साहित्य

बिश्नोई पंथ ने विश्व को केवल एक संतुलित एवं प्रगतिशील जीवन शैली ही नहीं प्रदान की, बल्कि एक उच्चकोटि के साहित्य की रचना करके भी इस क्षेत्र में अपना महनीय योगदान दिया है। बिश्नोई पंथ का अधिकांश साहित्य साधु–सन्तों द्वारा रचित है और उसके सुरक्षित रहने के इतिहास में उपर्युक्त साथरियों एवं पीठों का पूरा–पूरा योगदान रहा है। लगता है इन सन्तों ने यह कार्य अपना कर्त्तव्य समझकर किया था। सम्पूर्ण बिश्नोई साहित्य को सामूहिक रूप से 'जाम्भाणी साहित्य' कहा

जाता है। यह साहित्य न केवल परिमाण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है बल्कि विषयवस्तु एवं काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से भी उल्लेखनीय है। इस साहित्य में पूरे विश्व को दिशा देने की शक्ति अंतर्निहित है। इस महान साहित्य की हिन्दी साहित्य के इतिहास में जैसी घोर उपेक्षा हुई है, ऐसा कम ही होता है। इसके पीछे एक कारण इसका प्रकाशन में न आना भी रहा है। डॉ. हीरालाल माहेश्वरी ने इस पंथ के सम्पूर्ण साहित्य पर डी. लिट्. का शोध प्रबन्ध 'गुरु जाम्भोजी, विष्णोई पंथ और साहित्य' लिखा है। आगे दी गई कवियों एवं उनकी रचनाओं की सूची उक्त शोध प्रबन्ध के अनुसार है-

1. तेजो जी चारण - (1480-1575)- छन्द, गीत, साखी, हरजस, मरसिये।
2. समसदीन - (1490-1550)-साखी।
3. डेल्ह जी - (1490-1550)-बुध परगास, कथा अहंमनी।
4. आंछरे - (1500-1550)-साखी।
5. पद्म भगत - (1500-1555)-क्रिसण जी रो ब्यांवलो, पद, आरती, हरजस।
6. कील्ह जी चारण - (1500-1560)- बारामासो, कवित्त।
7. सुरजन जी (हुजूरी) - (1500-1570)-साखी।
8. सिवदास - (1500-1570)-साखी।
9. एकजी - (1500-1570)-साखी।
10. अमियांदीन - (1500-1570)-साखी।
11. जोधो रायक - (1500-1570)-साखी।
12. केसो जी देहड़ू - (1500-1580)-साखी।
13. लालचंद नाई - (1500-1580)-साखी।
14. कान्होजी बारहट - (1500-1580)-बावनी, फुटकर छन्द, गीत, कवित्त, हरजस।
15. आसनो जी- (1500-1600)-झूमखो।
16. कोल्ह जी चारण - (16 वीं शताब्दी)-छप्पय (कवित्त)।
17. उदो जी नैण-(1505-1593)-साखी, हरजस, आरती, कवित्त, ग्रभ चितांवणी।
18. अल्लू जी कविया-(1520-1620)-कवित्त, गीत, मरसिये।
19. दीन महमंद-(1525-1600)-हरजस।
20. रायचंद सुथार-(1525-1610)-साखियां।
21. कुलचन्द राय अग्रवाल - (1505-1593)-साखियाँ।
22. राव लूणकरण-(1526-1583)-कवित्त।

23. रेड़ो जी (1530-1620)-साखी।

24. वाजिन्द जी - (1530-1600)-साखी।

25. लखमण जी गोदारा - (1530-1593)-साखी।

26. आलम जी (1530-1610)-साखी, हरजस।

27. रैदास धतरवाल- (1530-1600)-साखी, हरजस।

28. भींवराज- (1530-1600)- साखी।

29. दीन सुदरदी (1535-1600)-साखियां।

30. मेहो जी गोदारा- (1540-1601)-रामायण।

31. रहमत जी- (1550-1625)-हरजस।

32. गुणदास- (1560-1640)-साखी।

33. लाखू- (1560-1650)-साखी।

34. वील्हो जी (1589-1673)- कथा धड़ाबंध, कथा औतारपात, कथा गुगलिये की, कथा पूल्है जी की, कथा दूणपुर की, कथा जैसलमेर की, कथा झोरड़ां की, कवत परसंग का, कथा ग्यानचरी, सच अखरी विगतावली, साखियां, हरजस, विसन छत्तीसी, छपइया, दूहा मंझ अखरा-अवतार का, छुटक साखी।

35. दसुंधीदास (17 वीं शताब्दी)-सवैया।

36. आनंद-(17 वीं शताब्दी) - कवत गोपीचन्द का,कवत कैरूवा पांडवां का महाभारत का, फुटकर छंद।

37. नानिंग (17 वीं शताब्दी)-साखी, नीसाणी।

38. लालो जी (17 वीं शताब्दी)-साखी, 'आंबेलो'।

39. गोपाल-(17 वीं शताब्दी)-फुटकर छन्द।

40. हरियो-(17 वीं शताब्दी)-गोपीचंद की साखी।

41. दुरगदास (1600-1680)-हरजस।

42. किशोर- (1630-1730)-सवैया।

43. कालू-(1630-1730)-साखियां।

44. केसो दास जी गोदारा। (1630-1736) - साखियाँ, हरजस, स्तुति अवतार की, दस अवतार का छन्द, कवित्त, चन्द्रायणा, कथा बाळलीला, कथा लोहापांगळ की, कथा ऊदै अतली की, कथा सैंसे जोखाणी की, कथा मैड़ते की, कथा चित्तौड़ की, कथा इसकंदर की, कथा जती-तलाव की, कथा विगतावली, प्रहलाद चिरत (प्रहलाद चरित्र), सवैए दूहा, कथा बहसोवनी, कथा भींव दुसासणी, कथा सुरगारोहणी, कथा

म्रघलेखा की।

45. सुरजनदास जी पूनिया-(1640-1748)-साखियां, गीत, हरजस, अंगचेतन, दस अवतार दूहा, असमेध जिग का दूहा, छंद, कवित, कवित्त बावनी, सवइए, कथा चेतन, कथा चितांवणी, कथा धरंमचरी, कथा हरिगुण, कथा औतार की, कथा परसिध, ग्यान महातम, ग्यान तिलक, कथा गजमोख, कथा उषा पुराण, भोगल पुराण, रामरासौ।

46. मिठु जी (1650-1750) - हरजस, सवैए।

47. माखन जी- (1650-1750)-हरजस, 'सोहलो'।

48. रामू खोड़ (1675/76-1700)-साखी।

49. रूपो वणियाल (1680-1750) साखी।

50. दामोजी- (1680-1750)-कवित्त, साखी।

51. देवो जी- (1700-1780) हरजस।

52. हरिनंद (1700-1780) हरजस, फुटकर छंद।

53. गोकल जी - (1700-1790) इन्दव छन्द, अवतार की विगति, परची, स्तुति होम की, साखियां।

54. रासानंद (1700-1800) हरजस।

55. मुकन जी- (1710-1790) फुटकर छन्द, हरजस।

56. सेवादास- (1720-1780) इन्दव छन्द, चौजुगी, पिसण सिंघार।

57. चतरदास (1700-1800) भजन (गोपीचंद विषयक)।

58. सुदामा (1700-1800)- बारहखड़ी।

59. हीरानंद- (1750-1800)-हिंडोलणो।

60. हरजी वणियाल (1745-1835)- साखियाँ, फुटकर छन्द।

61. परमानंद जी वणियाल- (1750-1845)- प्रसंग दोहे, हरजस, साखियां, विसन असतोत्र, फुटकर छन्द, साका (गद्य), छमछरी (संवत्सरी)।

62. गोविन्द राम जी बागड़िया (1750-1850)-जम्भाष्टक (संस्कृत)।

63. रामलला (1775-1850) रूक्मिणी मंगल, हरजस।

64. हरचंद जी ढुकिया (1775-1860) लघु हरि प्रहलाद चिरत, फुटकर कवित्त।

65. गंगाराम (1783-1883) हरजस।

66. सूरत राम (1787-1887) हरजस।

67. मयाराम दास (1800–1870) अमावस्या कथा, फुटकर छंद।

68. खैरातीराम मेरठी (1800–1860) बारहमासा।

69. विष्णुदास (1800–1885) आरती, हरजस, जम्भाष्टक की विष्णु विलास टीका।

70. हरिकिसन दास (1800–1899) पत्री (गद्य–पद्य)।

71. पोकर दास (1800–1850) नुगरी–सुगरी को झगड़ो, भजन।

72. ऊदो जी अड़ींग (1818–1933) प्रहलाद चिरत, विष्णु चिरत,कक्का छतीसी, लूर, फुटकर छन्द।

73. मोतीराम (1850–1950) आरतियाँ।

74. लीलकंठ वेचू (1860–1950) फुटकर छन्द।

75. गोविन्दराम जी गोदारा (1860–1950) वील्हो जी की स्तुति, साखियाँ, जम्भ महिमा वर्णन, विसनु सरूप (गद्य)।

76. खेमदास (1865–1951) कवित्त (छप्पय)।

77. साधु मुरलीदास (19 वीं शताब्दी) फुटकर छन्द।

78. पीताम्बर दास (19 वीं शताब्दी) आरती, हरजस, जम्भाष्टोतर शतनाम।

79. परसराम जी (19 वीं शताब्दी) दोहे।

80. केसौदास जी (19 वीं शताब्दी) मंगलाष्टक।

81. साहबराम जी राहड़ (1871–1948) सतलोक पहुँचने का परवाना, सार शब्द गुंजार, सार बत्तीसी, अमर चालीसी, महामाया की स्तुति, फुटकर रचनाएँ (आरती, साखियाँ, भजन, हरजस) जम्भसार।

82. बिहारी दास (1870–1950) फुटकर छंद, जम्भसरोवर स्तुति, जम्भाष्टक।

83. शीतल– (1900–1975) भजन और लावनी।

84. ईश्वरानन्द जी गिरी (संवत् 1891–1955) श्री जम्भसागर, सबदवाणी, श्री जम्भ संहिता, ब्राह्मण, वर्ण व्यवस्था, शिक्षा दर्पण।

85. स्वामी ब्रह्मानन्द जी– (1910–1985) श्री जम्भदेव चरित्र भानु, साखी संग्रह प्रकाश, मृतक संस्कार निर्णय, श्री वील्होजी का जीवन चरित्र तथा वील्होजी का संक्षिप्त वृतांत, बिश्नोई धर्म विवेक, विद्या और अविद्या पर व्याख्यान, गोत्राचार–विधि, इतिहास प्रदीप, आरती, भजन।

86. हिम्मतराय (1900–1980) फुटकर छन्द।

87. किशोरीलाल गुप्त (20 वीं शताब्दी उत्तरार्द्ध) फुटकर छन्द।

88. माधवानंद (1925–1975) भजन।

89. बद्रीदास (1950) भजन।

90. जगमालदास (1950–1960) आरती।

91. श्रीरामदास जी गोदारा (1920–2010) इन्होंने अनेक रचनाओं का सम्पादन, प्रकाशन एवं लेखन का कार्य किया था। जिनमें 17 सम्पादित एवं 7 प्रकाशन है।

92. कुम्भाराम जी पूनिया (1937–1995) निर्वेद ज्ञान प्रकाश, पंचयज्ञ, प्रश्नोत्तर मणिभाषा।

93. साधु जगदीशराम (1960–2005) भजन, साखी, आरती, फुटकर छन्द।

इनके अलावा 36 अज्ञात बिश्नोई कवियों का परिचय भी शोध प्रबन्ध में दिया गया है, जिनके अनेक हरजस, साखियाँ, कवित्त, छप्पय, डिंगल गीत, स्तोत्र, जम्भस्तुति एवं भजन प्राप्त होते हैं। यहाँ पर कुछ प्रमुख कवियों का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है।

जाम्भाणी साहित्य के प्रमुख कवि

जाम्भाणी कवि भक्ति, समाज सुधार एवं काव्य साधना साथ–साथ करते रहे हैं। इन कवियों की गुरु जाम्भोजी के प्रति अटूट आस्था रही है और ये उनतीस नियमों की पालना दृढ़ता से करते रहे हैं। इनके अथक प्रयास से समाज उतरोत्तर विकास करता आया है। बाद के कवि भी जाम्भाणी साहित्य की भक्ति काव्य धारा को आगे बढ़ाते रहे हैं। इन सब कवियों का यहाँ विस्तार भय के कारण वर्णन करना सम्भव नहीं है। इसलिये यहां जाम्भाणी साहित्य के कुछ प्रमुख कवियों का ही परिचय दिया जा रहा है, जिससे जाम्भाणी काव्य, कवियों का जीवन–स्वरूप, उनकी भक्ति एवं काव्य साधना को समझा जा सके।

★ तेजोजी चारण

तेजोजी चारण जाम्भाणी साहित्य के अति प्रसिद्ध कवि थे। उनका जन्म लाडणूं के पास कसूम्बी गांव में हुआ था। इनके पिता का नाम जैतसी था, जो सामौर शाखा के चारण थे। मांडण तेजोजी के छोटे भाई थे। सामौर एवं मोहिलों का सम्बन्ध बहुत पुराना था। मोहिलों ने जब छापर व द्रोणपुर पर अधिकार कर लिया था तभी से सामौरों का सम्बन्ध मोहिलों से चला आ रहा था।

तेजोजी चारण के समय अजीत सिंह मोहिल छापर–द्रोणपुर के शासक थे। राणा अजीत तेजोजी का बहुत सम्मान करते थे। अजीत का विवाह जोधपुर के राव जोधा की बेटी राजा बाई के साथ करवानें में तेजोजी का बहुत बड़ा योगदान था। तेजोजी और राणा अजीत का बहुत घनिष्ट सम्बन्ध था। इसी घनिष्ट सम्बन्ध के कारण तेजोजी ने राणा अजीत की मृत्यु पर अनेक मरसिये लिखे थे।

तेजोजी के एक पुत्र था, जिसका नाम जसराजजी (जसूदान) था। तेजोजी के प्रभाव के कारण ही लाडणूं के राजा जयसिंह ने जसूदान को लाडणूं में 12 बीघा बाड़ी मकान के लिये तथा 1500 बीघा जमीन प्रदान की थी। गुरु जाम्भोजी के महिमामय व्यक्तित्व से प्रभावित होकर तेजोजी सम्वत्

1542 के आसपास गुरु जाम्भोजी के शिष्य बन गये थे और बिश्नोई पंथ में दीक्षित हो गये थे। कहते हैं कि गुरु जाम्भोजी की कृपा से तेजोजी का जाम्भोळाव में स्नान करने से कुष्ट रोग समाप्त हो गया था।

तेजोजी ने अपनी काव्य रचना एवं सामाजिक कार्यों से जो प्रसिद्धि प्राप्त की थी उसका लोगों पर बहुत प्रभाव पड़ा था। इसी कारण उनके समकालीन एवं बाद में कवियों ने उनकी प्रशंसा में अनेक छन्द लिखे हैं। भ्रमण के समय तेजोजी प्राय: गुरु जाम्भोजी के साथ रहते थे। जैसलमेर के रावळ जैतसी ने जैत समन्द की प्रतिष्ठा पर गुरु जाम्भोजी को अपने यहां बुलाया था, तब तेजोजी भी उनके साथ गये थे। वहां एक ग्वाल चारण ने बिश्नोई पंथ के सम्बन्ध में अनेक प्रश्न पूछे थे, जिनका सटीक उत्तर तेजोजी ने ही दिया था और वहां उपस्थित लोगों को सन्तुष्ट किया था। वस्तुत: तेजोजी बिश्नोई पंथ के अति प्रसिद्ध एवं प्रामाणिक व्यख्याकार थे। इसी कारण चौबीसा की लूर, हिंडोलणो, जाम्भेजी रे भक्तां री भक्तमाल तथा हरिनन्द के हरजस में इनका नाम है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि इनका जन्म सम्वत् 1480-82 में तथा स्वर्गवास सम्वत् 1570-75 के मध्य हो गया था।

रचनाएँ-

छन्द-45, गीत-12, साखी-1, हरजस-1 तथा मरसिये। तेजोजी ने अपने काव्य में गुरु जाम्भोजी को ईश्वर मानते हुए अपने आप को उनके सामने पूर्ण रूप से समर्पित कर दिया है। कवि ने लोगों से पाखंड एवं दुष्कर्मों से दूर रहते हुए सत्कर्म करने की प्रेरणा दी है। उन्होंने अपने गीतों में तत्कालीन समाज की स्थिति, ईश्वर प्रेम, विष्णु स्मरण, संसार की नश्वरता एवं मृत्यु की अनिवार्यता का वर्णन किया है। इस आधार पर तेजोजी का न केवल जाम्भाणी साहित्य में अपितु राजस्थानी काव्य में भी विशिष्ट स्थान है।

★ डेल्हजी

जाम्भाणी साहित्य में हुजूरी कवियों में डेल्हजी प्रमुख कवि है। ये लालासर के आसपास के रहने वाले थे और जाति से ब्राह्मण थे। डेल्हजी गृहस्थ जीवन व्यतीत करते थे। अवस्था में ये गुरु जाम्भोजी से बड़े थे। अनुमान के आधार पर इनका जन्म सम्वत् 1490 में माना जाता है। गुरु जाम्भोजी की शिक्षा एवं उनकी महिमा से प्रभावित होकर ये उनके शिष्य बन गये थे। डिंगल कवि पीरदान लालस के ग्रन्थ 'परमेसर पुरान' में भक्तों एवं कवियों में इनका भी नाम है। जाम्भाणी साहित्य में इनकी दो रचनाएं मिलती हैं- (1) बुध परगास (साखी) (2) कथा अहंमनी (आख्यान काव्य)। इनकी साखी एवं कथा अहंमनी पर सबदवाणी का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इनकी यह 'साखी छंदां की' है, जो विहाग राग में गेय है। यह साखी इन्होंने अपने पुत्र को लक्ष्य करके लिखी है। डेल्हजी की यह साखी मरुप्रदेश में समाज के रीति-रिवाज, लोक-व्यवहार, मान्यताएं एवं विश्वास से

सम्बन्धित है। इसमें कवि ने समाज के लिये करणीय एवं अकरणीय कार्यों का वर्णन किया है। मरुप्रदेश जीवन, करणीय-अकरणीय कार्यों, नीति-कथन तथा ज्ञान-वर्णन के आधार पर जाम्भाणी साखियों में यह अपने प्रकार की एक ही साखी है।

कथा अहंमनी 717 छन्दों में धनासी, मारु, गवड़ी, धोवळ, सोरठ एवं आसाधाहड़ी आदि रागों में गेय एक पौराणिक आख्यान काव्य है। यह एक वर्णन प्रधान रचना है, जिसे संवादों के प्रयोग से नाटकीय बना दिया है। सांढ़ों, रैबारियों तथा मरुप्रदेश की विभिन्न वस्तुओं के वर्णन से इसे स्थानीय रंग से युक्त कर दिया है। ज्योतिष, शकुन एवं स्वप्न फल के वर्णन से यह काव्य अत्यन्त प्रभावशाली एवं मरुप्रदेश की विशेषताओं से ओत-प्रोत हो गया है। इसमें संगीत, वर्णनात्मकता एवं नाटकीय तत्वों की त्रिवेणी प्रवाहित होती हुई दिखाई देती है। कथा अहंमनी में वीर, श्रृंगार, करुण एवं शान्त रस की प्रधानता है। वस्तुतः यह काव्य मरुप्रदेश की आत्मा को अपने में संजोये हुए है। इसी कारण यह इतना मार्मिक एवं लोकप्रिय बना हुआ है। 16 वीं शताब्दी के मरुप्रदेशीय समाज के अध्ययन के लिये यह एक प्रामाणिक रचना है। आख्यान काव्य परम्परा को प्रारम्भ करने और उसे सुदृढ़ता प्रदान करने में डेल्हजी एवं कथा अहंमनी का महत्वपूर्ण योगदान है।

★ पदम भगत

पदम भगत नागौर के पास गुणावती के रहने वाले थे। ये तेली जाति के थे और बाद में इन्होंने बिश्नोई पंथ स्वीकार कर लिया था। ये बिश्नोई पंथ में कब दीक्षित हुए थे, इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। ये गृहस्थ जीवन को छोड़कर साधु बन गये थे। इस आधार पर ये बिश्नोई साधु हुजूरी बिश्नोई कवियों में बहुत प्रसिद्ध रहे हैं। इनकी प्रसिद्धि का प्रमुख कारण इनके द्वारा लिखा गया 'रुक्मिणी मंगल' और 'आरती' हैं।

बिश्नोई पंथ में जम्मे की प्रथा गुरु जाम्भोजी के समय से ही चली आ रही है। जम्मे में पदम भगत कृत 'कृष्ण जी रो ब्यांवलो' का गाया जाना तथा आधी रात के बाद पदम भगत की आरती गाने की प्रथा रही है। बिश्नोई पंथ में इन दोनों रचनाओं के इस महत्व से भी पदम भगत का बिश्नोई होना प्रमाणित है। इतर जाति के किसी व्यक्ति की रचनाओं को इतना महत्व नहीं दिया जा सकता।

पदम भगत कृत कृष्णजी रो ब्यांवलो, फुटकर पद, आरती एवं हरजस आदि रचनाएं ही उपलब्ध हैं। कृष्णजी रो ब्यांवलो और रुक्मिणी मंगल के नाम से भी प्रसिद्ध है। इनका रचनाकाल सम्वत् 1545 के आसपास माना जाता है। यह राजस्थानी काव्य का अत्यधिक लोकप्रिय आख्यान काव्य है। इसमें 260-261 छंद है, जिसमें दोहे-चौपई प्रमुख हैं। इनके फुटकर पद कृष्ण-रुक्मिणी के विवाह, ईश्वर भक्ति तथा आत्म निवेदन से सम्बन्धित हैं। एक मान्यता के अनुसार पदम भगत का स्वर्गवास सम्वत् 1555 के आसपास गुणावती में हुआ था।

★ कान्होजी बारहट

कान्होजी बारहट चाहड़जी के पुत्र थे। चाहड़जी रांपड़ास (जोधपुर) के निवासी थे। ये रोहड़िया शाखा के बारहट थे। कहते हैं कि चाहड़जी ने राव बीका को बीकानेर राज्य की स्थापना में अत्यधिक योगदान दिया था। उनके इसी योगदान के कारण राव बीकाजी ने उन्हें खुंडिया तथा चाहड़वास सहित 12 गांवों की ताजीम दी थी। इसके साथ-साथ उन्हें बीकानेर का 'पोळपात' बारहट बनाया था। खुंडिये में संवत् 1500 के आसपास कान्होजी का जन्म हुआ था। कान्होजी, राव बीकाजी एवं लूणकरण के समकालीन थे। राव लूणकरण को गुरु जाम्भोजी की ओर प्रेरित करने में इनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। अनुमान किया जाता है कि कान्होजी का स्वर्गवास सम्वत् 1580 के आसपास हुआ था। कान्होजी के बड़े भाई भीमजी के नाम से भींयासर गाँव का नाम पड़ा, जो कि इनके 12 गाँवों में सम्मिलित था। कान्होजी पुत्र विहीन थे। इस शाखा के उपलब्ध वंश वृक्ष से भी कान्होजी को पुत्र विहीन बताया है पर साहबराम जी का मत इससे भिन्न है। उन्होंने जम्भसार में लिखा है कि कान्होजी एक सम्पन्न एवं सम्मानित व्यक्ति थे पर पुत्र के अभाव में दुखी रहते थे। पुत्र प्राप्ति के लिये उन्होंने आठ वर्ष तक अनेक प्रयास भी किये थे पर वे सफल नहीं हुए। कहते है कि कवि अल्लूजी के कहने पर उन्होंने अपनी पत्नी को जाम्भोळाव का पानी पिलाया, जिससे उनके यथा समय पुत्र हुआ। यहाँ तक कि उन्होंने अपने पुत्र के विवाह पर गुरु जाम्भोजी को निमंत्रण देकर बुलाया था और वे साथरियों सहित कान्होजी के यहाँ पहुंचे थे, तब अल्लूजी भी वहां उपस्थित थे। इन दोनों ने गुरु जाम्भोजी का भव्य स्वागत किया था। आगे क्या हुआ, इसकी कोई प्रमाणिक जानकारी नहीं है, पर यह स्पष्ट है कि कान्होजी का वंश आगे नहीं चला था।

ऐसा अनुमान किया जाता है कि सम्वत् 1545 के आसपास वे गुरु जाम्भोजी के शिष्य बन गये थे। 24 की लूर, भक्तमाळ, हिंडोळणो और हरिनंद के एक हरजस में गुरु जाम्भोजी के भक्तों में इनका भी नाम है।

रचनाएँ-

1. बावनी (तेतीसी) 45 छन्द।
2. फुटकर छन्द- (क) जांगड़ो गीत-1 (ख) कवित्त-3 (ग) हरजस-1

बावनी राजस्थानी साहित्य का एक प्रसिद्ध काव्य रूप है, जिसमें कान्हजी की बावनी का महत्वपूर्ण स्थान है। कवि की मान्यता है कि सारी विद्या बावन अक्षरों में हैं पर इनका रहस्य जानना मुश्किल है। कवि ने क से बावनी प्रारम्भ की है।

फुटकर छन्दों में जांगड़ो गीत 7 दोहों का है, जिसमें अनेक प्रकार से जम्भ महिमा का वर्णन किया गया है। डिंगल गीतों में इस गीत का विशेष महत्व है। इसी तरह कवि के तीन कवित्त एवं एक हरजस का भी अपना वैशिष्ट्य है।

कान्हजी के काव्य की भाषा साधारण बोलचाल की है, जो मुहावरों से युक्त है। जाम्भाणी साहित्य के चारण कवियों एवं राजस्थानी के भक्त कवियों में इनका महत्वपूर्ण स्थान है।

★ आसनोजी

आसनोजी जोधपुर के पास महलाणा गाँव के रहने वाले थे और सोढ़ा जाति के भाट थे। ये आयु में गुरु जाम्भोजी से बड़े थे और उनके महिमामय व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उनके शिष्य बन गये थे। गुरु जाम्भोजी ने इन्हें गाने-बजाने का काम सौंपा था पर आगे चलकर इनके वंशज बिश्नोई समाज की वंशावली लिखने लग गये थे और आज भी वे इसी काम को कर रहे हैं। इसी आधार पर महलाणा गाँव बिश्नोई भाटों (बहीभाटों) का मूल गाँव है। ऐसा माना जाता है कि जाम्भोळाव के निर्माण के बाद आसनोजी की प्रार्थना पर गुरु जाम्भोजी भ्रमण करते हुए महलाणा के पास आकर ठहरे थे। उस समय तक आसनोजी बहुत वृद्ध हो गये थे और स्थायी रूप से इसी गाँव में रहने लग गये थे। गुरु जाम्भोजी के बैकुण्ठवास के बाद भी ये कुछ वर्षो तक जीवित रहे थे। ऐसा अनुमान किया जाता है कि ये 100 वर्ष तक (सम्वत् 1500 से 1600) जीवित रहे थे।

हस्तलिखित प्रतियों के हरजसों में आसनोजी भाट का एक दस दोहों का मल्हार राग में गेय 'झूमखो' मिलता हैं। कहते हैं कि मोती मेघवाल वाली घटना के बाद समराथळ पर कवि ने भाव विभोर होकर यह 'झूमखो' गाया था। इसमें कवि ने विभिन्न प्रतीकों के माध्यम से अपने अनुभव का वर्णन किया है। बिश्नोई बही भाटों की बहियों में लिखित वंशावली में बिश्नोई पंथ का इतिहास सुरक्षित है। शोध की दृष्टि से इन बहियों को प्रामाणिक माना जाता है। बिश्नोई पंथ के लोगों ने समय-समय पर वृक्ष रक्षा एवं वन्य जीवों की रक्षा के लिये जो बलिदान दिये हैं, वे बहीभाटों की बहियों में लिपिबद्ध है। खेजड़ली बलिदान के 363 स्त्री-पुरुषों की सूची भी आसनोजी भाट के वंशजों से प्राप्त हुई है। '24 की लूर' में 19 वां नाम आसनोजी का है।

★ ऊदोजी नैण

ऊदोजी नैण, जाम्भाणी साहित्य के प्रसिद्ध कवि एवं आचार्य थे। ये बिश्नोई पंथ के श्रेष्ठ वक्ता थे। हुजूरी कवियों में तेजोजी एवं ऊदोजी पंथ के प्रामाणिक व्यख्याकार के रूप में प्रसिद्ध थे। तेजोजी के देहान्त के बाद ऊदोजी ही बिश्नोई पंथ के एक मात्र व्याख्याकार थे। भ्रमण के समय ऊदोजी प्राय: गुरु जाम्भोजी के साथ ही रहते थे।

ऊदोजी मांगलोद गाँव के निवासी थे। ऐसा अनुमान किया जाता है कि इनका जन्म संवत् 1505 में हुआ था। पंथ में दीक्षित होने से पूर्व ये मांगलोद गांव के दधिमति माता के मन्दिर के भोपे थे। इस मन्दिर में माता के दर्शन के लिये अनेक यात्री आते रहते थे। एक बार बिजनौर के सेठ कुलचन्दराय भी कुछ यात्रियों के साथ मन्दिर के पास ठहर गये थे। ऊदोजी ने इन्हें माता का भक्त समझकर दान-दक्षिणा प्राप्त

करने की आशा में इनकी बहुत सेवा की पर इन्होंने ऊदोजी की एवं उनकी सेवा की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। तब ऊदोजी ने सेठ कुलचन्दराय से परिचय एवं उनकी यात्रा के बारे में पूछा। इस पर कुलचन्दराय ने कहा कि हम गुरु जाम्भोजी के भक्त हैं और मोक्ष प्राप्ति हेतु उनके दर्शन करने के लिये समराथळ जा रहे हैं। तब ऊदोजी ने कहा कि मोक्ष तो माता भी दिला सकती है। इसके जवाब में सेठ ने कहा कि तुम्हारी माता तो केवल सांसारिक कष्टों को दूर कर सकती है या धन-दौलत दिला सकती है, मोक्ष नहीं दिला सकती है। ऊदोजी को पूजा-अर्चना के द्वारा देवी की वास्तविक शक्ति का ज्ञान हो गया। माता ने ऊदोजी को स्पष्ट कह दिया कि मोक्ष देना उसके लिये सम्भव नहीं है। इसके बाद ऊदोजी ने रातभर बिश्नोइयों के द्वारा गायी गई साखियों को ध्यान से सुना। इससे ऊदोजी की विचारधारा ही बदल गई। बाद में प्रात:काल होते ही ऊदोजी सेठ की जमात के साथ गुरु जाम्भोजी के दर्शनों के लिये रवाना हो गये। समराथळ पर पहुंचते ही दूर खड़े ऊदोजी को गुरु जाम्भोजी ने कोई भजन सुनाने के लिये कहा। इस पर ऊदोजी ने अपनी असमर्थता प्रकट कर दी। तब गुरु जाम्भोजी ने उन्हें एक सबद (विष्णु-विष्णु तूं भण रे प्राणी जो मन माने रे भाई) के द्वारा उपदेश दिया और साथ ही में आशीर्वाद दिया, जिससे ऊदोजी के ज्ञान-चक्षु खुल गये। उन्होंने वहीं गुरु जाम्भोजी के गुणों से सम्बन्धित एक साखी (ओ गुर आयो झांभराज देव, निज हक साच पिछाणियो) सुनायी और उसी समय बिश्नोई पंथ में दीक्षित हो गये।

बिश्नोई पंथ में इनके द्वारा लिखी हुई चारों आरतियाँ बहुत प्रसिद्ध है। इनके उनतीस नियमों से सम्बन्धित दो ड्योढ़े छप्पय भी बहुत प्रसिद्ध हैं। इसी आधार पर जाम्भाणी साहित्य के प्रसिद्ध कवि सुरजनजी पूनियां ने इन्हें छप्पयों का विशेष कवि कहा था। बिश्नोई पंथ में आज भी उनके दो डयोढ़े छप्पय रूप में प्रचलित है। अपने उत्कृष्ट काव्य के कारण ही ऊदोजी का मध्यकाल के राजस्थानी साहित्य में गौरवमय स्थान रहा है। काव्य की श्रेष्ठता एवं भक्ति के कारण ऊदोजी का नाम 35 पुन्ह, हिंडोलणो तथा भक्तमाल में है। अनुमान किया जाता है कि लगभग 88 वर्ष की अवस्था में सम्वत् 1593-94 के आसपास आसोजाई गाँव में इनका स्वर्गवास हो गया था। पंथ में दीक्षित होने से पूर्व ये गृहस्थ जीवन व्यतीत करते थे। इनके वंशज आज भी तिलासणी, नैणावास एवं केलणसर आदि गाँवों में रहते हैं।

रचनाएँ-

1. साखी-15 2. हरजस-8 3. आरती-4 4. फुटकर कवित्त-95
5. ग्रभ चितांवणी-कुल छंद 142

ऊदोजी की साखियों में 'छन्दां की' एवं 'कणां की' दोनों प्रकार की साखियाँ हैं परन्तु अधिकता छन्दां की साखियों की है। इन साखियों में कवि ने जम्भ महिमा, बिश्नोई

पंथ की तेतीस कोटि जीवों के उद्धार सम्बन्धी मान्यता, संसार की नश्वरता, नाते-रिश्तों की असारता एवं विष्णु जप की महिमा का वर्णन किया है। हरजस भी संसार की असारता, सुकृत करने एवं लोगों को विभिन्न प्रकार की चेतावनी से सम्बन्धित हैं। फुटकर कवित्तों में कवि ने विष्णु जप, उनकी शक्ति एवं भक्ति के प्रभाव का अनेक प्रकार से वर्णन किया है। ग्रभ चितांवणी 142 दोहों-चौपई छन्दों की रचना है। इसमें कवि ने गर्भवास के दुख से लेकर विभिन्न कार्य, कर्मफल भोग एवं चौरासी लाख योनियों में जन्म लेने और उनसे छुटकारा पाने का वर्णन किया है।

★ अल्लूजी कविया

अल्लूजी कविया शाखा के चारण थे और मरुभाषा के अति प्रसिद्ध कवि माने जाते हैं। इनका जन्म सम्वत् 1520 में सिणाला (जोधपुर) गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम हेमराज था। ये अपने पिता के इकलौते पुत्र थे। अल्लूजी को आमेर के राजा पृथ्वीराज जी कछवाहा के पुत्र रूपसिंह जी ने कुचामन के जसराणा गाँव प्रदान किया था। इसी गाँव में अल्लूजी ने सम्वत् 1620 में जीवित समाधि ली थी। उस समय इनकी आयु 100 वर्ष की थी। यहीं पर इनका समाधि-मन्दिर बना हुआ है, जहाँ इनके नाम की ओरण भी छोड़ी हुई है। ये अल्लूजी बापजी के नाम से प्रसिद्ध रहे हैं।

अल्लूजी नाथ पंथी योगियों के प्रभाव से पहले तो योगी बन गये थे, जिससे इनके जीवन का कुछ भाग नाथ पंथी साधुओं की संगति में व्यतीत हुआ था। बाद में ये पुन: गृहस्थी बन गये थे। गृहस्थी बनने के बाद उन्होंने बड़ी अवस्था में विवाह भी कर लिया था। अल्लूजी के नरूजी तथा किसनाजी नामक दो पुत्र थे और एक पुत्री थी। नरूजी के वंशज सेवापुरा गाँव में हैं। यह गांव इनके वंशज सागर जी को जयपुर के महाराजा माधोसिंह जी ने दिया था। अल्लू जी चारण जाति में अत्यधिक ख्याति प्राप्त हरि भक्त कवियों में माने जाते हैं।

कहते हैं कि अल्लूजी पेट रोग से पीड़ित थे। इस रोग के उपचार के लिये वे अनेक स्थानों पर विभिन्न लोगों से मिले थे पर कहीं उपचार नहीं हुआ। रोग के उपचार हेतु ये घूमते-घूमते फलोदी के पास पहुँच गये थे। यहीं पर इनकी हालत बहुत बिगड़ गई थी। तब कुछ लोग इन्हें चारपाई पर डालकर गुरु जाम्भोजी के पास जाम्भोळाव पहुँचे। इनकी प्रार्थना पर गुरु जाम्भोजी ने इन्हें जाम्भोळाव में स्नान करने एवं पानी पीने के लिये कहा। गुरु जाम्भोजी की आज्ञा पालन करते ही अल्लूजी रोग से मुक्त हो गये।

अल्लूजी लगभग चालीस वर्ष की अवस्था में गुरु जाम्भोजी से मिले थे और तभी बिश्नोई पंथ

में दीक्षित हो गये थे। रोग–मुक्ति के कारण अल्लूजी की गुरु जाम्भोजी में श्रद्धा बढ़ गई थी और वे उनकी स्तुति करने लग गये। गुरु जाम्भोजी की स्तुति में अल्लूजी ने कई कवित्त लिखे थे।

अल्लूजी के कुछ कवित्त एवं गीत ही प्राप्त होते है। वस्तुतः ये कवित्तों के कवि माने जाते हैं और इन्हीं के कारण ये इतने प्रसिद्ध रहे हैं। इनके अब तक 84 कवित्त एवं तीन गीत मिले हैं। जोधपुर के राव मालदेव की मृत्यु पर इन्होंने दो मरसिये भी लिखे हैं। कहते हैं कि कवित्त एवं गीतों के अतिरिक्त इन्होंने गुरु जाम्भोजी एवं सबदवाणी से सम्बन्धित कुछ और ग्रन्थ भी लिखे थे, जो अब उपलब्ध नहीं है। अल्लूजी ने अपने काव्य में बोलचाल की मरुभाषा का प्रयोग किया है।

बिश्नोई पंथ में चार प्रमुख (तेजोजी, कान्होजी, कोल्हजी व अल्लूजी) चारण कवि हुए है, जिनमें अल्लूजी का भी नाम है। बिश्नोई पंथ में एवं जाम्भाणी साहित्य में इनकी जो प्रसिद्धि रही है, उसी के कारण इनका नाम '24 की लूर' में 16 वां है। इसके साथ–साथ भक्तमाळ एवं हिंडोलणो में भी इनका वर्णन है।

★ रायचन्द सुथार

रायचन्द सुथार बीकानेर रियासत के किसी गाँव में रहने वाले साधु थे। ये गुरु जाम्भोजी के महिमामय व्यक्तित्व एवं उनके उपदेशों से बहुत प्रभावित थे। इसी कारण वे एक दिन गुरु जाम्भोजी के दर्शन करने हेतु समराथळ पहुँच गये। वहां गुरु जाम्भोजी के दर्शन करने एवं उनके उपदेश सुनने से इनकी सभी शंकाएं दूर हो गई और ये बिश्नोई पंथ में दीक्षित हो गये। पंथ में सम्मिलित होने के बाद ये प्रायः गुरु जाम्भोजी के साथ ही रहते थे और कभी–कभी उपदेश भी दिया करते थे। गुरु जाम्भोजी के साथ रहने और उनके कहे अनुसार आचरण करने के कारण ये गुरु जाम्भोजी के परम भक्त हो गये थे। इस कारण इनका नाम '24 की लूर' एवं 'हींडोलणो' में है। गुरु जाम्भोजी के बैकुण्ठवास के कुछ समय बाद बिश्नोई पंथ की स्थिति डांवाडोल होनी प्रारम्भ हो गई थी और लोगों ने पंथ को छोड़ना प्रारम्भ कर दिया था। पंथ की इस स्थिति को देखकर रायचन्द बहुत दुखी होते थे। पंथ की इस स्थिति एवं अपने दुःख का वर्णन कवि ने अपनी एक साखी (सांम्य सिधार्‌यौ चिळत कियो, पंनरासै रि तिराणवै) में किया है। रायचन्द धर्म नियमों के प्रति बड़े कट्टर थे और वे प्रायः पंथ के धार्मिक स्थानों पर भ्रमण करते रहते थे। इससे उनकी पंथ के प्रति गहरी आस्था प्रकट होती हुई दिखाई देती है। पंथ के इतिहास की जानकारी की दृष्टि से उनकी साखियाँ बहुत ही महत्वपूर्ण है।

रचनाएॅं–

रायचन्द सुथार की कुल छः साखियाँ उपलब्ध हैं, जिनमें 2 साखियाँ 'कणां की' एवं 4 'छंदां की' है। कवि की इन साखियों में जम्भ–महिमा, संसार की असारता, मानव जीवन की नश्वरता तथा

सुकृत के द्वारा मोक्ष प्राप्त करने का वर्णन किया गया है। कवि की एक साखी गोपियों के विरह से भी सम्बन्धित है। इनकी एक साखी जाम्भोळाव के महत्व से सम्बन्धित है। बिश्नोई पंथ के धामों के वर्णन की परम्परा की यह प्रथम रचना है। इसके बाद अनेक कवियों ने स्थान विशेष के महत्त्व से सम्बन्धित अनेक रचनाएं लिखकर जाम्भाणी साहित्य को समृद्ध बनाया है। रायचन्द सुथार ने अपनी साखियों में बोलचाल की राजस्थानी भाषा का प्रयोग किया है। इनकी साखियाँ राजस्थानी एवं जाम्भाणी साहित्य की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रचनाएँ है।

★ कुलचन्दराय

कुलचन्दराय सिवहारा (बिजनौर) के निवासी थे। ये एक सम्पन्न व्यापारी थे। कहते हैं कि चालीस वर्ष की अवस्था तक भी इनके कोई सन्तान नहीं थी। किसी के कहने पर ये नगीना के यात्रियों के साथ गुरु जाम्भोजी के दर्शन के लिये समराथळ पहुँच गये थे। उनकी पत्नी रामप्यारी भी उनके साथ थी। कुलचन्दराय ने वहां पाहळ ग्रहण करके बिश्नोई पंथ को स्वीकार कर लिया था। कुलचन्दराय की इच्छा जानकर गुरु जाम्भोजी ने उन्हें दो पुत्र एवं दो पुत्रियाँ होने का वरदान दिया था तथा धर्म नियमों पर दृढ़ता से चलने का आदेश दिया था। गुरु जाम्भोजी के वरदान स्वरूप इन्हें दो पुत्र धन्नो-बिच्छू तथा दो पुत्रियां शान्ति व इमरती प्राप्त हुई थी। समय आने पर इन्होंने अपनी बड़ी बेटी शान्ति का विवाह प्रसिद्ध भक्त चेलोजी से कर दिया था।

कुलचन्दराय प्राय: गुरु जाम्भोजी के दर्शनार्थ समराथळ पर जाया करते थे। इन्होंने अपने शेष तीनों बच्चों के विवाह पर गुरु जाम्भोजी को भी आमन्त्रित किया था पर गुरु जाम्भोजी वहां नहीं गये थे और कहा था कि आप मेरे भक्त चेलोजी को मेरा ही रूप समझना। बाद में सम्वत् 1590 में गुरु जाम्भोजी अपनी अन्तिम यात्रा में सिवहारा भी गये थे। उस समय कुलचन्दराय एवं अन्य बिश्नोइयों ने गुरु जाम्भोजी का जोरदार स्वागत किया था। उस समय गुरु जाम्भोजी ने कुलचन्दराय की अनेक शंकाओं का भी समाधान किया था। गुरु जाम्भोजी के बैकुण्ठवास के बाद कुलचन्द ने नगीना में अपने प्राण त्याग दिये थे। इनका जीवन काल सम्वत् 1505 से 1593 तक माना जाता है। 35 पुन्य और हिंडोलणो में इनका नाम हैं। कहते हैं कि एक बार कुलचन्दराय ने समराथळ पर गुरु जाम्भोजी के लिये विश्राम भवन बनाने एवं मखमल के गद्दे बिछाने की प्रार्थना की थी। कुलचन्द की इस प्रार्थना पर गुरु जाम्भोजी ने उन्हें एक सबद (जे म्हां सूतां रैण विहावै वरतै बिंबा वारूं) द्वारा उपदेश दिया था।

रचना-

जाम्भाणी साहित्य में कुलचन्द की लिखी हुई दो साखियाँ मिलती हैं। दोनों ही साखियाँ 'छन्दां की' है। इन साखियों में कवि ने गुरु जाम्भोजी के गुणों एवं कार्यो का वर्णन करते हुए लोगों को गुरु जाम्भोजी के यहां आने का लाभ उठाने के लिये सचेत किया है।

★ रेड़ोजी

रेड़ोजी अणखीसर गाँव के रहने वाले थे और सांवक जाति के थे। ऐसा अनुमान है कि इनका जन्म सम्वत् 1530 एवं स्वर्गवास 1620 में हुआ था। बिश्नोई पंथ एवं जाम्भाणी साहित्य में रेड़ोजी का प्रमुख स्थान है। रेड़ोजी की प्रसिद्धि का प्रमुख कारण यह है कि हुजूरी कवियों में केवल इन्हीं की ही शिष्य परम्परा आगे चली है। गुरु जाम्भोजी के जीवन काल में ही नाथोजी इनके शिष्य बन गये थे। गुरु जाम्भोजी के बाद रेड़ोजी ही पंथ के प्रामाणिक व्याख्याता माने जाते थे। ये पंथ के नियमों का बड़ी ही दृढ़ता से पालन करते थे। गुरु जाम्भोजी के कहे हुए सभी सबद इनको एवं नाथोजी को कण्ठस्थ थे। वील्होजी ने मुकाम मन्दिर पर सर्वप्रथम इनके मुख से ही गुरु जाम्भोजी के कहे हुए सबद सुने थे और तभी वे बिश्नोई पंथ में दीक्षित हो गये थे। वील्होजी के दादा गुरु थे एवं सुरजनजी के ये परदादा गुरु थे। 35 पुन्ह में रेड़ोजी का 11 वां नाम है। भक्तमाळ एवं हिंडोलणो में भी इनका नाम है।

रचनाएँ-

रेड़ोजी की 20 पंक्तियों की एक 'कणां की' साखी मिलती है। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि यह साखी इन्होंने गुरु जाम्भोजी के जीवनकाल में लिख ली थी। कवि ने इस साखी में संसार की वास्तविक स्थिति का चित्रण करते हुए लोगों को मोक्ष प्राप्ति की ओर प्रेरित किया है। बोलचाल एवं सरल भाषा के कारण यह साखी बहुत ही लोकप्रिय है।

★ आलमजी

कवि आलम जी बाद के हुजूरी कवियों में से थे और गुरु जाम्भोजी के बैकुण्ठवास के बाद लगभग 16-17 वर्ष तक जीवित रहे थे। ये गायन विद्या में निपुण थे। इसी आधार पर ये और इनके वंशज गायणा कहलाते हैं। भक्तमाल और हिंडोलणो में इनका नाम है। पीरदान लालस के परमेसर पुराण में भी आलम जी का नाम है। ये ताळवा गाँव के आसपास किसी गाँव में रहते थे। ये अपने समय के बहुत प्रसिद्ध कवि एवं गायक थे। कहते हैं कि एक बार आलमजी को जैसलमेर के दरबार में वहाँ के गायकों के साथ गायन प्रतियोगिता करनी पड़ी। प्रतियोगिता की शर्त यह थी कि जो जीतेगा वह हारने वाले का गुरु बन जायेगा। इस प्रतियोगिता में आलम जी ने जो विभिन्न राग-रागनियाँ गायी, उससे दरबार में रखा पत्थर भी पिघल गया। इसी पिघले पत्थर में आलमजी ने अपने मजीरे फेंक दिये थे, जिससे वे उस पत्थर में गड़ गये थे। इस पर आलम जी ने कहा कि मैंने ये मजीरे इस पत्थर में गाड़ दिये हैं, अब किसी में शक्ति हो तो निकाल लें। इस पर वहां उपस्थित आठ कलाकारों ने अपनी हार स्वीकार कर ली और उन्होंने आलमजी को अपना गुरु बना लिया था। ये सभी गायक गायणा बन गये थे। आलमजी का स्वर्गवास बींकूकोर में सम्वत् 1610 के आसपास हो गया था।

रचनाएँ-

उच्च कोटि के कवि होने के कारण इनकी लिखी हुई आठ साखियाँ एवं बारह हरजस मिलते हैं। आलमजी ने अपनी साखियों में जम्भ-महिमा, दसावतार, पंथ में तेतीस कोटि जीवों के उद्धार की मान्यताएं, मानव शरीर की क्षणभंगुरता, संसार की असारता तथा सुकृत के द्वारा वैकुण्ठ प्राप्त करने का वर्णन किया है। आलमजी की आठ साखियों में से मधुकर साखी (अब ज चलो रे लाल जी न रहो र मधुकर नहीं छै रहंण को जोग) सबसे उत्कृष्ट है। इसमें कवि ने मन को मधुकर नाम से सम्बोधित किया है। आलम जी ने अपने हरजसों में जम्भ-महिमा, उनके कार्यो, गोपियों का कृष्ण के प्रति प्रेम, विरह वर्णन तथा ईश महिमा आदि का वर्णन किया है। गायन विद्या में निपुण होने के कारण ही इनकी समस्त रचनाएं किसी न किसी राग रागनियों से सम्बन्धित है। आलम जी की कई रचनाओं पर सबदवाणी का प्रभाव दिखाई देता है। इससे आलमजी का गुरु जाम्भोजी के प्रति भक्ति भाव भी प्रकट होता है। कवि ने अपनी रचनाओं में बहुत ही सरल एवं बोलचाल की मरुभाषा का प्रयोग किया है।

★ भींवराज

भींवराज का उपनाम भींयो भी है। केसौजी ने 'कथा चित्तौड़ की' में भींवराज का भी उल्लेख किया है। उनके अनुसार दिल्ली में एक शाह था, जो निपुत्र था। उसने एक बालक को मांगकर या किसी से खरीदकर गोद ले लिया था। उस समय बालक के परिवार की किसी को कोई जानकारी नहीं थी पर बाद में लोगों ने कहा कि वह लुहार का लड़का है। गोद लेने के बाद शाह ने उसे पढ़ने के लिये बनारस भेज दिया। बनारस में शाह के इस दत्तक पुत्र ने तीस वर्ष अध्ययन किया और बाद में गुरु दक्षिणा के रूप में अपने गुरु को तीन सौ रूपये देकर दिल्ली आ गया। दिल्ली में आकर उसने व्यापार करना प्रारम्भ कर दिया।

एक बार भींवराज ने दिल्ली में बिश्नोइयों से गुरु जाम्भोजी के बारे में सुना पर उसे उनके अवतारी होने पर विश्वास नहीं हुआ और उनकी आलोचना की। छः महीनों के बाद वह बिश्नोइयों की जमात के साथ अपने मन में चार 'द' विचार कर गुरु जाम्भोजी के पास समराथळ पहुंचा। गुरु जाम्भोजी ने उसके सभी प्रश्नों का उत्तर दिया और उसके 'द' का भी रहस्य बताया। भींवराज के पूर्ण विश्वास के लिये गुरु जाम्भोजी ने अपने अन्य शिष्यों के साथ उन्हें सोवन नगरी भी दिखाई। इससे भींये के सारे भ्रम दूर हो गये। बिश्नोई पंथ में इन्हें लुहार का ही लड़का माना जाता है। 24 की लूर, हिंडोलणो एवं भक्तमाल में इनका नाम है। इनके जन्म एवं स्वर्गवास की कोई निश्चित जानकारी नहीं है। इसलिये अनुमान से इनका जन्म सम्वत् 1530 एवं स्वर्गवास 1600 के आसपास माना जाता है।

रचनाएँ-

भींवराज की 'छंदा की' दो साखियां मिलती हैं। पहली साखी में कवि ने कुसंगति को त्यागकर विष्णु शरण में रहने तथा सुकृत करने पर बल दिया है। बिश्नोई पंथ में उनकी यह साखी

बहुत ही प्रसिद्ध है। दूसरी साखी में विष्णु–विमुख मन को समझाने का प्रयास करते हुए उसे विष्णु–समण के लिए प्रेरित किया है।

★ मेहोजी गोदारा थापन

सेखोजी गोदारा भोजास गाँव के निवासी थे। इनके तीन पुत्र थे–चैनोजी, मेहोजी एवं चाहूजी। बिश्नोई पंथ की स्थापना के समय गुरु जाम्भोजी ने सेखोजी को थापन नियुक्त किया था। कहते हैं कि उस समय मेहोजी दो वर्ष के थे। मेहोजी की बाल्यावस्था भोजास में ही व्यतीत हुई थी। बड़े होने पर इन्होंने भोजास को छोड़ दिया था और रूणियां गाँव में रहने लग गये थे। इसी गाँव में रहते हुए उन्होंने सम्वत् 1575 के आसपास रामायण की रचना की थी। उस समय मेहोजी की आयु लगभग 35 वर्ष की थी।

मेहोजी ने अपने जीवन के अन्तिम वर्ष जांगलू गाँव में व्यतीत किये थे। मेहोजी के भाई चैनोजी मुकाम मन्दिर के पुजारी एवं प्रबन्धकर्ता बनना चाहते थे। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु उसने मन्दिर की व्यवस्था देखने वाले गुरु जाम्भोजी के प्रिय शिष्य रणधीरजी को भोजन में जहर देकर मरवा डाला। बाद में अपने प्राणों पर आये खतरे को देखकर चैनोजी भी मुकाम छोड़कर किसी दूसरे स्थान पर चले गये। वहीं से उन्होंने मन्दिर के दूसरे सम्भावित हकदार मेहोजी को भी मरवाने की योजना बनायी। इस योजना से डरकर मेहोजी मन्दिर में रखी हुई गुरु जाम्भोजी की पवित्र वस्तुएँ– चोला, चींपी एवं टोपी लेकर जांगलू चले गये। यह घटना सम्वत् 1597 की मानी जाती है। जांगलू में मेहोजी ने एक मन्दिर बनवाया। बाद में इसी स्थान पर जांगलू का वर्तमान मन्दिर बनाया गया है। कुछ समय बाद चैनोजी ने अपनी गलती स्वीकार कर ली और पंचों ने उसे पाहल देकर पुनः पंथ में सम्मिलित कर लिया। इसके बाद चैनो, चोखे के नाम से प्रसिद्ध हो गया है। मुकाम के थापनों की प्रार्थना पर मेहोजी ने जांगलू से टोपी वापस लाकर मुकाम के थापनों को दे दी थी। सम्वत् 1601 में मेहोजी का जांगलू में स्वर्गवास हो गया। जांगलू मन्दिर के पास ही उन्हें समाधि दे दी गई थी।

रचनाएँ–

मेहोजी की एक मात्र रचना रामायण ही उपलब्ध है। रामायण में कुल 261 छंद है, जो विभिन्न राग–रागनियों में गेय है। आज मेहोजी का बिश्नोई पंथ एवं जाम्भाणी साहित्य में जो महत्व है, वह उनकी कृति रामायण के कारण ही है। इस कृति से उनका भक्त होना भी प्रमाणित होता है। इस रचना की प्रसिद्धि इतनी हो गई थी कि यह गुरु जाम्भोजी के समय में ही जागरण में गायी जाने लगी थी। राजस्थानी साहित्य में आख्यान काव्य परम्परा में मेहोजी एवं उनकी रामायण का महत्वपूर्ण स्थान है। यह राजस्थानी साहित्य में रामकथा पर आधारित प्रथम आख्यान काव्य है।

★ वील्होजी

वील्होजी का जन्म सम्वत् 1589 में रेवाड़ी में हुआ था। इनके पिता का नाम परशुराम सुथार था। वील्होजी का पूर्व का नाम विट्ठलदास था पर बिश्नोई पंथ में ये वील्होजी के नाम से ही प्रसिद्ध हैं। कहते हैं कि इनकी 4 वर्ष की आयु में शीतला माता के प्रकोप से आंखों की ज्योति नष्ट हो गई थी। ये बचपन से ही धार्मिक प्रवृत्ति के थे। इनकी स्मरण शक्ति बड़ी तीव्र थी तथा ये अच्छे गायक थे। एक बार गुजरात की तरफ से एक साधु अपनी मंडली के साथ रेवाड़ी में आकर ठहरा था। उसने इस बालक के कार्यों एवं बुद्धि को देखकर उसे परशुराम से मांग लिया था और अपने साथ ले गया। कई वर्षों तक उनके साथ रहने के बाद वील्होजी भ्रमण करते हुए हिम्मटसर पहुंचे। प्रातःकाल उन्होंने मन्दिर से सबदों की आवाज सुनी। किसी से पूछने पर उन्हें बताया कि यहां पास में ही गुरु जाम्भोजी का मन्दिर है। वे तुरन्त अपनी साधु मंडली के साथ मन्दिर पर पहुँच गये। मन्दिर पर सबदों के पाठ के साथ हवन हो रहा था। वहां उन्होंने नाथोजी से जो सबद सुने वे सभी उनको याद हो गये थे। उन्होंने उन सबदों को वहाँ उपस्थित लोगों को सुना दिया था, जिसे सुनकर लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ था और उसी समय रेड़ोजी को गुरु जाम्भोजी की कही हुई बात याद आ गई थी। गुरु जाम्भोजी ने अपने बैकुण्ठवास से पूर्व रेड़ोजी, निहालदास एवं रणधीरजी को महन्त बनाया था और चौथी गद्दी के महन्त की सफेद पोशाक सन्दूक में रख दी थी। पूछने पर उन्होंने कहा था कि आज से आठ वर्ष बाद एक विठल नाम का मेरा शिष्य आयेगा और वही इस पंथ को संभालेगा। तब रेड़ोजी ने पूछा था कि हम उसको पहचानेंगे कैसे? इस पर गुरु जाम्भोजी ने कहा था कि वह मेरे सबदों को एक बार सुनने के बाद पुनः दोहरा देगा। तब आप उसे चौथा महन्त बना लेना और उसे यह सन्दूक दे देना। इसी के आधार पर रेड़ोजी को यह विश्वास हो गया था कि यह गुरु जाम्भोजी का वही शिष्य है। कहते हैं कि उसी समय वील्होजी की आँखों की ज्योति आ गई थी और वहीं उन्होंने अपने उद्धार की एक साखी (गुरु तारि बाबा, जिवड़ो लोभी लब्धी खूनी खून किया बोहतेरा) सुनायी। वील्होजी की प्रार्थना पर नाथोजी ने उन्हें गुरु मंत्र देकर बिश्नोई पंथ में दीक्षित किया था। यह घटना संवत् 1601 की फाल्गुन की अमावस्या की मानी जाती है। उस समय वील्होजी की आयु 12 वर्ष की थी। इन्होंने साधु दीक्षा (भगवां भेष) सम्वत् 1611 में धारण की थी। इससे पूर्व ये सफेद वस्त्रों में रहते थे।

गुरु जाम्भोजी के बैकुण्ठवास के बाद और वील्होजी के पंथ में सम्मिलित होने से पूर्व बिश्नोई पंथ की स्थिति बहुत डांवाडोल थी। लोगों की पंथ में रुचि घटने लग गई थी। बहुत से लोगों ने पंथ को छोड़ना प्रारम्भ कर दिया था। ऐसी विकट स्थिति में वील्होजी ने पंथ को जबरदस्त सहारा दिया और उसे विकास के रास्ते पर अग्रसर किया। वील्होजी ने पंथ का सुधार दो प्रकार से किया–एक समाज सुधार के विभिन्न कार्यों से और दूसरा साहित्य रचना के द्वारा।

वील्होजी ने धर्म प्रचार एवं समाज की सुदृढ़ता के लिये सम्वत् 1648 में जाम्भोळाव पर चैत्र की अमावस्या को चैती मेला प्रारम्भ किया तथा दूसरा भादवा की पूर्णिमा को माधा मेला भी वील्होजी ने माधोजी गोदारा की सहायता से प्रारम्भ किया था। इसी तरह उन्होंने मुकाम में आसोज की अमावस्या का मेला भी प्रारम्भ किया था। ये मेले आज तक चल रहे हैं। लोगों को गुमराह करने वाले एक भूत साधक को भी वील्होजी ने सुधारा था तथा उसे उसके अनुयायियों के साथ पंथ में सम्मिलित किया था।

समाज सुधार का कार्य करते समय वील्होजी ने यह अनुभव किया था कि लोग बिना भय के सही रास्ते पर नहीं आ सकते। तब वे जोधपुर के महाराजा सूरसिंह से मिले। महाराजा के कहने पर वील्होजी ने दरबार में ही उन्हें बाजरे का सिट्टा, काकड़ी एवं मतीरा प्रस्तुत किये। इस पर प्रसन्न होकर महाराजा ने वील्होजी से कुछ मांगने को कहा। तब वील्होजी ने कहा कि लोग पंथ को छोड़ रहे हैं और बिना राजभय के मानने वाले नहीं हैं। इस पर राजा ने वील्होजी को खूंटे-कोरड़े का अधिकार दिया। इससे वील्होजी लोगों को पुनः पंथ में सम्मिलित करने में सफल हो गये थे। इसी तरह वील्होजी को बीकानेर एवं जैसलमेर के राजाओं से भी समाज-सुधार में सहायता प्राप्त हुई थी। वील्होजी ने स्थान-स्थान पर भ्रमण करके लोगों से जीव-रक्षा, वृक्ष-रक्षा एवं अमर रखावै थाट का पालन करवाया था। उनकी प्रेरणा से ही लोगों ने उनके समय में ही धर्म रक्षार्थ एवं वृक्ष-रक्षा के लिये अनेक बलिदान दिये थे।

वील्होजी सच्चे संत, योगी एवं कर्मठ समाज सुधारक एवं उच्च कोटि के कवि थे। जीवनभर समाज सुधार एवं साहित्य-रचना के बाद उन्होंने रामड़ावास में रहना प्रारम्भ कर दिया था। जीवन का अन्त निकट जानकर उन्होंने अपनी गद्दी अपने शिष्य सुरजन जी पूनिया को सौंप दी थी। यहीं पर सम्वत् 1673 में चैत्र सुदि एकादशी रविवार को उनका स्वर्गवास हो गया था। यहीं उनकी समाधि है। तभी से रामड़ावास वील्होजी के धाम के रूप में प्रसिद्ध है। कहते है कि वील्होजी ने अपने स्वर्गवास से कुछ पूर्व अपने भक्तों के सामने धनाश्री राग में 'उमाहो' गाया था। यह उनकी अन्तिम रचना है, जो अत्यधिक मार्मिक एवं प्रसिद्ध है।

रचनाएॅं-

वील्होजी ने प्रबंध एवं मुक्तक दोनों प्रकार के काव्य की रचना की है, जिनका उल्लेख पहले कवि सं. 34 के अन्तर्गत हो चुका है। इनकी रचनाओं में आख्यान काव्य, साखियां एवं हरजस आदि प्रमुख हैं। उनके काव्य का मूल स्वर लोक-कल्याण की भावना है। वील्होजी ने मोक्ष-प्राप्ति को मानव का चरम लक्ष्य स्वीकार किया है। मोक्ष-प्राप्ति के लिये उन्होंने विष्णु नाम का स्मरण तथा सुकृत पर बल दिया है। सुकृत के साथ-साथ वील्होजी ने लोगों को पाखंड से दूर रहने पर जोर दिया है। उनके काव्य में बिश्नोई पंथ एवं मरुप्रदेश के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन का विस्तृत वर्णन हुआ है। कवि ने

अपने काव्य में सर्वत्र मरुभाषा का प्रयोग किया है, जिससे उनका काव्य बहुत मार्मिक एवं प्रभावशाली बन गया है। भाषा के शुद्धाशुद्ध प्रयोग में वील्होजी की अनुपम देन है। इस आधार पर वील्होजी का काव्य न केवल जाम्भाणी साहित्य में अपितु राजस्थानी साहित्य में अति विशिष्ट है।

★ केसौदास जी गोदारा

जाम्भाणी साहित्य में केसौजी नाम के तीन प्रसिद्ध कवि हुए हैं। प्रथम कवि केसौजी देहडू हुए हैं। ये नोखा तहसील के सलूण्डा गाँव के रहने वाले थे और हुजूरी कवि थे। उम्र में ये गुरु जाम्भोजी से कुछ बड़े माने जाते हैं। दूसरे केसौजी गोदारा थे, जो वील्होजी के शिष्य थे। तीसरे केसौजी वे हैं जिन्होंने मंगलाष्टक की रचना की थी।

केसौजी गोदारा नोखा के पास माढ़िया गाँव के निवासी थे। ये गोदारा जाति के थे। केसौजी छोटी अवस्था में ही साधु बन गये थे। केसौजी गोदारा वील्होजी के सात शिष्यों में से एक थे। वील्होजी के शिष्यों में सबसे अधिक प्रसिद्धि सुरजनजी एवं केसौजी की ही थी। ये सुरजनजी से बड़े थे। इनका जन्म सम्वत् 1630 के आसपास माना जाता है और सम्वत् 1736 में माढ़िया में ही इनका स्वर्गवास हो गया था।

केसौजी अत्यधिक अनुभवी, ज्ञानी, गायन विद्या में निपुण एवं परम सिद्ध व्यक्ति थे। भक्तमाल एवं हिंडोलणो में इनका भी नाम है। ये सफल समाज सुधारक एवं उच्च कोटि के कवि थे। केसौजी ने बिश्नोई पंथ की साथरियों को सुव्यवस्थित किया था और समाज में पंचायतों का गठन करके समाज में एकता स्थापित करने का प्रयास किया था। इन कामों से उनकी कीर्ति चारों ओर फैल गई थी। इन्हीं कार्यों के कारण वे प्राय: भ्रमण करते रहते थे, जिस कारण से वे कहीं भी अधिक समय तक नहीं ठहर पाते थे। कहते हैं एक बार जब वे रामड़ावास में ठहरे हुए थे तो जोधपुर के महाराजा जसवंत सिंह जी इनसे मिलने आये थे। महाराजा के कहने पर उन्होंने वहां वर्षा करवायी थी। इस बात पर प्रसन्न होकर महाराजा ने उन्हें 500 बीघा जमीन दान में दी थी और सात गुनाह माफ किये थे। इसके साथ-साथ केसौजी का अन्य राजाओं एवं सुल्तानों से भी अच्छे सम्बन्ध थे।

रचनाएँ-

जाम्भाणी साहित्य को समृद्ध बनाने में केसौजी का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। उन्होंने अनेक साखियाँ, हरजस एवं आख्यान काव्यों की रचना की है, जिनका उल्लेख कवि सं. 44 के अन्तर्गत किया गया है। कवि सुरजन जी ने इन्हें कथा-काव्य का विशेष कवि माना था। बिश्नोई पंथ के लोगों ने वृक्ष-रक्षा, धर्म-रक्षा, जीव-रक्षा आदि के लिये जो बलिदान किये हैं उनके आधार पर केसौजी ने अनेक साखियों की रचना की हैं। केसौजी के हरजस अत्यधिक रोचक व प्रभावशाली हैं, जिनमें मोक्ष-प्राप्ति हेतु प्रेरणा दी गई है। संवाद रचना में कवि सिद्धहस्त रहे हैं। इसी कारण इनका आख्यान काव्य प्रभावशाली

एवं मार्मिक है। केसौजी ने मरुप्रदेश के सामाजिक जीवन एवं संस्कृति का मरुभाषा में बड़ा यथार्थ वर्णन किया है।

★ सुरजनदास जी पूनियां

जाम्भाणी साहित्य में सुरजन जी नाम के तीन कवि हुए हैं। प्रथम सुरजन जी भक्त एवं हुजूरी कवि थे। ये गीतों के कवि के रूप में अधिक प्रसिद्ध रहे हैं। इनकी सुबह राग में लिखी हुई 'कणां की' एक साखी मिलती है। यह जम्मे की चौथी साखी है। बिश्नोई पंथ में यह मान्यता है कि हवन की जोत में गुरु जाम्भोजी सदैव विद्यमान रहते हैं। इस मान्यता का संकेत इस साखी में किया गया है। दूसरे सुरजन जी या सुजोजी एक विरक्त साधु थे और ये भी हुजूरी थे। ये प्रथम सुरजन जी के समकालीन थे और तपस्वी थे। तीसरे सुरजन जी वील्होजी के शिष्य थे और पूनिया गौत्र के थे।

जाम्भाणी साहित्य के प्रसिद्ध कवि एवं संत सुरजनदास जी पूनियां भींयासर गांव के रहने वाले थे। रामरासौ इन्हीं की रचना है। इन्होंने छोटी उम्र में ही वैराग्य धारण कर लिया था। वील्होजी के सात शिष्यों में से सुरजन जी एवं कैसोजी ही प्रसिद्ध शिष्य थे। सुरजन जी की इसी प्रसिद्धि के कारण ही वील्होजी ने इन्हें अपने स्वर्गवास से कुछ पहले ही सम्वत् 1673 में रामड़ावास का महंत नियुक्त कर दिया था। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि सुरजन जी का जन्म सम्वत् 1640 के आसपास हुआ था। इनका स्वर्गवास सम्वत् 1748 में जाम्भोळाव में हुआ था। इनके शव को इनके गांव भींयासर में पूनियों के मोहल्ले में समाधिस्थ किया गया था। इनके समाधि-स्थान पर लाल पत्थर का एक चबूतरा भी बनाया गया था, जो अब रेत में दब गया लगता है। अब इनकी समाधि पर एक भव्य मन्दिर बनाया गया है।

सुरजनजी बहुत ही सरल स्वभाव के महात्मा थे और एकान्तप्रिय थे। इसी कारण वे रामड़ावास में न रहकर उससे लगभग 2 किमी पूर्व-दक्षिण में एक तालाब (नाडी) पर छान (झोंपड़ी) बनाकर रहते थे। जिसे लोग 'छान-नाडी' कहते थे। सुरजन जी ने किसी को भी अपना शिष्य नहीं बनाया था। वे एक सच्चे योगी एवं निडर व्यक्ति थे। धर्म-नियमों के पालन में ये बड़े कट्टर थे। उन्होंने बिश्नोई पंथ को सुदृढ़ बनाने का भरसक प्रयास किया था। हिंडोलणो एवं भक्तमाल में इनका भी नाम है।

सुरजन जी ने जोधपुर राजा के यहां वर्षा करवाकर परचा दिया था और वहां के अकाल को नष्ट किया था। यह भी माना जाता है कि कवि ने जैसलमेर एवं फलोदी में भी वर्षा करवायी थी। इन दोनों घटनाओं का वर्णन कवि ने अपने एक गीत एवं कवित्त में किया है।

रचनाएँ-

सुरजन जी ने साखी, गीत, हरजस, कवित्त एवं आख्यान काव्य आदि की रचना करके जाम्भाणी साहित्य को समृद्ध बनाया था। इनकी रचनाओं का उल्लेख कवि सं. 45 के अन्तर्गत पहले किया गया है। ये विभिन्न विषयों के ज्ञाता थे। भाषा पर इनका पूर्ण अधिकार था-विशेषकर संस्कृत एवं राजस्थानी

के ये पूर्ण ज्ञाता थे। बिश्नोई पंथ एवं जाम्भाणी साहित्य का इन्हें पूर्ण ज्ञान था। इसी आधार पर इन्हें बिश्नोई पंथ का 'सूतजी' मान लिया गया था।

सुरजन जी साधु होते हुए भी समाज से उदासीन नहीं थे। उन्होंने अपने उपदेशों एवं काव्य के द्वारा मनुष्य को सचेत करते हुए मोक्ष-प्राप्ति की ओर प्रेरित करने का अत्यधिक प्रयास किया है। कवित्त रचना में सुरजनजी सिद्धहस्त रहे हैं। वील्होजी के स्वर्गवास पर उन्होंने बहुत ही मार्मिक मरसिये लिखे थे। रामरासौ एवं कवित्त बावनी के अतिरिक्त इनके 336 कवित्त मिलते हैं। इन कवित्तों में मरुप्रदेशीय जन जीवन के साथ-साथ मानव जीवन के विविध पक्षों का चित्रण किया गया है। उत्कृष्ट काव्य रचना के कारण ही रामरासौ न केवल सुरजनजी की अपितु राजस्थानी काव्य की एक महत्त्वपूर्ण रचना है। राजस्थानी काव्य में रामकाव्य परम्परा की यह तीसरी रचना है।

सुरजन जी का काव्य-क्षेत्र बहुत व्यापक था। विचारधारा एवं सहज भाषा प्रयोग के कारण वे लम्बे समय तक कवियों के प्रेरणास्रोत रहे हैं। इन्होंने अपने काव्य से जाम्भाणी एवं राजस्थानी साहित्य के गौरव को बढ़ाया है।

★ गोकुल जी

कवि गोकुल जी जोधपुर के पास जोळियाळी के रहने वाले थे। ये बणियाल जाति के साधु थे। ऐसा अनुमान किया जाता है कि इनका जन्म सम्वत् 1700 के आसपास हुआ था। लगभग 90 वर्ष की आयु में सम्वत् 1790 में इनका स्वर्गवास हो गया था। बिश्नोई पंथ एवं जाम्भाणी साहित्य में इनकी प्रसिद्धि का प्रमुख आधार इनकी खेजड़ली के खड़ाणे की साखी है। खेजड़ली के खड़ाणे की घटना सम्वत् 1787 के भादो की है, इस घटना के समय गोकुल जी जीवित थे। इस घटना का कवि ने आँखों देखा वर्णन अपनी साखी में किया है।

रचनाएँ-

गोकुल जी ने अपनी कृति ईन्दव छन्द में मुख्य रूप से हरिगुण, गुरु जाम्भोजी के अवतार, उनकी महिमा एवं कार्यों का वर्णन किया है। 'अवतार की विगत' भी गुरु जाम्भोजी के अवतार से सम्बन्धित है। परची में कवि ने उन व्यक्तियों का उल्लेख किया है, जिनको गुरु जाम्भोजी ने परचा दिया था। इसमें राव बीदा के अगले जन्म का जो वर्णन किया है, वह अपने आप में मौलिक है। कवि ने राव बीदा को अगले जन्म में ऊँट बताया है। 'स्तुति होम की' में कवि ने हवन के महात्म्य तथा ईश-स्तुति का वर्णन किया है। गोकुलजी की दो साखियाँ हैं, जिनमें प्रथम साखी गुरु जाम्भोजी की स्तुति से सम्बन्धित है और दूसरी साखी खेजड़ली के खड़ाणे की है। यह कवि की अति प्रसिद्ध रचना है। इसमें वृक्षों की रक्षा के लिये बिश्नोई पंथ के 363 स्त्री-पुरूषों के बलिदान का वर्णन है। यह एक ऐतिहासिक रचना है। बिश्नोई पंथ में इस घटना से पूर्व एवं पश्चात् भी बलिदान की घटनाएं हुई हैं पर

इतने बड़े पैमाने पर बलिदान की यह पहली घटना है, जिसका वर्णन गोकुलजी ने अपनी साखी में किया है।

गोकुलजी के काव्य से उनकी भगवद् भक्ति प्रकट होती है। उन्होंने मुक्ति के लिये अधिक बल हरि नाम के जप पर दिया है। इसके साथ ही कवि ने गुरु जाम्भोजी की सबदवाणी को पाँचवाँ वेद माना है। भक्त होने के नाते वे बार-बार गुरु जाम्भोजी से अपने उद्धार की प्रार्थना करते रहते हैं। अपने उत्कृष्ट काव्य के कारण ही गोकुलजी का जाम्भाणी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है।

★ परमानंद जी बणियाल

परमानंद बणियाल जाँगलू गाँव के रहने वाले थे। ये बणियाल जाति के थापन साधु थे। परमानंद जी के पिता का नाम सुरताण जी था। ये जाँगलू के हुजूरी भक्त वरसिंह बणियाल थापन के पुत्र सेंणोजी की संतान हैं। परमानंद जी के पूर्वज सुरताणजी के समय में ही जांगलू से रासीसर आकर बस गये थे। यहीं पर परमानंद ने अपने प्रसिद्ध 'पोथो ग्रंथ ग्यान' की रचना की थी। परमानंद जी ने इसे सम्वत् 1796 में लिपिबद्ध करना प्रारम्भ किया था और सम्वत् 1810 में यह सम्पूर्ण हो गया था। इसे लिपिबद्ध करने में 14 वर्ष लगे थे।

परमानन्दजी का जन्म सम्वत् 1750 के आसपास माना जाता है और ऐसा अनुमान किया जाता है कि इनका स्वर्गवास सम्वत् 1845 के आसपास हुआ था। बचपन से ये धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। इसी कारण ये छोटी अवस्था में ही साधु बन गये थे। साधु बनने के बाद भी ये अधिकतर अपने परिवार के साथ ही रहे हैं। परमानंद जी दो गुरुओं के शिष्य थे। पहले ये मुकनोजी के शिष्य थे और बाद में सम्वत् 1796 में रासोजी के गोद जाकर उनके शिष्य बन गये थे।

रचनाएँ-

परमानन्द जी की स्वयं के द्वारा लिखी गई निम्नलिखित रचनाएँ उपलब्ध हैं-

1. प्रसंग-104
2. हरजस-41
3. साखियाँ-5
4. विसन असतोत्र 22 छन्द
5. फुटकर छन्द-कवित्त-2 दोहे-12
6. गद्य में साका
7. छमछरी (संवत्सरी)

परमानंद जी बिश्नोई पंथ के श्रेष्ठ कवि, आत्मज्ञानी, साहित्य प्रेमी एवं सिद्ध पुरुष थे। इन्होंने न केवल स्वयं की अपितु अपने से पूर्व अन्य कवियों की रचनाओं को भी लिपिबद्ध किया है। इस आधार पर इनका स्वयं का काव्य पूर्ण प्रामाणिक है। 'पोथो ग्रन्थ ग्यान' न केवल इनका अपितु बिश्नोई पंथ की अमूल्य निधि है। इसमें इन्होंने अनेक कवियों की रचनाओं को लिपिबद्ध किया है। इस पोथे के द्वारा परमानंद जी का जाम्भाणी साहित्य को सुरक्षित रखने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। साहित्य प्रेम की भावना से प्रेरित होकर इन्होंने 'पोथो ग्रन्थ ग्यान' में बिखरे हुए साहित्य को लिपिबद्ध करने में

जो परिश्रम किया है, उससे न केवल बिश्नोई पंथ अपितु सम्पूर्ण साहित्य जगत इनका कृतज्ञ रहेगा। परमानंद जी ने जिन अमूल्य रचनाओं को इसमें लिपिबद्ध किया है, उससे उनका यह कार्य साहित्य प्रेमियों के लिये सदैव प्रेरणास्रोत रहेगा। परमानंद जी ने मरुप्रदेश में प्रचलित लोकभाषा का प्रयोग करके इस भाषा को भी लोकप्रिय एवं रोचक बनाया है।

★ ऊदोजी अड़ींग

जाम्भाणी साहित्य में ऊदोजी नाम के तीन प्रसिद्ध कवि हुए हैं-ऊदोजी तापस, ऊदोजी नैण और ऊदोजी अड़ींग। इन तीनों में से प्रथम दो हुजूरी कवि थे। ऊदोजी तापस की रचनाएँ अब तक प्राप्त नहीं हुई है तथा शेष दोनों की रचनाओं के आधार पर यह स्पष्ट है कि दोनों की विषय वस्तु एवं भाषा में स्पष्ट अन्तर है।

ऊदोजी अड़ींग जोधपुर के पास रुड़कली गाँव के निवासी थे। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि इनका जन्म सम्वत् 1818 के आसपास हुआ था। इनके पिता का नाम केसौजी अड़ींग था। ऊदोजी का विवाह रुड़कली से लगभग 3 किमी उत्तर में स्थित बीसलपुर की साहबी बणियाल से हुआ था। ये धनी किसान थे और प्रारम्भ से ही धार्मिक प्रवृत्ति के थे। इनके पास 200 बीघा जमीन थी और एक कुआँ था। यह कुआँ आज भी है पर अब इसका पानी खराब हो गया है। ऊदोजी के वैराग्य धारण करने की घटना भी बड़ी रोचक है। कहते हैं कि एक दिन ये अपने कुएँ से पानी निकाल रहे थे। उस समय बहुत सर्दी थी एवं ठंडी हवा चल रही थी। उसी समय उन्हें संसार की निस्सारता और अपने जीवन की क्षणभंगुरता की अनुभूति हुई, जिससे इन्हें वैराग्य हो गया।

आव जाव उठ बैठ, ठंडी बाजै बूक रे।
भजियो नहीं भगवान, ऊदा तेरी चाकरी में चूक रे।।

वे लाव (पानी निकालने की रस्सी) को कुएँ पर ही छोड़कर मालवा की ओर चले गये। उन्होंने सुदरोजी को अपना गुरु धारण किया और साधु बन गये। यह घटना सम्वत् 1867 की मानी जाती है। उस समय इनकी आयु लगभग 50 वर्ष की थी। इनके कोई सन्तान नहीं थी। साधु बनने के चार-पाँच वर्ष बाद ये अपने गाँव रुड़कली आये थे। अपने पति के साधु बनने के कारण उनकी पत्नी ने भी संन्यास ले लिया था और वह उनके साथ मालवा चली गई थी। ऊदोजी दूर-दूर तक भ्रमण करते रहे पर उनका केन्द्र मालवा ही रहा। एक बार ये होली के समय रुड़कली में ही ठहरे हुए थे। तभी उन्होंने वहाँ की स्त्रियों को अश्लील 'लूर' गाते हुए सुना। वे उन स्त्रियों के पास पहुँचे और उन्हें इस अश्लील लूर को गाने से रोका, तब उन स्त्रियों ने पूछा कि हम कौनसी लूर गायें। इस पर ऊदोजी ने उसी समय लूर लिखकर गायी। उनके द्वारा लिखी हुई यह लूर बिश्नोई पंथ, विशेषकर मारवाड़ में बहुत प्रसिद्ध है। जीवन से विरक्त होने के कारण उन्होंने अपनी सारी जमीन एवं घर एक दूर के रिश्ते

की बेटी पारी एवं जवाई सिमरथाजी को दे दी थी। सम्वत् 1933 के आसपास ऊदोजी का स्वर्गवास हो गया था।

रचनाएँ-

1. प्रहलाद चरित-348 छंद। 2. विष्णु चरित-110 दोहे, चौपई।
3. कक्का छत्तीसी-37 कुंडलियाँ। 4. लूर
5. फुटकर छन्द-30 6. स्नेह लीला

ऊदोजी अत्यन्त अनुभवी, ज्ञानी एवं विष्णु के परम भक्त एवं उच्च कोटि के साहित्यकार थे। उन्होंने अपने जीवन काल में पर्याप्त साहित्य लिखा था, जिनमें से प्रहलाद चरित एवं विष्णु चरित अत्यन्त प्रसिद्ध हैं।

★ साहबरामजी राहड़

हजूरी बिश्नोई भक्त रतनो जी राहड़ जांगलू गाँव के रहने वाले थे। रतनोजी के वंशज तारोजी के पुत्र साहबराम जी थे। ये पाँच भाई थे। साहबराम जी का जन्म सम्वत् 1871 में कुचामन पट्टे के हुडिया गाँव में हुआ था। अपनी धार्मिक प्रवृत्ति के कारण साहबरामजी 8-10 वर्ष की उम्र में ही साधु बन गये थे। साहबरामजी, खिदरो की शिष्य परंपरा में जांगलू के थापन साधु गोविन्दराम जी गोदारा के शिष्य थे। ये पढ़े-लिखे, ज्ञानी, अध्ययनशील एवं अनुभवी थे। ये बिश्नोई धर्म के नियमों का दृढ़ता से पालन करने वाले थे। साधु बनने के बाद साहबराम जी ने समाज को समझने के लिये पर्याप्त भ्रमण किया था। उन्होंने गोविन्दराम की आज्ञा से पारवा गांव की रामप्यारी देवी से विवाह कर लिया था और गृहस्थ जीवन को अपना लिया था।

साहबराम जी ने रामड़ावास में रहकर वील्होजी का मन्दिर बनवाया था और उस पर कलश स्थापित किया था। वैसे मन्दिर का निर्माण कार्य तो साधु गुलाबदास जी ने प्रारम्भ किया था पर उनका सम्वत् 1909 में स्वर्गवास हो गया था, जिसके कारण मन्दिर का निर्माण कार्य रुक गया था। बाद में साहबराम जी गुलाबदास जी के गोद चले गये थे और मन्दिर का निर्माण कार्य पूर्ण करवाया था। मन्दिर निर्माण के इस कार्य की उनके गुरु गोविन्दरामजी ने अनेक छंदों में प्रशंसा की है। कुछ वर्ष मारवाड़ में रहकर ये लांधड़ी (हरियाणा) गाँव में जाकर रहने लग गये और बाद में दुतारावाली गाँव में बस गये थे। तब से इनके वंशज इसी गाँव में रह रहे है। इसी गांव में सम्वत् 1948 की मार्गशीर्ष सुदि 11 को इनका स्वर्गवास हो गया था। यहीं पर इनका समाधि मन्दिर बना हुआ है।

रचनाएँ-

1. सत्तलोक पहुँचने का परवाना-छन्द 3
2. सार शब्द गुंजार-185 छन्द
3. सार बत्तीसी-42 छन्द
4. अमर चालीसी-कुण्डली 44

5. महामाया की स्तुति-44 छन्द
6. फुटकर रचनाएँ-(क) साखियाँ-2 (ख) हरजस, भजन-18 (ग) आरती-1 तथा फुटकर छन्द।
7. जम्भसार-24 प्रकरण, रूपक संख्या 2450 (छन्द-24000)

साहबराम जी ने अपने जीवनकाल में लगभग 25000 छन्दों की रचना की है। जाम्भाणी कवियों में सबसे अधिक छन्द लिखने वाले साहबरामजी ही है। साहबरामजी की उपलब्ध सात रचनाओं में से प्रमुख रचना जम्भसार ही है। इसमें 24 प्रकरण, 2450 रूपक एवं 24000 दोहे-चौपाई हैं। उन्होंने सम्वत् 1908 में इसे लिखना प्रारम्भ किया था पर वील्होजी के मन्दिर निर्माण के कारण उन्हें इस कार्य को बंद करना पड़ा। बाद में उन्होंने सम्वत् 1922 में लिखना प्रारम्भ किया और दो वर्षों में इसे पूरा कर लिया था। साहबरामजी ने जम्भसार की तीन प्रतिलिपियाँ बनायी थी, जिनमें से पहली प्रति गणेशाराम जी के पास थी, इसकी दूसरी प्रति साहबरामजी का एक अंग्रेज शिष्य विलायत ले गया और तीसरी प्रति वर्तमान में प्रचलित है। इसका सम्पादन आचार्य कृष्णानन्द जी ने दो भागों में किया है।

जम्भसार का न केवल जाम्भाणी साहित्य में अपितु राजस्थानी साहित्य में विशिष्ट स्थान है। इसमें गुरु जाम्भोजी, सबदवाणी एवं बिश्नोई पंथ की विस्तृत जानकारी उपलब्ध है। जम्भसार भाव, विचार एवं कला पक्ष आदि सभी दृष्टियों से प्रभावशाली एवं रोचक है। जाम्भाणी साहित्य की इतनी विस्तृत जानकारी और किसी ग्रन्थ में मिलना कठिन है।

★ स्वामी ब्रह्मानन्दजी

स्वामी ब्रह्मानन्दजी नगीना के रहने वाले थे। गुरु जाम्भोजी का गद्य में प्रामाणिक जीवन प्रस्तुत करने के कारण ही इनका जाम्भाणी साहित्य में विशिष्ट स्थान है। ब्रह्मानन्द जी, रामदास जी के शिष्य थे, जो कि खिदरो की शिष्य परंपरा में थे। ये वेद, व्याकरण एवं धर्म शास्त्रों के अच्छे ज्ञाता थे। गुरु जाम्भोजी के जीवन चरित्र लिखने के उद्देश्य से ही ये संत साहबरामजी से मिले थे और कुछ समय उनके साथ भी रहे थे। कहते हैं कि गुरु जाम्भोजी से सम्बन्धित किसी बात को लेकर इनका साहबरामजी से मनमुटाव हो गया था।

रचनाएँ-

स्वामी ब्रह्मानन्द जी ने कई ग्रन्थों की रचना की थी जिनका उल्लेख कवि सं. 85 के अन्तर्गत हो चुका है। इनकी प्रसिद्धि एक गद्य लेखक के रूप में ही है। 'श्री जम्भदेव चरित्र भानु' इनकी प्रसिद्धि का प्रमुख आधार है। शोधपरक दृष्टि के कारण इस ग्रन्थ का जाम्भाणी साहित्य में विशेष महत्व है। इनके ग्रन्थ गुरु जाम्भोजी, बिश्नोई पंथ एवं साहित्य की जानकारी के लिये आधार है। ब्रह्मानन्द जी ने 'बिश्नोई धर्म विवेक' को प्रश्नोत्तर रूप में लिखकर बिश्नोई पंथ की अनेक बातों का स्पष्टीकरण किया है।

26. हिंडोलणो

हिंडोलणो जाम्भाणी साहित्य के कवि हीरानंद की रचना है। इसमें 12 छंद है तथा मलार राग में गेय है। यह जाम्भाणी साहित्य की महत्त्वपूर्ण रचना है तथा बिश्नोई पंथ में बहुत प्रसिद्ध है। इसमें गुरु जाम्भोजी के समकालीन एवं कुछ बाद के व्यक्तियों के नामों का वर्णन हैं। 'हिंडोलणो' का अर्थ झूला होता है। इसी आधार पर कवि ने जाम्भाणी झूले पर झूलने वाले 86 स्त्री-पुरुषों का इसमें वर्णन किया है। कवि की मूल रचना को यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

कामण चली हिंडोलण, गावै आळ जंजाळ।
जम्भ अचम्भो न गावही, जो बंचै जंम काळ।।1।।
सरस हिंडोलणो, संभराथळ झूलै साध।।टेर।।
दोय सील संजम खंभ रोपे, नांव बेड़ी अधार।
चार डांडी सरल सुन्दर, वेद कै झणकार।।2।।
सत्य धीरज बणे मरवा, जड़त प्रेम सुवार।
सूरत पटड़ी बैठ कै, थे झूलो जम्भ दुवार।।3।।
हांसा लोहट सूं कहै, सुरग तणा आकार।
सुर नर गण गंद्रफ देवता, म्हारै ऊभा पोळ दवार।।3।।
दूदो[1] देसोटै गयो, मन में घणो अधीर।
कोहर ऊपर निरखियो, जुग तारण जम्भ पीर।।
थळी ओट दूदो मिल्यौ, तूठ्यौ सारै काज।
जब लग खांडो राखसी, तब लग नहचळ राज।।
हांसा लोहट भाग पूरा, जिण लिया उर लाय।
नौरंगी[2] कै भात लाये, संग साल्हिया आय।4।।
सिरियां[3] झीमां[4] रूपां[5], वरियां[6] पूर्व प्रीत विचार।
कंवर[7] आगै घरे लाछां[8], आये मंगल[9] बार।।5।।
भूवा तांतू[10] चली झूलण, नायकी[11] लीवी बुलाय।
अजाबदे[12] सवीरदे[13] तहां झाली[14] पोहती आय।।6।।
लोचां[15] गौरां[16] और मागो[17], पूल्ह[18] वचन विचार।
ऊदो[19] अतली[20] हेत सेती, झूलै जम्भ दुवार।।
राव दूदो टोहा[21] ठुकरा[22], केल्हण[23] वरसंघ[24] लेख।

लोहापांगळ[25] भींया[26] परच्या, सोवन नगरी देख।।
रावण[27] गोयंद[28] लखमण[29] पांडू[30], मोती[31] एक[32] भाय।
रिणधीर[33] अली[34] सैंसा[35] साला[36], सहजे देत झुलाय।।
खियां[37] नाथा[38] पूरब[39] डूमां[40], राणा[41] प्रीत विचार।
काजा[42] बूढ़ा[43] लूणां[44] सायर[45], आए पूल्ह पंवार।
धना[46] बछू[47] सुगणी[48] भंवरा[49], चेला[50] कुळचंद[51] प्यार।
पहळाद की प्रतंग्या काजै, विसन को अवतार।।
महाराज[52] दाउद[53] और घाटंम[54], नूरां[55] थापन हरै।
खेता[56] धारू[57] जोखा[58] वैरा[59], प्रीति हिरदै धरै।
मंगोल[60] रेड़ा[61] हासम[62] कासम[63], संता सदा सहाय।
तापस ऊदोदास[64] आए, पांच कूं समझाय।।
रावळ जैतसी[65] सांगा राणा[66], लूंका[67] मालदे राव[68]।
महमदखां[69] अरू मुला[70] सधारी, आय परसे पाय।।
साह सिकंदर[71] साह स्वांयत[72], सेख सद्दू[73] जांण।
कान्हा[74] तेजा[75] अलू[76] चारण, वळ वळ करत वखांण।
हुकम ऊदै[77] दीन बोल्यौ, वील्ह[78] कियौ उपदेस।
सूजा[79] सूरण[80] आलम[81] केसा[82], ग्यान का परवेस।।
चंदण[83] रायचंद[84] जसा[85] पचायण[86], सबद का आचार।
हीरानंद की अरज इतनी, संगति पार उतार।।

कवि हीरानन्द ने उपर्युक्त रचना में जिन स्त्री–पुरुषों के नामों का उल्लेख किया है वे निम्नलिखित हैं–

1. दूदो	2. नौरंगी	3. सिरियां	4. झीमां	5. रूपां
6. वरियां	7. कंवर	8. लाछां	9. मंगल	10. तांतू
11. नायकी	12. अजाबदे	13.सवीरदे	14.झाली	15. लोचां
16. गौरां	17.मागो	18.पूल्ह	19.ऊदो	20. अतली
21. दूदो टोहा	22.ठुकरा	23. केल्हण	24. वरसंघ	25. लोहापांगळ
26. भींया	27. रावण	28. गोयंद	29. लखमण	30. पांडू
31. मोती	32. एक	33. रिणधीर	34.अली	35.सैंसा
36. साला	37. खियां	38. नाथा	39. पूरब	40.डूमां
41. राणा	42. काजा	43 बूढ़ा	44. लूणां	45. सायर

46. धना	47. बछू	48. सुगणी	49. भंवरा	50 चेला
51. कुळचंद	52. महाराज	53. दाउद	54. घाटंम	55. नूरां
56. खेता	57.धारू	58.जोखा	59. वैरा	60. मंगोल
61. रेड़ा	62. हासम	63. कासम	64. ऊदोदास	65. रावळ जैतसी
66. सांगा राणा	67. लूंका	68. मालदे राव	69. महमदखां	70. मुला
71. सिकंदर	72. स्वांयत	73. सेख सद्दू	74. कान्हा	75. तेजा
76. अलू	77. ऊदै	78. वील्ह	79. सूजा	80. सूरण
81. आलम	82. केसा	83. चंदण	84. रायचंद	85. जसा
86. पचायण।				

27. जाम्भैजी रै भक्तां री भक्तमाळ

गुरु जाम्भोजी ने तीन सौ तरेसठ पंथों का मंथन करके बिश्नोई पंथ की स्थापना की थी। उन्होंने चारों वर्णों के छत्तीस जातियों के लोगों को इसमें सम्मिलित किया था। इस पंथ में कभी भी जाति का कोई बंधन नहीं रहा। इसी कारण राजा-महाराजा, अमीर-गरीब, साहूकार, जमींदार, छोटे-बड़े सभी गुरु जाम्भोजी के अनुयायी बन गये थे। जाम्भाणी साहित्य के किसी अज्ञात कवि ने 'जाम्भैजी रै भक्तां री भक्तमाळ' नाम की एक रचना की है, जिसमें गुरु जाम्भोजी के विभिन्न भक्तों के नामों का वर्णन किया है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि यह 19 वीं शताब्दी की रचना है। यहां मूल रचना को ही प्रस्तुत किया जा रहा है।

दोहा॥ विष्णु को अवतार है, श्री जांभेस्वर राय॥
सिव ब्रह्मा इंद्रादि देव, निस दिन ध्यांन धराय॥१॥
दूदै ऊपर कोपियौ, जोधाणां को राय॥
मेड़तिया सारा चल्या, दूदो गवन कराय॥२॥

चौपई॥राग धनाश्री॥

सबही भक्त कहूं विस्तार। जां ऊपर रीझ्यौ करतार॥
विष्णु भगत दूदोजी[1] भयौ, जांभेसर तब खांडो दयौ॥३॥
भक्त आपको लोहट जांण। हंसा भक्त करी निरबांण॥
करता लेय खिलायो गोद। हीयै घणो बढ़ायो मोद॥४॥
नवरंगी[2] कीयौ निज जाप। लियां माहेरो आया आप॥
विष्णु भक्त श्रीयां जो भई। देव दया करि मुक्ति दई॥५॥

झीमां[3] सिंवर्‌यौ निस दिन सार। सुरग मुक्त कीवी करतार॥
रूपां[4] रूप जप्यौ हरि स्यांम। करता दीन्हौं अपनो धांम॥६॥
विरियां[5] धर्‌यौ विसन को ध्यांन। जांभेसर को पायो ज्ञान॥
पूरबै[6] प्रीत हरि हिरदै धरी। भलो कर्‌यौ जांभेसर हरी॥७॥
लाछां[7] लछण जाण्या आप। हिरदै धर्‌यौ विसन को जाप॥
लोहापांगळ[8] अलख पिछांण। तबही लोह झड़्यौ हर जांण॥८॥
तांतू[9] कियौ भतीजो भाय। भक्त मुक्त दीन्हीं सुरराय॥
नायकी[10] कीयौ हरि सूं हेत। भक्ति मुक्त कमायो खेत॥९॥
अजियां[11] सेव करी चित लाय। लीयो हरजी हियै रिझाय॥
लोल सभीरी[12] भक्ति करी। हिरदै धर्‌यौ विसन हर हरी॥१०॥
सांगो राणो[13] भयो चितोड़। झाली रांणी[14] ताकै माय॥
जांभेसर की भक्ति जांण। विसनोयां नै छोड़यौ दांण॥११॥
लोचां[15] लीयौ विसन पिछांण। गोरां[16] हरि सूं कीवी जांण॥
मघू[17] धर्‌यौ बिसन को ध्यांन। पूलोजी[18] हूवौ सुज्ञान॥१२॥
ऊदो[19] अतली[20] चल्या विचार। जिन पायौ मुक्ति दरबार॥
टोवाजी[21] ठुकराजी[22] भया। जांभेसरजी कीवी दया॥१३॥
केलणजी[23] वरसंगजी[24] हुवा। विसन भक्त के मारग वुवा॥
भींयौ[25] पंडित वडो सुजांण। जांभेसर नै लियौ जांण॥१४॥
गोइंदजी[26] रावणजी[27] भाय। जांभेसरजी हूवा सहाय॥
लखमण[28] पांडू[29] भाई भया। जांभेसर की भक्ति लया॥१५॥
मोतीय[30] मेघ जप्यौ जंभराय। अली[31] चारण आयो भाय॥
अलू[32] तेजो[33] कानो[34] आय। जांभेसर के लागा पाय॥१६॥
भक्त हुवौ बाबल रणधीर[35]। विसन भक्त सूं कीयौ सीर॥
सहंसोजी[36] साल्होजी[37] ध्याय। जांभेसरजी आया भाय॥१७॥
खींयो[38] नाथो[39] डूमो[40] ध्याय। विसन चरण सूं लिया लगाय॥
लूणा[41] काजा[42] सायर[43] जांण। जांभेसर नै लियौ पिछांण॥१८॥
पूल्हो[44] वूढ़ो[45] जीयू[46] देख। ध्यायौ हिरदै आप अलेख॥
धना[47] वछू[48] सुरगण[49] सोय। हियै विसनजी लियौ पोय॥१९॥
चेला[50] अर कुळचंद[51] सुथार[52]। जांभेसर ध्यायौ निरधार॥
लीयां पइसा गयौ पुलाय। मरती गऊ छुड़ाई जाय॥२०॥

खेतो[53] धारू[54] जोखा[55] जांण। ध्यायौ विसन मिटाया मांण॥
रेड़ोजी[56] पुन हुवौ मंगोल[57]। भक्ती केरो वजायो ढ़ोल॥२१॥
हासम[58] कासम[59] दरजी किया। विष्णु भक्त का मारग लिया॥
ऊदो[60] अरू रावल जैतसी[61]। विष्णु भक्त मैं मनसा धसी॥२२॥
लूंको[62] मालदे[63] महमंदखांन[64]। मुला सधारी[65] आयो मांण॥
साह सकंदर[66] दिली हुवौ। तुरकाणी मारग ते जुवौ॥२३॥
सूजो[67] सुरजन[68] हुवा सुजांण। ध्यायौ विसन मिटाया मांण॥
केसौ[69] आलम[70] किया बखांण। कथा कीरतन गाया जांण॥२४॥
पचायण[71] जसा[72] रायचंद[73]। जिन ध्यायौ विष्णु गोबिन्द॥
हीरानंद[74] मिठुजी[75] जोय। ध्यायौ विसन जंभै गु.....॥२५॥

कवि ने 'जाम्भैजी रै भक्तां री भक्तमाळ' में जिन स्त्री-पुरुषों के नामों का उल्लेख किया हैं वे निम्नलिखित हैं-

1. दूदोजी	2. नवरंगी	3. झीमां	4. रूपां	5. विरियां
6. पूरबै	7. लाछां	8. लोहापांगळ	9. तांतू	10. नायकी
11. अजियां	12. लोल सभीरी	13.सांगो राणो	14. झाली राणी	15. लोचां
16. गौरां	17.मघू	18.पूलोजी	19.ऊदो	20. अतली
21. टोवाजी	22. ठुकराजी	23. केलणजी	24. वरसंगजी	25. भींयौ
26. गोइंदजी	27. रावण जी	28. लखमण	29. पांडू	30. मोती
31. अली	32. अलू	33. तेजो	34. कानो	35. रणधीर बाबल
36. सहंसोजी	37. साल्होजी	38. खींयो	39. नाथोजी	40.डूमो
41. लूणा	42. काजा	43 सायर	44. पूल्हो	45. बूढ़ो
46. जीयू	47. धना	48. वछू	49. सुरगण	50 चेला
51. कुळचंद	52. सुथार	53. खेतो	54. धारूं	55. जोखा
56. रेड़ोजी	57. मंगोल	58. हासम	59. कासम	60. ऊदौ
61. रावल जैतसी	62. लूंको	63. मालदे	64. महमद खान	65. मुला सधारी
66. साह सिकन्दर	67. सूजो	68. सुरजन	69. केसौ	70. आलम
71. पचायण	72. जसा	73. रायचन्द	74. हीरानंद	75. मिठुजी

28. बिश्नोई-गोत्र

गुरु जाम्भोजी ने सम्वत् 1542 में समराथळ धोरे पर बिश्नोई पंथ की स्थापना की थी। जाति का कोई बन्धन न होने के कारण उस समय सभी जातियों के लोग बिश्नोई पंथ में सम्मिलित हो गये थे। जिस स्थान पर इस पंथ की स्थापना की गई थी, उस क्षेत्र में जाटों की संख्या अधिक थी। इसलिये बिश्नोई पंथ में सम्मिलित होने वाले लोगों में जाटों की संख्या अधिक रही है। जाटों के अलावा राजपूत, मुसलमान, नाई, ब्राह्मण, बनिये आदि सभी जातियों के लोगों ने इस पंथ को स्वीकार कर लिया था। विभिन्न जातियों के लोग जब पाहळ ग्रहण करके बिश्नोई पंथ में सम्मिलित हो गये, तो वे बिश्नोई कहलाने लगे। बिश्नोई पंथ में सम्मिलित होने से उनकी मूल जाति समाप्त हो गई पर उनके गोत्र वही रहे। आज बिश्नोई पंथ में जो गोत्र पाये जाते हैं, वे निम्नलिखित हैं-

अग्रवाल, अर्डींग, अभीर/अहीर/अहैर, अडोल, अवतार, अहोदिया, अत्रि, अतली, अंड, आंजणा, आमरा, आयस, आसियां, आनणा, आखा, अखिड, इहराम (ईसराम), ईसरवा, ईसरवाल, ईनाणिया, ईयारं, ईडंग, उत्कल, उमराव, ऊनिया, ऐचरा, ऐरण, ऐरब, ओऊं, ओदिया (अहोदिया), ओटिया, ओरवा, कड़वासरा (कुराड़ा), कसवां (कांवा), करीर, कर्णेटा, कसबी, कबीरा, कलवाणिया, कलेडिया, कमणीगारा, करड़, कमेड़िया, कच्छवाया/कच्छवाई, कश्यप, कालीराणा (कल्याण), काकड़, कालड़ा, कासणिया, कामटा, कांसल, कांगड़ा, किरवाला, कीकंर, कुपासिया (कपासिया), खदाव, खड़हड़, खेड़ी, खोखर, खाट, खाती, खावा, खारा, खिलेरी, खीचड़, खुड़खुड़िया, खेरा, खोखर, खोत, खोजा, खोड़, गर्ग, गावाल, गायणा, गाट, गिल्ला, गुरु, गुजेला (उदावत), गुरुसर, गुजर, गुलेचा, गुप्ता, गुरुड़, गुडल, गेर, गेहलोत, गोदारा (सोनगरा, उदाणी, खिरंगिया, धोलिया, बब्निड़, सिसोदिया, देवड़ा, गेहलोत), गोरा, गोयत, गोयल (गोभिल, गोविल, गोहिल), गोगियां, गोला, गौड़, घणघस, घटियाल, घांगु, चंदेल, चमण्डा, चाहर, छींपा (दरजी), झंवर (जौहर), जांगु, जाखड़, जायल, जाजुदा, जाणी, जांगड़ा, जावलिया, जातवड़, जीता, जींजा, जीवाल, जुलाहा (बुनगर, बेजारा), जूड़िया, जूबा, जोहिया, झांवलिया, झांस, झांग, झाझड़ा, झाझण, झाला, झूरिया, झोधकण (झोधकरण), झाडा, झोरड़, टण्डन, टाडा, टांडी (तांडी), टुसिया (टुहिया), टोकसिया, ठकरवा, ठोड, डबोकिया, डारा, डागर, डिंगल, डूडी, डेहला, डेलू, डोगीपाल, ढ़ल, ढ़हिया, ढ़ाका, ढ़ाढ़रवाल, ढ़ाढ़णिया, ढ़ीड, ढ़ूंढ़िया, ढ़ूकिया (डहूकिया), तल्लीवाला, तरड़, तंवर,(तीवंर, तुंवर, तुअर, तोमर), तगा (त्यागी), तांडी, तापस, तायल, तांडा, तुंदल, तुरका, तेतरवाल, तेली, तोड़, थलकट, थालोड़, थापन,थोरी, दड़क (धड़क), दरजी, दासा, दिलोइया (दुलोइया), दुगसर, देहडू, दहिया, देवड़ा (खेड़ेवाला, टोहरवाला, मोड, लोडा), दोतड़ धतरवाल, धधारी, धारणिया, धायल, धामा, धारिया, धूमर, नरूका, नकोसिया, नफरी, नाडा, नाइया, नागर, नाथ, नाई, निरबाण,

नीबीबागा, नेहरा, नैण, परमार (पंवार, पवार, पुवार, पुआर), पड़ियाल (पड़ीहार), पठान, पराशर, प्यारी, पालड़िया, पारस, पाल, पाटोदिया, पारीक, पीथरा, पुरवार (पुरवाल, पोरवाल, पैरवाल), पुइया, पुष्करणा (पोहकर), पूनिया, पोटलिया, फलावर, बरड, बदीता, बडोला, बड़एड़, ब्रदाई, बनगर, बटेसर, बलावत, बल्डकिया, बजाज, बलोइया, बछियाल, बलाई, बडोला, बसोयाल, बंसल, बदिया, बल्हाकिया, बरूड़िया, बाबल, बाणीछु, बागड़िया, बाजरिया, बाड़ेटा, बाणिया (बनिया), बावरी, बांगड़वा, बाना, बाजिया, बाडंग , बासत, बागेशु, बाकेला, बानरवाल (अहिर), बिछु, बिडासरा, बिलाद, बिडाल, बिड़ग, बिडियार (बिडार), बिलोनिया, बीलोड़िया, बेनीवाल (बेहणीवाल, बणियाल), बेरवाल, बेरूपाल, बेड़ा, बेहड़, बोला, बोहरा, बोय, बुरड़क, बुड़ाकिया, बूड़िया, भवाल, भट्ट, भलूंडिया, भांबू, भादू, भारवर, भोडर, भाडेर , भारद्वाज, भिलूमिया, भीचर, भोजावत, भोडिसार, भोछा, भुरटा, भुरन्ट, भुट्टा, भूल, भूश्रण, मण्डा, मतवाला, महिया, मल्ला, मारत, मांजू, माल, माचरा, मालपुआ, मालपुरा, मालीवाल, माहेश्वरी, मातवी, मान्दु, माई, मांगलिया, मिश्र, मितल, मील, मीठातगा, मुरटा, मुंडेल, मुदगिल, मुरिया (मावरिया), मूंढ़, मेहला, मेवदा, मोहिल, मोगा, रशा, रंगा, रघुवंशी, राड़ (राहड़) , रायल, राव, रावत, राठौड़, रणोड़, रिणवा, रूबाबल, खोडा, रोहज, रोझा, रोड़, लटियाल, लरियाल, लाम्बा, लागी, लोल, लोहमरोड़, लुहार, वरा, व्यास, वरासर, वासनेय, वात्सलय, विलाला, विसु, सराक, सरावक, सहू (साहू, सोहु), सदु, सगर, सांई, सांवक, सहारण (सारन), सांखल (सागर), सारस्वत, साबण (शाबण), सियाक (सियाख, सियाग, सिहाग), सिसोदिया (सागर), सिंगल (सिंगला, सिंघल, सिंहला), सिंवर, सिवल (सिंयोल), सिंवरखिया, सिरडक, सिरोडिया, सिंधल (राठौड़), सिरड़िया, सीलक, सीगड़, सुथार (खाती, जांगड़ा, बढ़ई, तररवान)सुनार, सूर, सेरड़िया, सेवदा, सेहर (शेर), सेधो (सेथो), सेंगड़ा, सोढ़ा, सोलंकी, सोनक (सुनार), शांक, शाह, शाण्डलय, शिव, श्रीमाली, शिढ़ोला, हरडू, हरीजा, हाडा (उदावत, बलावत, भोजावत), हरिया, हरिवासिया, हुमडा, हुड्डा।

थापन गोत्र : गोदारा, बेहनीवाल (बिणयाल), लोल, मांजू, बेरवाल, पंवार, खोखर, टोकसिया, जाणी, तेतरवाल, नैण, गर्ग, सहू, पूनिया, चौहान।

गायणा गोत्र : बागडिया (बांगडवा), चौहान (चवाण), लटियाल, सिंवल, सियोल, सिंवर, गूजर गौड़, बांवरा, अग्रवाल, दड़क, तंवर (तीवंर), पंवार (पुंआर), सोढ़ा, पण्डवालिया (पवाडिया)।

सुथार गोत्र : चांगड़ा, पाटोदिया, सीलक (छटिया), देहिया, भुरटा, जाला, झांस, लूदरिया, लुहार, धामु, गुजर, पंवार कुलहड़िया।

दनगर पूर्बिया (पुर) गोत्र : चौहान (शाण्डलय), थापन (चौहान, सहू), बाघेला, राठौड़, देवड़ा (मोड, लोडा, खेड़ेवाला, टोडरवाला), सिसोदिया (सागर), चन्देल हाडा (भोजावत, उदावत, बलावत), मोहिल, पंवार, गुजेला, सांखला (एयर)।

नोट : थापन गोत्र, गायणा गोत्र, सुथार गोत्र तथा दनगर पूर्बिया (पुर) गोत्र- सभी को गोत्रों की वृहद् सूची में भी सम्मिलित किया हुआ है। जातियां जिनसे बिश्नोई बने : जाट (लगभग 80%), अग्रवाल (बनिया), राजपूत, ब्राह्मण, कुरमी, अहीर, सुथार (खाती, जांगड़ा, बढ़ई, तरखाना), सुनार, नाई, तेली, गायणा, दनगर पूर्बिया (पुर), गुजर, गुप्ता (वंश), छींपा (दरजी), तगा (त्यागी), माहेश्वरी, कसबी, बेहड़ा, जुलाहा (बुनगर, बेजरा), पुष्करणा (पोहकरणा), बजाज, बाणिया (बनिया), सारस्वत, श्रीमाली।

नोटः- गोत्रों की वृहद् सूची स्व. मनीराम बिश्नोई एडवोकेट द्वारा संकलित एवं अमरज्योति अक्तूबर 2013 में पृष्ठ नं. 21-22 पर प्रकाशित है। गोत्रों की यह सूची अमरज्योति से ली गई है। उच्चारण भेद के कारण कुछ गोत्र दोबारा लिखे गये हों या कोई त्रुटि हो तो निवेदन है कि उस त्रुटि से अवगत करवायें ताकि अगले प्रकाशन में सुधार किया जा सके। अनेक गोत्रों का उच्चारण अलग-अलग क्षेत्रों में थोड़ी भिन्नता के साथ होता है इसलिये कोष्ठक में उनका दूसरा रूप भी दिया गया है।

जाम्भाणी साहित्य ज्ञान परीक्षा
सन् 2024 का प्रस्तावित पाठ्यक्रम

(1) **ए वर्ग का पाठ्यक्रम** -
बिश्नोई पंथ और साहित्य पुस्तक को अनुक्रमणिका (2-3) पर क्र.सं. 1 से 24 तक के बिन्दु।

(2) **बी वर्ग का पाठ्यक्रम**
बिश्नोई पंथ और साहित्य सम्पूर्ण पुस्तक।

(3) **सी वर्ग का पाठ्यक्रम**
(अ) बिश्नोई पंथ और साहित्य - डॉ. बनवारीलाल सहू
(ब) सबदवाणी (सम्पादक - स्वामी आचार्य कृष्णानंद) सबद संख्या - 1, 2, 3, 4, 11, 20, 23, 26, 28, 29, 30, 32, 33, 44, 50, 56, 61, 65, 67, 71, 73, 75, 76, 84, 86, 90, 94, 95, 97, 104, 120
(स) साखी भावार्थ प्रकाश (सम्पादक व टीकाकार- स्वामी आचार्य कृष्णानंद) साखी संख्या - 1, 7, 8, 11, 14, 18, 32, 40, 62, 89, 82, 93, 99, 107, 109, 131, 150
(द) सूक्ति सागर - सम्पादक - विनोद जम्भदास

जाम्भोजी साहित्य अकादमी, बीकानेर

जाम्भाणी साहित्य ज्ञान परिक्षा

मॉडल प्रश्न-पत्र

पूर्णांक : 100 समय : 2:00 घण्टे

दिनांक : (1) सभी प्रश्न करने अनिर्वाय है।
(2) प्रत्येक प्रश्न 1 अंक का है।
(3) प्रत्येक प्रश्न के उत्तर के चार विकल्प दिये गये हैं, जिनमें से सही विकल्प के गोले को गहरे निशान से भरें।

1. गुरु जाम्भोजी का अवतार कहाँ हुआ था ?
(A) लालासर (B) पीपासर (C) मुकाम (D) संभराथल
2. गुरु जाम्भोजी की माता का क्या नाम था ?
(A) तांतू (B) अमृता देवी (C) हांसा देवी (D) इनमें से कोई नहीं
3. गुरु जाम्भोजी के दादाजी का क्या नाम था?
(A) रोलोजी (B) दामोजी(C) रामोजी (D) केसोजी
4. तांतू देवी किसकी बहन थी ?
(A) रासोजी (B) रोलोजी (C) लोहट जी (D) रूपोजी की
5. हाँसा देवी का दूसरा नाम क्या प्रचलित रहा है?
(A) झमकू देवी (B) केसर देवी (C) शकुंतला (D) पार्वती
6. तांतू देवी क ससुराल कहाँ था?
(A) ननेऊ (B) बणद (C) लाडणूं (D) इनमें से कोई नहीं
7. निम्नलिखित में से कौनसा कथन सही नहीं है ?(A) हांसा देवी मोहकम सिंह भाटी की बेटी थी।
(B) रोलोजी की पत्नी का नाम राजाधिदेवी था।
(C) बिश्नोई पंथ में र्वप्रथम पूलहोजी दीक्षित हुए थे।
(D) पीपास गुरु जाम्भोजी का उदपेश स्थल रहा है।
8. गुरु जाम्भोजी ने सिकन्दर लोदी से कौसा कार्य बंद करवाया था?
(A) भ्रमण करना (B) युद्ध करना (C) जीव हत्या (D) निर्माण कार्य
9. गुरु जाम्भोजी का प्रमख कार्य क्षेत्र कौनसा प्रदेश रहा है?
(A) मध्यप्रदेश (B) राजस्थान (C) आन्ध्र प्रेदश (D) हिमाचल प्रदेश
10. गुरु जाम्भोजी के समय मरुप्रदेश के राजाओं की जो एक प्रमुख प्रवृत्ति थी, वह थी-
(A) आपसी फूट (B) भाईचारा (C) प्रेम भावना (D) एकता की
11. 15वीं शताबि में हिन्दुओं से कौनसा कर वसूल किया जाता था?
(A) मनोरंजन (B) जजियां (C) आयकर
(D) इनमें से कोई नहीं
12. मरुप्रदेश में अकालके समय जब लोग अपने बाल-बच्चों एवं पशुओं को लेकर दूसरे स्थान पर चले जाते थे और वर्षा होने पर अपने घर लौटते थे, उसे क्या कहते हैं ?
(A) गोयल वास (B) निशा वास (C) प्रदेश वास (D) इनमें से कोई नहीं
13. बिश्नोई पंथ की स्थापना कहाँ हुई थी ?
(A) पीपासर (B) संभराथल (C) मुकाम (D) सालासर
14. गुरु जाम्भोजी ने जब सबदवाणी का प्रथम सबद कहा था, तब उनकी आयु थी?
(A) 9 वर्ष (B) 7 वर्ष (C) 11 वर्ष (D) 8 वर्ष
15. लोहट जी ने जाम्भोजी के उपचार के लिए कहां के ब्राह्मण को बुलाया था?
(A) नागौर (B) रोटू (C) लोहावट (D) जांगलू
16. सबदवाणी के प्रथम सबद कहने की घटना किस सम्वत् की मानी जाती है?
(A) 1526 (B) 1515 (C) 1520 (D) 1525
17. गुरु जाम्भोजी के जन्म के बाद ऐसी पहली घटना कौनसी है, जिसको सुनकर सब चकित हो गये थे?
(A) बालक जाम्भोजी का जन्म घुटटी न लेना
(B) दूध न पीना (C) न बोलना (D) इनमें से कोई नहीं
18. गुरु जाम्भोजी ने कितने वर्षों तक पशु चराये थे?
(A) 22 वर्ष (B) 23 वर्ष (C) 24 वर्ष (D) 27 वर्ष
19. बिश्नोई पंथ के कितने धर्म नियम है ?
(A) 29 (B) 21 (C) 27 (D) 30
20. गुरु जाम्भोजी ने किसको मेड़ते प्राप्ति का आशीवार्द दिया था?
(A) राव बिदा को (B) राव जोधा जी को
(C) राव बीकाजी को (D) राव जोधा जी को
21. गुरु जाम्भोजी ने बैरीसाल नगाड़े कहां के राजा को दिये थे?
(A) जोधपुर के (B) अजमेर के (C) नागौर के (D) दिल्ली के
22. बिश्नोई पंथ में सर्वप्रथम कौन दीक्षित हुए था?
(A) लोट जी (B) पूल्होजी (C) रोलोजी (D) इनमें से कोई नहीं
23. गुरु जाम्भोजी का उपदेश काल कितने वर्षों का रहा था?
(A) 31 वर्ष (B) 51 वर्ष (C) 42 वर्ष (D) 57 वर्ष
24. बिश्नोई पंथ की स्थापना कब हुई थी ?
(A) सम्वत् 1542 की कार्तिक वदि अष्टमी को।
(B) सम्वत् 1544 की कार्तिक सुदि अष्टमी को।
(C) सम्वत् 1540 की कार्तिक वदि अष्टमी को।
(D) सम्वत् 1543 को कार्तिक सुदि अष्टमी को।